स्व० कविवर दौलतरामजीकृत

जैनपदसंग्रह ।

प्रथम भाग ।

मूल्य आठ आने ।

श्रीवीतरागाय नमः ।

जैनपदसंग्रह ।

प्रथम भाग ।

अर्थात्

स्वर्गीय कविवर दौलतरामजीके

१२४ पदोंका संग्रह ।

श्रीयुत पं० पन्नालालजी बाकलीवालद्वारा सम्पादित

और

[illegible] संशोधित ।

प्रकाशक—

श्रीजैनग्रंथरत्नाकर कार्यालय, बम्बई ।

[illegible] (कार्तिक) १९२४ [illegible]

मूल्य आठ आने ।

शांि

॥ भाव

१ बार

२ मन्य जनोंक

मुद्रकः—
अनंत बाळकृष्ण घगवे,
श्रीसरस्वती मुद्रणालय, ५२४ गिरगांव—बम्बई ।

प्रकाशकः—
श्री· नाथूरामजी प्रेमी.
जैन–ग्रन्थ–रत्नाकर कार्यालय, हीराबाग,

श्रीवीतरागाय नमः ।

जैनपदसंग्रह ।

प्रथमभाग ।

१

मङ्गलाचरण स्तुति ।

दोहा ।

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंदरसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरि[1]रजरहसविहीन ॥१॥

पद्धरिछन्द ।

जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरन सूर ॥ जय ज्ञान अनंतानंत धार । दृग[2]-सुख-वीरज-मंडित अपार ॥ २ ॥ जय परम-शांतिमुद्रा-समेत । भविजनको निजअनुभूति हेत ॥ भवि[3]-भागन-वश-जोगे[4]वशाय । तुम धुनि है

---

१ चार घातिया कर्मोंसे रहित । २ अनन्तदर्शन अनन्तसुख, अनन्तवीर्य । ३ भव्य जनोंके भाग्यसे । ४ मनवचनकायके योगोंके कारण ।

सुनि विभ्रम नमाय ॥ ३ ॥ तुम गुन चिंतत निज परविवेक । प्रघटै विघटैं आपद अनेक ॥ तुम जग-भूषण दूषनवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ४ ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप । परमात्म परमपावन अनूप ॥ शुभअशुभ-विभाव अभाव कीन । स्वाभाविकपरनतिमय अछीन ॥ ५ ॥ अष्टादशदोषविमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गम्भीर ॥ मुनि गणधरादि सेवत महंत । नव-केवललब्धि-रमा धरंत ॥ ६ ॥ तुम शासन सेय अमेय[1] जीव । शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ॥ भव-सागरमें दुख खारवारि । तारनको और न आप टारि ॥ ७ ॥ यह लख निजदुखगद[2] हरनकाज । तुम ही निमित्तकारन इलाज ॥ जाने, तातें मैं शरन आय । उचरों निजदुख जो चिर लहाय ॥ ८ ॥ मैं भ्रम्यो अपनपो विसर आप । अपनाये विधिफल[3] पुण्यपाप ॥ निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ ९ ॥ आकु-

१ अपरिमाण । २ रोग । ३ कर्मफल ।

लित भयो अज्ञान धार। ज्यों मृग मृगतृष्णा जान वार[1] ॥ तन-परनतिमें आपौ चितार। कबहूं न अनुभवो स्वपद सार[2] ॥ १० ॥ तुमको विन जाने जो कलेश। पाये सो तुम जानत जिनेश॥ पशु-नारक-नर-सुरगतिमझार। भव धर धर मर्यो अनंत वार ॥ ११ ॥ अब काललब्धिबलतें दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शांत भयो मिट सकलद्वंद। चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ १२ ॥ तातें अब ऐसी करहु नाथ। विछुरै न कभी तुव चरन साथ ॥ तुम गुन-गनको नहिं छेव देव! जगतारनको तुम विरद एव ॥ १३ ॥ आतमके अहित विषय-कषाय। इनमें मेरी परनति न जाय ॥ मैं रहों आपमें आप लीन। सो करो होंहु ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश। रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारन सु आप। शिव[3] करहु हरहु मम मोहताप ॥१५॥ शशि शांतिकरन तपहरन-हेत।

---

१ पानी। २ पार। ३ मोक्ष।

स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय । त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥१६॥ त्रिभुवन तिहुँकालमझार कोय । नहिं तुम विन निजसुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधिउतारन तुम जहाज ॥ १७ ॥

दोहा ।

तुम गुन-गन-मनि गनपती, गनत न पावहिं पार ।
दौल स्वल्पमति किमि कहै, नमों त्रियोग सँभार १८

२

देखो जी आदीश्वर स्वामी कैसा ध्यान लगाया है । कर ऊपरकर सुभग विराजे, आसन थिर ठहराया है ॥ देखो जी० ॥ टेक ॥ जगतविभूति भूतिसम तजकर, निजानंद-पद ध्याया है । सुरभित-श्वासा, आशा-वासा नासादृष्टि सुहाया है ॥ देखो जी० ॥ १ ॥ कंचनवरन चलै मन रंच न, सुरगिर ज्यों थिर थाया है । जास पास अहि

१ गणधरदेव । २ मनवचनकाय । ३ भस्म जैसी । ४ सुगंधित । ५ दिशारूपी वस्त्र—दिगम्बरता । ६ सुमेरु ।

मोर मृगी हॅरि, जातिविरोध नशाया है ॥ देखो जी० ॥ २ ॥ शुद्धयुपयोग हुताशनमें जिन, वसुविधि सॅमिध जलाया है । श्यामलि अलिकावलि शिर सोहै, मानों धुआँ उड़ाया है ॥ देखो जी० ॥ ३ ॥ जीवन मरन अलाभ लाभ जिन, तृन मनिको सम भाया है । सुर-नर-नाग नमहिं पद जाके, दौल तास जस गाया है ॥ देखो जी० ॥ ४ ॥

३

जिनवर-आनन-भान निहारत, भ्रमतमघान नसाया है ॥ जिन० ॥ टेक ॥ वचन-किरन प्रसरनतैं भविजन, मनसरोज सरसाया है । भव-दुखकारन सुखविसतारन, कुपथ सुपथ दरसाया है ॥ जिन० ॥ १ ॥ विनसाई कॅज जलसरसाई, निशिचर समॅर दुराया है । तस्करॅ प्रवल कषाय पलाये, जिन धन बोध चुराया है ॥ जिन० ॥ २ ॥ लखियत उड़ॅ न कुभाव कहूं अब, मोह उलूक

१ सिंह। २ होम करनेको लकड़ियाँ। ३ कमल, दूसरे पक्षमें—अज्ञानरूपी कमल। ४ स्मर—कामदेव। ५ चोर। ६ तारे।

लजाया है । हंसे[1] कोकको[2] शोक नशो निज, परिनति चकवी पाया है ॥जिन०॥३॥ कर्मबंधकंजकोष[3] बंधे चिर, भवि-अलि मुंचन पाया है ॥ दौल उजास निजातम अनुभव, उर जग अंतर छाया है ॥ जिन० ४ ॥

४

पारस जिन चरन निरख, हरख यों लहायो, चितवत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुन घनघोर शोर, मोरहर्षको न ओर[4], रंक निधिसमाजराज, पाय मुदितथायो ॥ पारस० ॥ १ ॥ ज्यों जन चिरछुधित[5] होय, भोजन लखि सुखित होय, भेषज[6] गद-हरन पाय, सरुज[7] सुहरखायो ॥ पारस० ॥ २ ॥ वासर भयो धन्य आज, दुरित दूर परे भाज, शांतदशा देख महा, मोहतम पलायो ॥ पारस० ॥ ३ ॥ जाके गुन जानन जिम, भानन भवकानन इम, जान दौल शरन आय, शिवसुख ललचायो ॥ पारस० ॥ ४ ॥

१ आत्मा । २ चकवा । ३ कर्मबंधरूपीकमलोंके कोष बंध हुए थे उनसे ।
४ छोर । ५ बहुतकालका भूखा । ६ दवाई । ७ रोगी ।

५

वंदो अदभुत चन्द्र वीर[1] जिन, भवि-चकोर-चितहारी ॥ वंदों० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनृपकुल-नभ मंडन, खंडन भ्रमतम भारी। परमानंद-जलधिविस्तारन, पाप-ताप-छयकारी ॥ वंदों० ॥ १ ॥ उदित निरंतर त्रिभुवन अंतर, कीरति किरन पसारी। दोष[2]मलंक[3]कलंकअटंकित, मोहराहु निरवारी ॥ वंदों० ॥ २ ॥ कर्मावरन-पयोद[4]-अरोधित, बोधित शिवमगचारी। गनधरादि मुनि उडुगन[5] सेवत, नित पूनमतिथि धारी ॥ वंदों ॥ ३ ॥ अखिल-अलोकाकाश-उलंघन, जासु ज्ञानउजियारी। दौलत मनसा[6]-कुमुदनि--मोदन, जयो चरम[7]जगतारी ॥ वंदों० ॥ ४ ॥

६

निरखत जिनचंद्र--वदन, स्वपरसुरुचि आई। निरखत० ॥ टेक ॥ प्रगटी निज आनकी, पिछान

---

१ वर्द्धमानभगवान्। २ दोषा-रात्रि। ३ पापरूपी कलंक। ४ कर्मावरण-रूपी बादलोंसे जो ढकता नहीं है। ५ तारागण। ६ मनरूपी कुमोदनीको हर्षित करनेवाला। ७ अन्तिम तीर्थंकर।

ज्ञान भानकी, कला उदोत होत काम, जामनी पलाई । निरखत० ॥ १ ॥ सास्वत आनंद स्वाद, पायो विनस्यो विषाद, आनमें अनिष्ट इष्ट, कल्पना नसाई॥ निरखत० ॥ २ ॥ साधी निज साधकी, समाधि मोहव्याधिकी, उपाधिको विराधिकैं. अराधना सुहाई ॥ निरखत० ॥३॥ धन दिन छिन आज सुगुनि, चिंते जिनराज अबै, सुधरो सब काज दौल, अचल रिद्धि पाई । निरखत० ॥ ४ ॥

७

जबतें आनंद-जननि दृष्टि परी माई । तबतें संशय विमोह भरमता विलाई । जबतें० ॥ टेक ॥ मैं हूं चितचिह्न भिन्न, परतें पर जड़ स्वरूप, दो-उनकी एकता सु, जानी दुखदाई । जबतें० ॥१॥ रागादिक बंधहेत, बंधन बहु विपति देत, संवर हित जान तासु, हेतु ज्ञानताई । जबतें० ॥ २ ॥ सब सुखमय शिव है तसु, कारन विधिझारन इमि, तत्त्वकी विचारन जिन,-बानि सुधि कराई।

१ रात्रि । २ निर्जरा ।

जबतें० ॥ ३ ॥ विषयचाहज्वालतें द,-ह्यो अनंत कालतें सु,-धांबुस्यात्पदांकगाह[1],-तें प्रशांति आई जबतें० ॥ ४ ॥ या विन जगजालमें न, शरन तीनकालमें सँ,-भाल चितभजो सदीव दौल यह सुहाई । जबतें० ॥ ५ ॥

८

भज ऋषिपति[2] ऋषभेश[3] ताहि नित, नमत अमर असुरा । मनमथ[4]-मथ दरसावन शिवपंथ[5],वृष-रथ-चक्रधुरा ॥ भज० ॥ टेक ॥ जा प्रभु गर्भछमासपूर्व सुर, करी सुवर्ण धरा । जन्मत सुरगिर-धर सुरगनयुत, हरि[6] पय न्हवन करा ॥ भज० ॥ १ ॥ नटत नृत्यकी[7] विलय देख प्रभु, लहि विराग सु थिरा । तबहिं देवऋषि[8] आय नाय शिर जिनपद पुष्प धरा ॥ भज० ॥ २ ॥ केवलसमय जास वच-रविने[9], जगभ्रम-तिमिर हरा । सुदृग-बोधचारित्रपोतें[10] लहि, भवि भवसिंधुतरा ॥ भज०

---

१ स्व द्रहरूपी अमृतमें अवगाहन करनेसे । २ जिनाथ । ३ आदिनाथ । ४ कामदेवके मथनेवाले । ५ मोक्षपथ । ६ इन्द्र । ७ अप्सरा । ८ लौकांतिकदेव । ९ वचनरूपी सूर्यने । १० जहाज ।

॥ ३ ॥ योगसँहार निवार शेषविधि[1], निवसे वसुमधरा[2] । दौलत जे याको जस गावें, ते हैं अज अमरा ॥ भज० ॥ ४ ॥

९

जगदानंदन जिन अभिनंदन, पदअरविंद नमूं मैं तेरे । जग० ॥ टेक ॥ अरुनवरन अघतापहरन वर, वितरन कुशल सु शरन बड़ेरे । पद्मासदन[3] मदन-मद-भंजन, रंजन मुनिजनमन-अलिकेरे ॥ जग० ॥ १ ॥ ये गुन सुन मैं शरनैं आयो, मोहि मोह दुख देत घनेरे । ता मदभानन[4] स्वपरपिछानन, तुमविन आन न तारन हेरे ॥ जग० ॥२॥ तुम पदशरन गही जिननें ते, जामन-जरा-मरन निरवेरे । तुमतें विमुख भये शठ तिनको, चहुंगति विपतमहाविधि पेरे ॥ जग० ॥ ३ ॥ तुमरे अमित सुगुनज्ञानादिक, सतत मुदित गनराज उगेरे[5] । लहत न मित मैं पतित[6] कहों किम, किन

१ शेषके चार अघातिकर्म । २ आठवीं पृथ्वी अर्थात् मोक्ष । ३ लक्ष्मीके घर । ४ मदका नाश करनेके लिये । ५ गाये । ६ पापी ।

*शशकन गिरिराज उखेरे ॥ जग ॥४॥ तुम वि-
नरागदोष दर्पन ज्यों, निज निज भाव फलैं तिन-
केरे । तुम हो सहज जगत उपकारी, शिवपथ-
सारथवाह भलेरे ॥ जग० ॥ ५ ॥ तुम दयाल बेहा-
ल बहुत हम, काल-कराल-व्याल-चिर-घेरे । भाल
नाय गुणमाल जपों तुम, हे दयाल ! दुखटाल
सवेरे ॥ जग० ॥ ६ ॥ तुम बहु पतित सुपावन की-
नें, क्यों न हरो भवसंकट मेरे । भ्रम-उपाधि-हर
शमसमाधिकर, दौल भये तुमरे अब चेरे ॥ जग०
॥ ७ ॥

१०

पद्मासद्म पद्मपद पद्मा,-मुक्तिसद्म दरशावन है।
कलि-मल-गंजन मन-अलिरंजन, मुनिजन शरन
सुपावन है ॥ पद्मा० ॥ टेक ॥ जाकी जन्मपुरी
कुशंबिका, सुर-नर-नाग-रमावन है । जास जन्म-
दिनपूरब षटनव,-मास रतन वरसावन है ॥ पद्मा०

---

* खरगोशोंने १ शीघ्र । २ शान्तिसमाधि । ३ समवसरन लक्ष्मीके । ४ पद्मप्रभके चरण । ५ पद्मा—मुक्ति—मोक्षलक्ष्मी ।

॥ १ ॥ जा तपथान पपोसागिरि सो, आत्मज्ञान थिर-थावन है। केवलजोतउदोत भई सो, मिथ्या तिमर-नशावन है ॥ पद्मा० ॥ २॥ जाको शासन पंचानन सो, कुमति-मतंग-नशावन है। राग विना सेवक जन तारक, पै तसु रुषतुष भाव न है॥ पद्मा०॥ ३॥ जाकी महिमाके वरननसों, सुर-गुरुबुद्धि थकावन है। दौल अल्पमतिको कहबो जिमि, शिशुकगिरिंद धकावन है॥ पद्मा० ॥ ४॥

११

चन्द्रानन जिन चन्द्रनाथके, चरन चतुर-चित ध्यावतु हैं। कर्म-चक्र-चकचूर चिदातम, चिन्मूरतपद पावतु हैं॥ चन्द्रा० ॥ टेक ॥

हाहा हूहू-नारद-तुंबर, जासु अमल जस गावतु हैं। पद्मा-सची-शिवा-श्यामादिक, करधर वीन बजावतु हैं॥ चन्द्रा० ॥ १ ॥ विन इच्छा उपदेशमाहिं हित, अहित जगत दरसावतु हैं। जा

१ पपोसा नामका पर्वत है। २ उपदेश। ३ सिंह। ४ हाथी। ५ रोष, तोष-द्वेष राग। ६ बृहस्पतिकी बुद्धि। ७ जैसे खरगोश सुमेरुको धकेलना चाहे। ८ ये गंधर्व देवोंके भेद।

पदतट सुरनरमुनि घट[1] चिर, विकटविमोह नशावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ २ ॥ जाकी चन्द्रवरन तनदुतिसों, कोटिक सूर[2] छिपावतु हैं। आतमजोत उदोतमाहिं सब, ज्ञेयं[3] अनंत दिपावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ३ ॥ नित्य-उदय अकलंक अछीन सु, मुनि-उडु[4]-चित्त रमावतु हैं। जाकी ज्ञानचन्द्रिका लोका,-लोकमाहिं न समावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ४ ॥ साम्य-सिन्धुवर्द्धन[5] जगनंदन[6],-को शिर हरिगन नावतु हैं। संशय विभ्रम मोह दोलके, हर जो जगभरमावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ५ ॥

१२

जय जिन वासुपूज्य शिव-रमनी-रमन मदन दनु[7]-दारन हैं। बालकाल संजम सँभाल रिपु, मोहव्याल[8]बलमारन हैं ॥ जय जिन० ॥ १ ॥ जाके पंचकल्यान भये चंपापुरमें सुखकारन हैं। वासवबृंद[9] अमंद मोद धर, किये भवोदधितारन

---

१ देव मनुष्यों और मुनियोंके हृदयका । २ सूर्य । ३ पदार्थ । ४ तारा । ५ समतारूपी समुद्रको बढ़ानेवाला । ६ जगतको आनंदित करनेवाला । ७ कामदेवरूपी राक्षसको मारनेवाले । ८ मोहरूपी सांप । ९ इन्द्रोंके समूह ।

हैं ॥ जय जिन० ॥ २ ॥ जाके वैनसुधा त्रिभुव-
नजन,-को भ्रमरोगविदारन हैं। जा गुनचिंतन
अमलअनल मृत,-जनम-जरा-वन-जारन हैं॥जय०
॥ ३ ॥ जाकी अरुन शांतिछवि-रविभा, दिव-
सप्रबोधप्रमारन हैं। जाके चरनशरन सुरतरु
वांछित शिवफल विस्तारन हैं ॥ जय० ॥ ४॥ जा-
को शासन सेवत मुनि जे, चारज्ञानके धारण हैं।
इन्द्र-फणींद्र-मुकुटमणि-दुतिजल, जापद कलिल
पखारन हैं ॥ जय० ॥ ५ ॥ जाकी सेव अछेवर-
माकर, चहुंगतिविपति उधारन हैं। जा अनुभव-
घनसार सु आकुल, तापकलाप-निवारन हैं॥जय०
॥ ६ ॥ द्वादशमों जिनचन्द्र जास वर, जस उजा-
सको पार न हैं। भक्तिभारतैं नमें दौलको
चिरविभाव दुख टारन हैं ॥ जय० ॥ ७ ॥

१३

कुंथनके प्रतिपाल कुंथु जग,-तार सारगुनधारक

---

१ कल्पवृक्ष। २ पाप। ३ अक्षयलक्ष्मी (मोक्ष) की करनेवाली। ४ अनुभवरूपी -कल्यागर चंदन। ५ आकुलताके तापका समूह। ६ छोटे छोटे जीवोंके भी।

हैं । वर्जितग्रंथ[1] कुपंथवितर्जित. अर्जितपंथ[2] अमारक हैं ॥ कुंथनके० ॥ टेक ॥ जाकी समवसरन-बहिरंग, रमा गनेधार[3] अपार कहैं । सम्यग्दर्शन-बोध-चरण-अध्यात्म रमा-भर-भार- कहैं ॥ कुंथ०॥ १ ॥ दशधा-धर्म-पोतकर[4] भव्यनको भवसागरतारक हैं । वरसमाधि-वन-घन विभावरज, पुंजनिकुंजनिवारक हैं ॥ कुंथ० ॥ २ ॥ जासु ज्ञाननभमें अलोकजुन–लोक यथा इक तारक हैं । जासु ध्यानहस्तावलम्ब दुख-कूपविरूप उधारक हैं ॥ कुंथ० ॥ ३ ॥ तज छखंडकमला[5] प्रभु अमला, तपकमला आगारक हैं । द्वादशसभा-सरोजसूर भ्रम तरु अंकूरउपारक हैं ॥ कुंथनके० ॥४॥ गुणअनंत कहि लहत अंत को ? सुरगुरुसे बुध हार कहैं । नमें दौल हे कृपाकंद ! भवद्वंद टार बहुबार कहैं ॥ कुंथन० ॥ ५ ॥

---

१ परिग्रहरहित । २ अहिंसक पंथके अर्जन करनेवाले । ३ गणधर देव । ४ दशलक्षणधर्मरूपी जहाज करके । ५ छहखंडकी लक्ष्मी ।

१४

पासअनादिअविद्या मेरी, हरन पास-परमेशा हैं । चिद्विलास सुखराशप्रकाशवितरन त्रिभौन-दिनेशा हैं ॥ टेक ॥ दुर्निवार कंदर्पसर्पको दर्पविदरनखगेशा हैं । दुठ-शठ-कमठ-उपद्रव-प्रलय-समीर-सुवर्णनगेशा हैं ॥ पास० ॥ १ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श बल, सुख अनंत पदमेशा हैं । स्वानुभूति-रमनी-वर भवि-भव-गिर-पवि शिवसदमेशा हैं ॥ पास० ॥ २ ॥ ऋषि मुनि यति अनगार सदा तिस, सेवत पादकुशेसा हैं । वदनचंद्रतैं झरै गिरामृत, नाशन जन्म-कलेशा हैं ॥ पास० ॥३॥ नाममंत्र जे जपैं भव्य तिन, अघ अहिं नशत अशेसी हैं । सुर अहमिन्द्र खगेन्द्र चन्द्र ह्वै, अनुक्रम होंहिं जिनेशा हैं ॥ पास० ॥ ४ ॥ लोक

---

१ अनादि अविद्या रूपी फांसी । २ पार्श्वनाथ भगवान् । ३ तीन लोकके सूरज । ४ कामदेव रूपी सर्पको । ५ गरुडपक्षी । ६ । दुष्ट, शठ, ऐसे कमठके उपद्रवरूपी प्रलयकालकी आंधीको सहन करनेवाले मेरुपर्वत हो । ७ लक्ष्मीके ईश । ८ स्वानुभवरूपी स्त्रीके दुलह । ९ भव्योंको संसाररूपी पर्वतके नाश करनेको वज्रके समान । १० मोक्ष महलके मालिक । ११ चरणकमल । १२ वचनरूपी अमृत । १३ सब ।

अलोक-ज्ञेय-ज्ञायक पै, रत निजभावचिदेशा हैं। रागविना सेवकजन-तारक, मारक मोह न द्वेषा हैं॥ पास०॥ ५ ॥ भद्र-समुद्र-विवर्द्धन अद्भुत पूरनचन्द्र सुवेशा हैं। दौल नमै पद तासु जासु, शिवथल सेमेदअचलेशा हैं॥ पास०॥ ६॥

१५

जय शिव-कामिनि-कंत वीर भगवंत अनंतसुखाकर हैं। विधि-गिरि-गंजन बुधमनरंजन, भ्रम-तम भंजन भाकर हैं॥ जय०॥ टेक॥ जिन उपदेश्यौ दुविधधर्म जो, सो सुरसिद्धरमाकर हैं। भवि-उर-कुमुदनि-मोदन भवतप, हरन अनूप निशाकर हैं॥ जय०॥ १॥ परम विरागि रहैं जगतैं पै, जगतजंतुरक्षाकर हैं। इन्द्र फणीन्द्र खगेन्द्र चन्द्र जग-ठाकर ताके चाकर हैं॥ जय०॥ २॥ जासु अनंत सुगुनमणिगन नित, गनत गनीगन थाक रहैं। जा प्रभुपद नवकेवललब्धि सु, कमलाको

---

१ तारनेवाले। २ सम्मेदशिखर। ३ वर्द्धमान भगवान्। ४ कर्मरूपी पर्वतके नष्ट करनेवाले। ५ सूर्य। ६ दो प्रकारका धर्म गृहस्थ और मुनिका। ७ स्वर्ग और मोक्ष प्रदान करनेवाला है। ८ चन्द्रमा।

कमलाकर हैं ॥ जय० ॥ ३ ॥ जाके ध्यान-कृपान रागरुष,-पासहरन समताकर हैं। दौल नमै करजोर हरन भव,-बाधा शिवराधाकर हैं ॥ जय० ॥ ४ ॥

१६

जय श्रीवीर जिनेन्द्रचन्द्र, शतइन्द्रवंद्य जगतारं ॥ जय० ॥ टेक ॥ सिद्धारथकुल-कमल-अमल-रवि, भवभूधरपवि भारं। गुनमनिकोष अदोष मोषपति, विपिनकषायतुषारं ॥ जय० ॥ १ ॥ मदन-कदन शिवसदन पद-नमित, नित अनमित यतिसारं। रमाअनंतकंत अंतक-कृत,-अंत जंतुहित-कारं ॥ जय० ॥ २ ॥ फंद-चंदनाकंदन दादुरदुरित तुरित निर्वारं। रुद्ररचित अतिरुद्र उपद्रव—पवन अद्रिपातिसारं ॥ जय० ॥ ३ ॥ अंतातीत अचिंत्य सुगुन तुम, कहत लहत को पारं। हे जगमौल दौल तेरे क्रमे, नमै सीस कर धारं ॥ जय० ॥४॥

---

१ ध्यानरूपी तरवारसे रागद्वेषकी फांसीको काटनेवाला। २ संसाररूपी पर्वतको बड़े भारी वज्रके समान। ३ कषायरूपी वनको तुषार। ४ अनंत मोक्षलक्ष्मीके पति। ५ यमराजका भी किया है अन्त जिन्होंने ऐसे। ६ चंदनासतीके फंद काटनेवाले। ७ समवसरणमें पुष्प लेकर आनेवाले मेंढकके पाप। ८ रुद्रनामक दैत्यके किये हुए। ९ अनंत। १० जगन्मुकुट। ११ चरण।

१७

उरग-सुरग-नरईश सीस जिस, आतपत्र त्रि धरे । कुंदकुसुमसम चमर अमरगन, ढारत मोद-भरे ॥ उरग० ॥ टेक ॥ तरु अशोक जाको अव-लोकत, शोकथोक उजरे । पारजातसंतानकादि-के, बरसत सुमन वरे ॥ उरग० ॥ १ ॥ सुमणि-विचित्र-पीठअंबुजपर, राजत जिन सुथिरे। वर्ण-विगत जाकी धुनिको सुनि, भवि भवसिंधु तरे ॥ उरग० ॥ २ ॥ साढ़े बारह कोड़ जातिके, बाज-त तूर्य खरे । भामंडलकी दुति अखंडने, रविश-शि मंद करे । उरग० ॥ ३ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श बल, शर्म अनंत भरे । करुणामृतपूरित पद जाके, दौलत हृदय धरे ॥ उरग० ४ ॥

१८

भविन-सरोरुहसूर भूरिगुनपूरित अरहंता । दुरितदोष मोष पथघोषक करन कर्मअन्ता ॥ भवि-

---

१ छत्र। २ तीन । ३ फूल । ४ मनक्षरी । ५ बाजे । ६ भव्यरूपी कमलोंको सूर्य । ७ दोषरहित ।

न० ॥ टेक ॥ दर्शबोधतैं युगपत लख जाने, जु भावऽनंता। विगताकुल जुतसुखअनंत विन,-अंत शक्तिवंता ॥ भविन० ॥ १ ॥ जा तनजोतउदोतथकी रवि, शशिदुति लाजंता। तेजथोक अवलोक लगत है, फोक सचीकंता ॥ भविन० ॥ २ ॥ जास अनूप रूपको निरखत, हरखत हैं संता। जाकी धुनि सुनि मुनि निजगुन-मुन, पर-गर उगलंता ॥ भविन० ॥३॥ दौल तौलविन जस तस वरनत, सुरगुरु अकुलंता। नामाक्षर सुन कान स्वानसे, राँक नाकगंता ॥ भविन० ॥ ४ ॥

१९

हमारी वीर हरो भवपीर। हमारी० ॥ टेक ॥ मैं दुख-तपित दयामृतसर तुम, लख आयो तुम तीर। तुम परमेश मोखमगदर्शक, मोहदवानलनीर ॥ हमारी० ॥ १ ॥ तुम विनहेत जगतउपकारी, शुद्ध चिदानँद धीर। गनपतिज्ञानसमुद्र न लंघैं,

१ दर्शन और ज्ञानसे। २ आकुलतारहित। ३ इन्द्र। ४ अपने गुणोंका मनन करके। ५ मिथ्यात्वरूपी विष। ६ अपरिमित। ७ बृहस्पति। ८ रंक, नाचीज। ९ स्वर्ग गया।

तुम गुणसिंधु गहीर ॥ हमारी० ॥ २ ॥ याद नहीं मैं विपति सही जो, धर धर अमित शरीर। तुम गुनचिंतत नशत तथा भय, ज्यों घन चलत समीर ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ कोट बारकी अरज यही है, मैं दुख सहूं अधीर। हरहु वेदनाफंद दौलको, कतर कर्म जंजीर ॥ हमारी० ॥ ४ ॥

२०

सब मिल देखो हेली म्हारी हे, त्रिसलाबाल वदन रसाल। सब० ॥ टेक ॥ आये जुतसमवसरन कृपाल, विचरत अभय व्याल मराल, फलित भई सकल तरुमाल। सब० ॥ १ ॥ नैन न हाल भृकुटी न चाल, वैन विदारै विभ्रमजाल, छवि लखि होत संत निहाल। सब० ॥ २ ॥ वंदनकाज साज समाज, संग लिये स्वजन पुरजन व्राज, श्रेणिक चलत है नरपाल। सब० ॥ ३ ॥ यौं कहि मोदजुत पुरबाल, लखन चाली चरमाजिनपाल, दौलत नमत करधरभाल ॥ सब० ॥ ४ ॥

२१

अरि रजे रहस हनन प्रभु अरहन, जैवंतो जगमें। देव अदेव सेव कर जाकी, धरहिं मौलि पगमें ॥ अरिरज० ॥ टेक ॥ जा तन अष्टोत्तरसहस लक्खन लखि कलिल शमें। जा वचदीपशिखातें मुनि विचरें शिवमारगमें ॥ अरिरज० ॥ १ ॥ जास पासतें शोकहरन गुन, प्रगट भयो नगमें। व्यालमरालकुरंगसिंहको, जातिविरोध गमें ॥ अरिरज० ॥ २ ॥ जा जस-गगन उलंघन कोऊ, क्षमें न मुनी खगमें। दौल नाम तसु सुरतरु है या भवमरुथलमगमें ॥ अरि० ॥ ३ ॥

२२

हे जिन तेरे मैं शरणै आया ॥ तुम हो परमदयाल जगतगुरु, मैं भवभव दुख पाया ॥ हे जि० ॥ टेक ॥ मोह महादुठ घेर मोहि प्रभु, भवकानन भटकाया। नित निज ज्ञानचरननिधि विसर्‍यो, तनधनकर अपनाया ॥ हे० ॥ १ ॥ निजानंदअनु-

१ मोह। २ ज्ञानदर्शनावरण। ३ आवरण। ४ अशोकवृक्षमें। ५ सबमें। ६ संसाररूपी मारवाड देशके मार्गमें। ७ दुष्ट। ८ संसाररूपी वन।

भवपियूष[1] तज, विषयहलाहल खाया । मेरी भूल मूल दुखदाई, निमित मोहविधि थाया ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ सो दुठ होत शिथिल तुमरे ढिग, और न हेतु लखाया । शिवस्वरूप शिवमगदर्शक तुम, सुयश मुनीगन गाया ॥ हे जिन० ॥ ३ ॥ तुम हो सहजनिमित जगहितके, मो उर निश्चय भाया । भिन्न होँहुँ [2]विधितैं सो कीजे, दौल तुम्हैं सिर नाया ॥ हे जिन० ॥ ४ ॥

२३

हे जिन मेरी, ऐसी बुधि कीजे ॥ हे जिन० ॥ टेक ॥ रागद्वेषदावानलतैं बचि, समतारसमें भीजे ॥ हे जिन० ॥ १ ॥ परमें त्याग अपनपो[3] निजमें लाग न कबहूं छीजे ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ कर्म कर्मफलमाहिं न राचै, ज्ञानसुधारस पीजे ॥ हे जिन० ॥३॥ मुझ कारजके तुम कारन वर, अरज दौलकी लीजे ॥ हे जिन० ॥ ४ ॥

---

१ अमृत । २ कर्मोंसे । ३ आत्मत्व, अपनापना ।

२४

सॉंवरियाके नाम जपेतैं, छूट जाय भवभाँवरिया ॥ साँव० ॥ टेक ॥ दुरित दुरंत पुन तुरत फुरतैं गुन, आतमकी निधि आगरिया। विघटत है परदाह चाह झट, गटकंत समरस गागरिया ॥ साँव० ॥ १ ॥ कटत कलंक कर्म कलसायन, प्रगटत शिवपुर डाँगरिया, फटत घटाघन मोह छोई हट, प्रगटत भेद ज्ञान घरिया ॥ साँव० ॥ २ ॥ कृपाकटाक्ष तुमारीहीतैं, जुगलनागविपदा टरिया। धार भये सो मुक्तिरमावर, दौल नमैं तुव पागरिया ॥ साँव० ॥ ३ ॥

२५

शिवमगदरसावन रांवरो दरस। शिवमग।टेक। परे-पद-चाह-दाह-गद नाशन, तुम वचभेषज-पान सरस। शिवमग० ॥१॥ गुणचितवत निज अनुभव प्रगटै, विघटै, विधिठग दुविध तरस। शि-

१ भवभ्रमण। २ पाप। ३ छिपते हैं। ४ स्फुरित होता है। ५ गटकते हैं अर्थात् पीते हैं। ६ कालिमा। ७ मोक्षका रस्ता। ८ राग्द्वेष। ९ तुम्हारा नाम धारण करके। १० आपका। ११ पुद्गलसम्बन्धी चाहका दाहरूपीरोग नाश करनेके लिये दवाई।

वमग० ॥ २ ॥ दौल अवाची संपति सांची; पाय रहै थिर राच सरस । शिवमग० ॥ ३ ॥

२६

मेरी सुध लीजे रिषभस्वाम । मोहि कीजे शिवपथगाम ॥ टेक ॥ मैं अनादि भवभ्रमत दुखी अब, तुम दुखमेटत कृपाधाम । मोहि मोह घेरा कर चेरा, पेरा चहुंगतिविपतठाम । मेरी० ॥ १ ॥ विषयन मन ललचाय हरी मुझ, शुद्धज्ञान संपति ललाम । अथवा यो जड़को न दोष मम, दुखसुखता, परनातिसुकाम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग जगे अब चरन जपे तुम, वच सुनके गहे सुगुनग्राम । परमविराग ज्ञानमय मुनिजन, जपत तुमारी सुगुनदाम । ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ निर्विकार संपतिकृति तेरी, छबिपर वारों कोटि काम । भव्यानिके भवहारन कारन, सहज यथा तमहरन घामे ॥ मेरी० ॥ ४ ॥ तुम गुनमहिमा कथनकर-

---

१ अवाच्य, जिसका वर्णन न हो सके । २ गुणोंके समूह । ३ गुणमालाका । ४ सूरज ।

नको, गिनत्त गेनी निजबुद्धि खोम। दौलतनी अज्ञान परनती, हे जगत्राता कर विराम॥ मेरी०॥ ५॥

२७

मोहि तारो जी क्यों ना, तुम तारक त्रिजग त्रिकालमें, मोहि०॥ टेक॥ मैं भवउदधि पर्यो दुख भोग्यो, सो दुख जात कह्यो ना। जामनमरन अनंततनो तुम, जाननमांहिं छिप्यौ ना। ॥ मोहि०॥ १॥ विषय विरसरस विषम भर्यो मैं, चर्यो न ज्ञान सलोना। मेरी भूल मोहि दुख देवै, कर्मनिमित्त भलो ना॥ मोहि०॥ २॥ तुम पदकंज धरे हिरदै जिन, सो भवताप तप्यौ ना। सुरगुरुहूके वँचनकरनकर, तुम जसगगन नप्यौ ना॥ मोहि०॥ ३॥ कुगुरु कुदेव कुश्रुत सेये मैं, तुम मत हृदय धर्यो ना। परमविराग ज्ञानमय तुम जा,-ने विन काज सर्यो ना॥ मोहि०

१ [illegible]। २ [illegible], [illegible]। ३ [illegible]। ४ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। ५ [illegible] नहीं [illegible]।

॥ ४ ॥ मोसम पतित न और दयानिधि, पतित-तार तुम सौ ना । दौलतनी अरदास यही है, फिर भववास बसौं ना ॥ मोहि० ॥ ५ ॥

२८

मैं आयौ, जिन शरन तिहारी । मैं चिरदुखी विभावभावतैं, स्वाभाविक निधि आप विसारी ॥ मैं० ॥ १ ॥ रूप निहार धार तुम गुन सुन, वैन होत भवि शिवमगचारी । यों मम कारजके कारन तुम, तुमरी सेव एक उर धारी ॥ मैं० ॥ २ ॥ मिल्यौ अनंत जन्मतैं अवसर, अब विनऊं हे भवसरतारी । परमें इष्ट अनिष्ट कल्पना, दौल कहै झट मेट हमारी ॥ मैं० ॥ ३ ॥

२९

मैं हरख्यौ निरख्यौ मुख तेरो । नासान्यस्त नयन भ्रू हलय न, वयन निवारन मोह-अँधेरो ॥ मैं० ॥ ॥ १ ॥ परमें कर मैं निजबुधि अबलों, भवसरमैं दुख सह्यौ घनेरो ॥ सो

१ [illegible] । २ पापियोंका तारनेवाला । ३ अर्जी । ४ नासिकापर लगाई है दृष्टि जिसने । ५ हिलते नहीं हैं ।

दुखभानन स्वपर पिछानन, तुमविन आन न कारण हेरो ॥ मैं० ॥ २ ॥ चाह भई शिवराइलाहकी, गयौ उछाह असंजमकेरो। दौलत हित-विराग चित आन्यौं, जान्यौं रूप ज्ञानदृग मेरो॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०

प्यारी लागै म्हाने जिन छवि थारी ॥ टेक ॥ परमनिराकुलपद दरसावत, वर विरागताकारी । पटभूषनविन पै सुंदरता, सुरनरमुनिमनहारी ॥ प्यारी०॥१॥जाहि विलोकत भवि निज निधि लहि, चिरविभावता टारी। निरनिमेषतैं देख सचीपति, सुरतों सफल विचारी ॥ प्यारी० ॥ २ ॥ महिमा अकथ होत लख ताको, पशु सम समकितधारी । दौलत रहो ताहि निरखनकी, भव भव टेव हमारी ॥ प्यारी० ॥ ३ ॥

३१

निरख सुख पायौ, जिन मुखचंद । नि० ॥ टेक ॥ मोह महातम नाश भयौ है, उरअंबुज-

१ मोक्षमार्ग—कामकी प्राप्तिको । २ विकार रहित । ३ इन्द्र । ४ देखनेका ।

प्रफुलायौ । ताप नस्यौ बढि उदधि अनंद । निरख० ॥ १ ॥ चकवी कुमति बिछुर अति विलखे, आतमसुधा स्रवायौ । शिथिल भये सब विधिगनफंद ॥ निरख० ॥ २ ॥ विकट भवोदधिको तट निकस्यौ, अघतरुमूल नसायौ । दौल लह्यौ अब सुपद स्वछंद ॥ निरख० ॥ ३ ॥

३२

निरख सखि ऋषिनको ईश यह ऋषभ जिन, परखिके स्वपर परसौंज छारी । नैन नाशाग्र धरि मैन विनमायकर मौनजुत स्वांस दिशि सुरभिकारी ॥ नि० ॥ १ ॥ धरासम क्षांतिथुत नैरामरखचरजुत, विगुत रागादिमद दुरितहारी । जास क्रमपास भ्रमनाश पंचास्य मृग, वासकरि प्रीतिकी रीति धारी ॥ निरख० ॥ २ ॥ ध्यानदवमाहिं विधिदारु प्रजरांहि सिर, केश शुभ जिमि धुआं दिशि विथौरी । फँसे जगपंक जनरंक तिन काढ़ने, किधौं जगनाह

१ [illegible] । २ कर्म । ३ दिशाओंको सुगन्धित करनेवाला । ४ मनुष्य देव विद्याधरोंसे वन्दनीय । ५ रहित । ६ पाप । ७ चरण । ८ सिंह । ९ ध्यानरूपी अग्निमें । १० कर्मरूपी ईंधन । ११ बिखरी ।

यह बाँह सारी ॥ निरख० ॥ २ ॥ तेस हाटकम-रग बसन विन आभरन, खरे थिर ज्यों शिखर मेरुकारी । दौलको दैन शिवधौल जगमौलैं जे, तिन्हैं करजोर वंदन हमारी ॥ निरख० ॥ ४ ॥

३३

ध्यानकृपान पानि गहि नासी, त्रेसठ प्रकृति अरी । शेष पचासी लाग रही हैं, ज्यों जेवरी जरी ॥ ध्यान ० ॥ टेक ॥ दुठ अनंगमातंगभंग-कर, है प्रबलंग हरी । जा पदभक्ति भक्तजन–दुख–दावानल–मेघझरी ॥ ध्यान० ॥ १ ॥ नवल धवल पल सोहै कलमें, क्षुधतृषव्याधि टरी । इलत न पलक अलक नख बढ़त न गति नभमाहिं करी ॥ ध्यान० ॥ २ ॥ जा विन शरन मरन जर घर घर, महा असात भरी । दौल तास पद दास होत है, वास मुक्तिनगरी ॥ ध्यान० ॥ ३ ॥

---

१ पसारी । २ तपाये हुए सोने जैसा रंग । ३ मेरुका । ४ मुक्तिरूपी महल । ५ ध्यानरूपी तलवार । ६ घातियाकर्मोंकी प्रकृतियाँ । ७ कामरूपी हस्तीको मारनेवाले । ८ बलवान् सिंह । ९ मांस या रुधिर । १० शरीरमें । ११ केश ।

३४

दीठा भागनतैं जिनेपाला, मोहनाशनेवाला ।
॥ दीठा० ॥ टेक ॥ सुभग निशंक रागविन यातैं, वसन न आयुध वा²ला । मोह० ॥ १ ॥ जास ज्ञानमें युगपत भासत, सकल पदारथमाला । मोह० ॥२॥ निजमें लीन हीन इच्छा पर,-हितमितवचन रसाला। मोह० ॥ ३ ॥ लखि जाकी छवि आतमनिधि निज, पावत होत निहाला । मोह० ॥ ४ ॥ दौल जासगुन चिंतन रत है, निकट विकटभव-नाला ॥ मोह० ॥ ५ ॥

३५

थारा तो बैनामें सरधान घणो छे, म्हारे छविनिरखत हिय सरसावे । तुमधुनिघन परचहन-दहनहर, वर समता-रस-झर बरसावे । थारा० ॥ ॥ १ ॥ रूपनिहारत ही बुधि है सो, निजपरचिह्न जुदे दरसावे । मैं चिदंक अकलंक अमल थिर,

---

१ सम्यग्दृष्टिसे लगाकर बारहवें गुणस्थानतकके जीवोंको जिन संज्ञा है, उनका रक्षक । २ खां । ३ वचनोंमें । ४ आपका वाणीरूप मेघ । ५ परपदार्थोंको चाह-रूपी अग्निको बुझानेवाला है । ६ चैतन्यस्वरूप ।

इंद्रियसुखदुख जड़फरसावै। थारा० ॥ २ ॥ ज्ञानविरागसुगुनतुम तिनकी, प्रापतिहित सुरपति तरसावै। मुनि बड़भाग लीन तिनमें नित, दौल धवल उपयोग रसावै ॥ थारा० ॥ ३ ॥

३६

त्रिभुवनआनंदकारी जिन छबि, थारी नैन निहारी। त्रिभु० ॥ टेक ॥ ज्ञान अपूरब उदय भयो अब, या दिनकी बलिहारी। मो उर मोद बढ्यौ जु नाथ सो, कथा न जात उचारी। त्रिभु० ॥ १ ॥ सुन घनघोर मोरमुद ओर न, ज्यों निधिपाय भिखारी। जाहि लखत झट झरत मोहरज, होय सो भवि अविकारी ॥ त्रिभु० ॥ २ ॥ जाकी सुंदरता सु पुरंदर,-शोभ लजावनहारी। निज अनुभूति सुधाछबि पुलकित, वदन मदन अरिहारी ॥ त्रिभु० ॥ ३ ॥ शूलं दुकूल न बाला माला, मुनिमनमोद प्रमारी। अरुन न नैनन सैन भ्रमै ना

१ इंद्रियजन्य सुखदुःख जड़का स्पर्श करते हैं मेरा नहीं, मुझ सुखदुःख नहीं होते। २ इन्द्र। ३ विशुद्ध निर्मल। ४ इन्द्रकी शोभा। ५ त्रिशूल। ६ वस्त्र।

बंक न लंक सम्हारी ॥ त्रिभु० ॥ ४ ॥ तातैं विधिविभाव क्रोधादि न, लखियत हे जगतारी। पूजत पातकपुंज पलावत, ध्यावत शिवविस्तारी ॥ त्रिभु० ॥ ५ ॥ कामधेनु सुरतरु चिंतामनि, इकभव सुखकरतारी । तुम छवि लखत मोदतैं जो सुर, सो तुमपद दातारी ॥ त्रिभु० ॥ ६ ॥ महिमा कहत न लहत पार सुर-गुरुहूकी बुधि हारी । और कहै किम दौल चहै इम, देहु दशा तुमधारी ॥ त्रिभु० ॥ ७ ॥

३७

जिन छवि तेरी यह, घन जगतारन । जिन-छवि० ॥ टेक ॥ मूल[1] न फूल[3] दुकूल[4] त्रिशूल न, शमदमकारन भ्रमतमवारन । जिन० ॥ १ ॥ जाकी प्रभुताकी महिमातैं, सुरनधीशता[5] लागत सार न । अवलोकत भविथोक मोख मग, चरत वरत निजनिधि उरधारन । जिन० ॥ २ ॥ जजैत[6] भज-

---

१ कमर । २ जटा या वल्कल । ३ फूलोंकी माला । ४ वस्त्र । ५ इन्द्रपना ।
६ आपके जपनेसे यदि पाप भागते हैं तो इसमें क्या आश्चर्य है ?

त अघ तौ को अचरज, समकित पावन भावन-कारन । तासु सेवफल एव चहत नित, दौलत जाके सुगुन उचारन ॥ जिन छ० ॥ ३ ॥

३८

चल सखि देखन नाभिरायघर, नाचत हरि नटवा । चल० ॥ टेक ॥ अदभुत तालमान शुभ-लययुत, चवंत राग षटवा । चल सखि० ॥ १ ॥ मनिमय नूपुरादिभूषनदुति, युत सुरंग पॅटवा । हरिकरनखन नखनपै सुरतिय, पग फेरत कटवा ॥ चल० ॥२॥ किन्नर कर धर बीन बजावत, लावत लय झंटवा । दौलत ताहि लखें चख तृपते, सूझत शिवपटवा ॥ चल० ॥ ३ ॥

३९

आज गिरिराज निहारा, धनभाग हमारा । श्रीसम्मेद नाम है जाको, भूपर तीरथ भारा ॥ आज गिरि० ॥ टेक ॥ तहां बीस जिन मुक्ति प-

१ इन्द्ररूपी नट । २ गाते । ३ छै राग । ४ कपड़े । ५ इन्द्रके हाथोंकि नखोंपर । ६ कमर । ७ शीघ्र ही । ८ नेत्र । ९ मोक्षमार्ग ।

धारे, अवर मुनीश अपारा। आरजभूमिशिखा-
मनि सोहै, सुरनरमुनि-मन-प्यारा॥ आजगिरि०
॥ १॥ तहँ थिर योग धार योगीसुर, निज-पर त-
त्व विचारा। निज स्वभावमें लीन होयकर, स-
कल विभाव निवारा॥ आज गिरि०॥ २॥ जाहि
जजत भवि भावनतैं जब, भवभवपातक टारा।
जिनगुनधार धर्मधन संचो, भवदारिद हरतारा
॥ आज गिरि०॥ ३॥ ईक नभ नव ईक वर्ष मा-
घ वदि, चौदश बासर सारा। माथ नाय जुतसाथ
दौलने, जय जग शब्द उचारा॥ आज गिरि०॥४

४०

आज मैं परम पदारथ पायौ, प्रभुचरनन चित
लायौ। आज०॥ टेक॥ अशुभ गये शुभ प्रगट
भये हैं, सहज कल्पतरु छायौ। आज०॥ १॥
ज्ञानशक्ति तप ऐसी जाकी, चेतनपद दरशायौ।
आज०॥ २॥ अष्टकर्म रिपु जोधा जीते, शिव
अंकूर जमायौ। आज०॥ ३॥

४१

नेमिप्रभूकी श्याम बरन छवि, नैनन छाय रही ॥ टेक ॥ मनिमय तीन पीठपर अंबुज, तापर अधर ठही। नेमि० ॥ १ ॥ मार मार तप धार जार विधि, केवलऋद्धि लही। चार तीस अतिशय दुतिमंडित, नवदुग दोष नहीं। नेमि० ॥२॥ जाहि सुरासुर नमत संतत मस्तकतैं परस मही। सुरगुरुवर अम्बुजप्रफुलावन, अद्भुत भान सही। नेमि० ॥ ३ ॥ धर अनुराग विलोकत जाको, दुरित नशैं सब ही। दौलत महिमा अतुल जासकी कापै जात कही। नेमि० ॥ ४ ॥

४२

अहो नमि जिनप नित नमत शतसुरप, कंदर्पगजदर्पनाशन प्रबल पनलर्पन। अहो० ॥ टेक। नाथ! तुम बानिपय पान जे करत भवि, नशै तिनकी जरामरनजामनतपन। अहो नमि० ॥

१ कामदेवको मारके। २ अष्टादश। ३ निरंतर। ४ पृथिवी। ५ सौ इन्द्र। ६ कामदेव। ७ गर्व। ८ पन–पांच हैं लपन–मुख जिसके ऐसा पंचानन अर्थात् सिंह।

॥१॥ अहो शिवभौन तुम चरण चिंतौन जे, करत तिन जरत भावीदुखद भवविपंन ॥ हे भुवन पाल तुम विशद गुनमाल उर, धरैं ते लहैं टुक कालमें श्रेयपंन । अहो नमि० ॥ २ ॥ अहो गुनतूप तुमरूप चख सहसकरि, लखत सन्तोष प्रापति भयौ नाकंप न ॥ अजं, अकंल, तज सकल दुखद परिगह कुगंह, दुसहपरिसह सही धार व्रत सार पन । अहो० ॥ ३ ॥ पाय केवल सकल लोक करवत लख्यौ, अर्ख्यो वृष द्विधा सुनि नशत भ्रमतमझपंन । नीच कीचक कियो मीचतैं रहित जिम, दासको पास ले नास भववास पंनं । अहो नमि० ॥ ४ ॥

४२

प्रभु मोरी ऐसी बुधि कीजिये । रागदोषदावानलसे बच, समतारसमें भीजिये । प्रभु० ॥ टे-

---

१ भविष्यत्में दुख देनेवाले । २ संसाररूपी वन । ३ स्वच्छ । ४ उत्तमता । ५ गुणोंके समूह । ६ इन्द्र । ७ नहीं है आगेको जन्म जिसका । ८ निष्पाप । ९ चोखे प्रह । १० कहा । ११ पढ़ना । १२ मृत्युसे । १३ 'दौलतको' ऐसा भी पाठ है । १४ [illegible] संसार । १५ इस पदके दौलतराम मौकूफ होनेमें संदेह है।

क ॥ परमें त्याग अपनपो निजमें, लाग न कबहूं छीजिये। कर्म कर्मफल माहिं न राचत, ज्ञान सुधारस पीजिये। प्रभु मोरी० ॥ १ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरननिधि, ताकी प्राप्ति करीजिये। मुझ कारजके तुम बड़ कारन, अरज दौलकी लीजिये। प्रभु मोरी० ॥ २ ॥

४४

वारी हो बधाई या शुभ साजै। विश्वसेन ऐरादेवीगृह, जिनभवमंगल छाजै। वारी० ॥ टेक ॥ सब अमरेश अशेष विभवजुत, नगर नागपुर आये। नाग-दत्त सुरइन्द्रवचनतैं ऐरावत सज धाये। लख जोजन शत वदन वदन वसु, रद प्रति सर ठहराये। सर-सर सौ-पन-बीस नलिन प्रति, पदम पचीस विराजै। वारी हो० ॥ १ ॥ पदम पदम प्रति अष्टोत्तरशत, ठने सुदल मनहारी। ते सब कोटि सताइसपै मुद,—जुत नाचत सुरनारी। नवरस-गान ठान काननको, उपजावत सुख भारी। बंक

१ भूल न होवे। २ भगवानकी माता। ३ भगवानके जन्मका उत्सव। ४ सम्पूर्ण। ५ हस्तिनापुर। ६ कुबेर। ७ दाँत।

ले लावत लंक लचावत, दुति लखि दामनि लाजे।
वारी हो० ॥ २ ॥ गोपे गोपतिय[२] जाय मायढिग,
करी तास थुति सारी। सुखनिद्रा जननीको कर
नमि, अंके[३] लियो जग[४]तारी। लै बसु मंगल द्रव्य दि-
शसुरीं[५] चलीं अग्र शुभकारी। हरखि हरी[६] चख सहस
करी तब, जिनवर निरखनकाजे। वारी हो०
॥ ३ ॥ ता गजेन्द्रपै प्रथम इन्द्रने, श्रीजिनेन्द्र
पधराये। द्वितिय छत्र दिय, तृतिय-तुरिय हरि,
मुद धरि चमर दुराये। शेष शक्र जय शब्द करत
नभ, लंघ सुरांचल छाये। पांडुशिला जिन थाप
नची सचि, दुंदुभि कोटिक बाजे। वारी० ॥ ४ ॥
पुन सुरेशने श्रीजिनेशको, जन्मन्हवन शुभ ठानो।
हेमकुंभ सुरहाथहिं हाथन, क्षीरोदधिजल आनो।
[१२]वदनउदरअवगाह एक चौ, वसु योजन परमानो।
सहसआठ कर करि हरि जिनसिर, ढारत जय-

---

१ गुप्त रूपसे। २ इन्द्राणी। ३ गोदमें। ४ भगवान्। ५ दिक्कन्यका देवियाँ।
६ इन्द्र। ७ ऐशान इन्द्र। ८ सनत्कुमार और माहेन्द्र। ९ बाकीके सब
इन्द्र। १० सुमेरु। ११ इन्द्राणी। १२ सोनेके कलशोंके मुख एक योजन, उदर चार
योजन और-गहराई आठ योजन थी।

धुनि गाजै । वारी० ॥ ५ ॥ फिर हरिनारि सिंगार स्वामितन, जजे सुरा(?)जस गाये । पूरवैली विधिकर पयान मुद,–ठान पिताघर लाये । मनिमय आंगनमें कनकासन,–पै श्रीजिन पधराये । तांडव नृत्य कियो सुरनायक, शोभा सकल समाजै । वारी ० ॥ ६ ॥ फिर हरि जगगुरुपितर तोष शान्तेशं घोषं जिन नामा । पुत्रजन्म उत्साह नगरमें, कियौ भूप अभिरामा । साध सकल निज निज नियोग सुर, -असुर गये निजधामा । त्रिपद धारि जिन चारु चरनकी, दौलत करत सदा जै । वारी० ॥ ७ ॥

४५

हे जिन ! तेरो सुजस उजागर, गावत हैं मुनिजन ज्ञानी । हे जिन० ॥ टेक ॥ दुर्जयमोह महाभट जाने, निजवश कीनें जगप्रानी । सो तुम ध्यानकृपान पानि गहि, ततछिन ताकी थिति

१ इन्द्राणी । २ पूर्वकी । ३ जिन भगवानके पिताकी स्तुति करके । ४ शान्तिनाथ नाम । ५ घोषणा करके । ६ तीर्थंकरत्व, चक्रवर्तित्व और कामदेवत्व इन तीन पदोंके धारी ।

मानी। हे जिन० ॥ १ ॥ सुप्त अनादि अविद्या निद्रा, जिन जन निज सुधि विसरानी। है सचेत तिन निज निधि पाई, श्रवन सुनी जब तुम बानी। हे जिन० ॥ २ ॥ मंगलमय तू जगमें उत्तम, तुही शरन शिवमगदानी। तुवपद-सेवा परम औ-षधी, जन्मजरामृतगदहानी[1]। हे जिन० ॥ ३ ॥ तुमरे पंचकल्यानकमाहीं, त्रिभुवन मोददशा ठानी। विष्णु, विदंबर, जिष्णु, दिगम्बर, बुध, शिव कह ध्यावत ध्यानी। हे जिन० ॥ ४ ॥ सर्व दर्व-गुनपरजयपरनति, तुम सुबोधमें नहिं छानी। तातैं दौलदास उरआशा, प्रगट करो निजरस-सानी। हे जिन० ॥ ५ ॥

४६

हे मन! तेरी को कुटेव यह, करनविषयमें[2] धावै है। हे मन० ॥ टेक ॥ इनहीके वश तू अनादितैं, निजस्वरूप न लखावै है। पराधीन छिन छीन स-माकुल, दुरगतिविपति चखावै है। हे मन० ॥ १ ॥

१ जन्ममरणजरारूपी रोग। २ इन्द्रियोंके विषयमें।

फरस विषयके कारन वारेन, गरतैं परत दुख पावै है। रसना इंद्रीवश झष जलमें, कंटक कंठ छिदावै है। हे मन० ॥ २ ॥ गंध-लोल पंकज मुंद्रितमें, अलि निज प्रान खपावै है। नयनविषयवश दीपशिखामें, अंग पतंग जरावै है। हे मन० ॥ ३ ॥ करनविषयवश हिरन अरनमें, खलकर प्रान लुनावै है। दौलत तज इनको जिनको भज, यह गुरु शीख सुनावै है। हे० ॥ ४ ॥

४७

हो तुम शठ अविचारी जियरा, जिनवृष पाय वृथा खोवत हो। हो तुम० ॥ टेक ॥ पी अनादि मदमोह स्वगुनानिधि, भूल अचेत नींद सोवत हो। हो तुम० ॥ १ ॥ स्वहितसीख वच सुगुरु पुकारत, क्यों न खोल उर-दृग जोवत हो। ज्ञान विसार विषयविष चाखत, सुरतरु जारि कनक बोवत हो॥ हो तुम० ॥ २ ॥ स्वारथ सगे सकल

१ हाथी। २ गढ़ेमें पड़कर। ३ मछली। ४ बंद कमलोंमें। ५ कानके विषयसे। ६ वनमें। ७ जिनधर्म। ८ हियेकी आंखें। ९ कल्पवृक्षको जलाकर। १० धतूरा।

जनकारन, क्यों निज पापभार ढोवत हो । नरभ-
व सुकुल जैनवृष नौका, लहि निज क्यों भवजल
डोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ३ ॥ पुण्य-पापफल-
वातव्याधिवश, छिनमें हँसत छिनक रोवत हो ।
संयमसलिल लेय निज उरके, कलिमल क्यों न
दौल धोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ४ ॥

४८

हो तुम त्रिभुवनतारी (हो जिन जी) मो भव-
जलधि क्यों न तारत हो ॥ टेक ॥ अंजन कियो
निरंजन तातैं, अधमउधार विरद धारत हो । हरि
बराह मर्कट झट तारे, मेरी बेर ढील पारत हो
॥ हो तुम० ॥ १ ॥ यों बहु अधम उधारे तुम तौ,
मैं कहा अधम न मुहि टारत हो । तुमको करनो
परत न कछु शिव,-पथ लगाय भव्यनि तारत हो
॥ हो तुम० ॥ २ ॥ तुम छबि निरखत सहज
टरैं अघ, गुण चिंतत विधि रज झारत हो । दौल
न और चहै मो दीजे, जैसी आप भावना रख
हो ॥ हो तुम० ॥ ३ ॥

४९

मान ले या सिख मोरी, झुकै मत भोगन ओरी ॥ मान ले० ॥ टेक ॥ भोग भुजंगभोगसम[1] जानो, जिन इनसे रति जोरी । ते अनंत भव भीम[2] भरे दुख, परे अधोगति पोरी[3], बँधे दृढ़ पातक-डोरी[4] ॥ मान० ॥१॥ इनको त्याग विरागी जे जन, भये ज्ञानवृषधोरी । तिन सुख लह्यौ अचल अविनाशी, भवफांसी दई तोरी; रमै तिन सँग शिवगोरी ॥ मान० ॥ २ ॥ भोगनकी अभिलाष-हरनको, त्रिजग संपदा थोरी । यातैं ज्ञानानंद दौल अब, पियौ पियूष कटोरी; मिटै भवव्याधि कठोरी ॥ मान० ॥ ३ ॥

५०

छांड़ि दे या बुधि भोरी, वृथा तनसे रति जोरी ॥ छांड़ि० ॥ टेक ॥ यह पर है न रहै थिर पोषत, सकल कुमलकी झोरी । यासों ममता कर अनादितैं, बँध्यो कर्मकी डोरी, सहै दुख जलधि हि-

१ सर्पके फनके समान । २ भयानक । ३ पौर । ४ पापकी डोरमें ।

लोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी, ॥ वृथा० ॥१॥ यह जड़ है तू चेतन यों ही, अपनावत बरजोरी सम्यक दर्शन ज्ञान चरण निधि, ये हैं संपत तोरी, सदा विलसौ शिवगोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी ॥ वृथा० ॥२॥ सुखिया भये सदीव जीव जिन यासों ममता तोरी । दौल सीख यह लीजे पीजे, ज्ञानपियूष कटोरी, मिटै परचाह कठोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी । वृथा० ॥ ३ ॥

५१

भाखूं हित तेरा, सुनि हो मन मेरा ॥भाखूं०॥ टेक ॥ नरनरकादिक चारों गतिमें, भटक्यौ तू अधिकानी । परपरनातिमें प्रीति करी निज परनति नाहिं पिछानी, सहै दुख क्यों न घनेरा ॥ भा० ॥ १ ॥ कुगुरुकुदेवकुपंथपंकफँसि, तैं बहु खेद लहायौ । शिवसुख दैन जैन जगदीपक, सो तैं कबहु न पायौ, मिट्यौ न अज्ञानअँधेरा ॥ भा० ॥ २ ॥ दर्शनज्ञानचरन तेरी निधि, सो विधिठगन

---

१ कर्मरूपी ठगोंने ।

ठगी है । पांचों इंद्रिनके विषयनमें, तेरी बुद्धि लगी है, भया इनका तू चेरा ॥ भा० ॥ ३ ॥ तू जगजालविषैं बहु उरझ्यौ, अब कर ले सुरझेरा। दौलत नेमिचरनपंकजका, हो तू भ्रमर सवेरा, नसै ज्यों दुख भवकेरा ॥ भा० ॥ ४ ॥

५२

मत कीजौ जी यारी, ये भोगभुजग सम जानके॥ मत कीजौ० ॥टेक॥ भुजग डसत इक बार नसत है ये अनंत मृतुकारी । तिसना तृषा बढ़ै इन सेयें, ज्यों पीये जल खारी ॥ मत कीजौ जी० ॥ १ ॥ रोग वियोग शोक वनको घन; समतालताकुठारी । केहरि करि अरिहू न देत ज्यों, त्यों ये दें दुख भारी ॥ मत कीजौ० ॥ २ ॥ इनमें रचे देव तरु थाये, पाये श्वभ्र मुरारी । जे विरचे ते सुरपतिअरचे, परचे सुख अविकारी ॥ मत कीजौ० ॥ ३ ॥ पराधीन छिनमाहिं छीन

१ शीघ्र ही । २ सर्प । ३ मृत्युके करनेवाले । ४ मेघ । ५ समतारूपी बेलके काटनेको कुल्हाड़ी । ६ सिंह । ७ हाथी । ८ दुश्मन । ९ नरक । १० नारायण । ११ वैरागी हुए ।

है पापबंधकरतारी ॥ इन्हें गिनें सुख आक माँहि तिन, आमतनी बुधि धारी ॥ मत कीजौ० ॥ ४ ॥ मीन मतंग पतंग भ्रंग मृग, इन वश भये दुखारी ॥ सेवत ज्यों किंपाक ललित परि,-पाक समय दुखकारी ॥ मत कीजौ जी० ॥ ५ ॥ सुरपति नरपति खगपतिहूकी, भोग न आस निवारी ॥ दौल त्याग अब भज विराग सुख, ज्यों पावै शिवनारी ॥ मत कीजौ जी० ॥ ६ ॥

५३

सुधि लीजौ जी म्हारी, मोहि भवदुखदुखिया जानके ॥ सुधि० ॥टेक॥ तीनलोकस्वामी नामी तुम, त्रिभुवनके दुखहारी । गनधरादि तुव सरन लई लख, लीनी सरन तिहारी ॥ सुध ली० ॥१॥ जो विधि अरी करी हमरी गति, सो तुम जानत सारी । याद किये दुख होत हिये ज्यों, लागत कोट कटारी ॥ सुध लीजौ० ॥ २ ॥ लब्धिअप-र्यापतानिगोदमें, एक उसासमँझारी । जनममरन न-

---

१ हाथी । २ भ्रमर । ३ इन्द्रायणका फल ।

वेदुगुनचियाकी, कथा न जात उचारी ॥ सुध
लीजो० ॥ ३ ॥ भू जल ज्वलन पवन प्रतेक तरु,
विकलत्रय तनधारी। पंचेद्री पशु नारक नर सुर,
विपाति भरी भयकारी ॥ सुध लीजौ० ॥ ४ ॥
मोह महारिपु नेक न सुखमय, होन दई सुधि
थारी। सो दुठ मंद भयो भागनतें, पाये तुम
जगतारी ॥ सुध लीजौ० ॥ ५ ॥ यदपि विरागि-
तदपि तुम शिवमग, सहजप्रगट करतारी ॥ ज्यों
रविकिरन सहजमगदर्शक, यह निमित्त अनिवा-
री ॥ सुध ली० ॥ ६ ॥ नाग छाग गज बाघ भील
दुठ, तारे अधमउधारी। सीस नवाय पुकारत
अबके, दौल अधमकी बारी ॥ सुध ली० ॥ ७ ॥

५४

मत राचो धीधारी, भव रंभथंभसम जानके।
मत राचो० ॥ टेक ॥ इंद्रजालको ख्याल मोह
ठग विभ्रमपास पसारी। चहुँगति विपतिमयी
जामें जन, भ्रमत भरत दुखभारी ॥ मत० ॥ १ ॥

---

१ अठारह बारकी। २ पृथ्वीकाय। ३ अग्निकाय। ४ बुद्धिमानो। ५ केलेके थंभे समान।

रामा मा, मा वामा, सुत पितु, सुता श्वसा, अवतारी । को अचंभ जहां आप आपके, पुत्रदशा विस्तारी ॥ मत राचौ० ॥ २ ॥ घोर नरक दुख ओर न छोर न लेश न सुख विस्तारी । सुर नर प्रचुर विषय जुर जारे, को सुखिया संसारी ॥ मत राचौ ॥ ३ ॥ मंडेल है आंखंडल छिनमें, नृप कृमि, सधन भिखारी । जा सुत-विरह मरी है बाघिनि, ता सुत देह विदारी ॥ मत राचौ० ॥ ४ ॥ शिशु न हिताहितज्ञान तरुन उर, मदनदहन परजारी । वृद्ध भये विकलंगी थाये, कौन दशा सुखकारी ॥ मत राचौ० ॥ ५ ॥ यों असार लख छार भव्य झट, भये मोखमगचारी । यातैं होहु उदास दौल अब, भज जिनपति जगतारी ॥ मत० ॥ ६ ॥

५५

नित पीजौ धीधारी, जिनवानि सुधासम जानके, नित पी० ॥ टेक ॥ वीरमुखारविंदतैं प्रगटी, जन्मजरा गद टारी । गौतमादिगुरु उर-घट व्या-

---

१ स्त्री । २ वाहन । ३ कुत्ता । ४ देव । ५ लट । ६ कामाग्नि । ७ जैनशास्त्रोंको । ८ अमृतसमान । ९ महावीरस्वामीके मुख कमलसे । १० रोग ।

४

पी, परम सुरुचिकरतारी ॥ नित० ॥ १ ॥ स-लिल[1]समान कलि[2]मलगंजन, बुधमनरंजनहारी । भंजन विभ्रमधूलि प्रभंजन, मिथ्याजलदनिवारी ॥ नित पी० ॥ २ ॥ कल्यान[3]कतरु उपवनधरिनी, तरनी[4] भवजलतारी । बंध[5]विदारन पैनी[6] छैनी, मुक्तिनसैनी सारी ॥ नित पी० ॥ ३ ॥ स्वपर-स्वरूपप्रकाशनको यह, भानुकला अविकारी । मुनि-मन-कुमुदिनि-मोदन-शशिभा[7], शमसुखसुमन सुवारी[8] ॥ नि० ॥ ४ ॥ जाको सेवत बेवत[9] निज-पद, नसत अविद्या सारी । तीनलोकपति[10] पूजत जाको, जान त्रिजगहितकारी ॥ नित० ॥ ५ ॥ कोटि जीभसों महिमा जाकी, कहि न सके पविधारी[11] । दौल अल्पमति केम कहै यह, अधम-उधारनहारी ॥ नि० ॥ ६ ॥

---

१ जलके समान । २ पापरूपी मैलको नष्ट करनेवाली । ३ "मंगलतरुहि उपावन धरनी" ऐसा भी पाठ है । ४ नौका । ५ कर्मबंध । ६ तीखी छैनी । ७ मुनियोंकी मनरूपी कुमुदिनीको प्रफुल्लित करनेकेलिये चंद्रमाकी रोशनी । ८ समता-सुखरूपी पुष्पोंकी, अच्छी वाटिका । ९ जानते या अनुभवते हैं । १० तीन भुवनके राजा इन्द्रादिक । ११ वज्रधारी इन्द्र ।

५६.

मत कीजौ जी यारी, घिनगेह[1] देह जड़ जा-
निके; मत की० ॥ टेक ॥ मात-तात-रज-वीरजसौं
यह, उपजी मलफुलवारी । अस्थिमाल-पल-नसा-
जालकी[2], लाल लाल जलक्यारी ॥ मत की० ॥१॥
कर्मकुरंगथलीपुतली[3] यह, मूत्रपुरीष[4]भँडारी । चर्म-
मँढ़ी रिपुकर्मघड़ी धन,-धर्म चुरावनहारी ॥ मत की०
॥ २ ॥ जे जे पावन वस्तु जगतमें, ते इन स
विगारी । स्वेद[5]मेद[6]कफक्लेद[7]मयी बहु, मदगदव्यालपि-
टारी[8] ॥ मत की० ॥ ३ ॥ जा संयोग रोग[9]भव तो-
लौं, जा वियोग शिवकारी । बुध तासौं न ममत्व
करैं यह, मूढ़मतिनको प्यारी ॥ मत की० ॥ ४ ॥
जिन पोषी ते भये सदोषी, तिन पाये दुख भारी ।
जिन तप ठान ध्यानकर शोषी[10], तिन परनी
शिवनारी ॥ मत की० ॥ ५ ॥ सुरधनु[11] शरदजलद[12]

१ घृणाका घर । २ हाड मांस नसोंके समूहकी । ३ कर्मरूपी हिरनोंको फँसानेवाली जगहपर पुतलीके समान । ४ विष्टा । ५ पसीना । ६ चरबी । ७ दुःख । ८ मदरोगरूपी सांपके लिये पिटारी । ९ संसाररूपीरोग । १० शोषण की । ११ इन्द्रधनुष । १२ शरदऋतुके बादल ।

जलबुदबुद, त्यों झट विनशनहारी । यातैं भिन्न जान निज चेतन दौल होहु शर्मधारी ॥ मत-की० ॥ ६ ॥

५७.

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावै, जाको जिनवानी न सुहावै । ऐसा० ॥ टेक ॥ वीतराग-से देव छोड़कर भैरव यक्ष मनावै । कलपलता दयालुता तजि, हिंसा इन्द्रायनि बोवै[2] ॥ ऐसा० ॥ १ ॥ रुचै न गुरु निर्ग्रन्थभेष बहु, परिग्रही गुरु भावै । परधन परतियको अभिलाषै, अशनं अशोधित खावै ॥ ऐसा० ॥ २ ॥ परको विभव देख ह्वै सोगी[5], परदुख हरख लहावै । धर्महेतु इक दाम न खरचै, उपवन[6] लक्ष बहावै ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥ जो गृहमें संचय बहु अघ तौ, बनहूमें उठ जावै । अम्बर त्याग कहाय दिगम्बर, बाघ-म्बर तन छावै ॥ ऐसा० ॥ ४ ॥ आरँभ तज शठ

१ समताके धारी । २ बोवै । ३ भोजन । ४ बिनाशोधा हुआ । ५ दुःखी ।
६ बाग बनानेमें लाखों रुपये ।

यंत्र मंत्र करि, जनपै पूज्य मनावै। धाम बाम तज दासी राखै, बाहिर मढ़ी बनावै॥ ऐसा॥ ५॥ नाम धराय जती तपसी मन, विषयनमें ललचावै। दौलत सो अनंत भव भटकै, औरनको भटकावै॥ ऐसा०॥ ६॥

५८

ऐसा योगी क्यों न अभयपद पावै, सो फेर न भवमें आवै। ऐसा०॥ टेक॥ संशय-विभ्रम-मोह-विवर्जित, स्वपरस्वरूप लखावै। लख परमातम चेतनको पुनि, कर्मकलंक मिटावै॥ ऐसा योगी०॥ १॥ भवतनभोगविरक्त होय तन नग्न सुभेष बनावै। मोहविकार निवार निजातम,—अनुभवमें चित लावै॥ ऐसा योगी०॥ २॥ त्रस-थावर-बध त्याग सदा परमाददशा छिटकावै। रागादिकवश झूठ न भाखै, तृणहु न अदत्त गहावै॥ ऐसा योगी०॥ ३॥ बाहिर नारि त्यागि अंतर चिद्‌ब्रह्म सुलीन रहावै। परमाकिंचन धर्म-

१ संसार और देह भोगोंसे विरक्त। २ बिना दिया।

सार सो, द्विविध प्रसंग बहावे ॥ ऐसा० ॥ ४ ॥ पंच समिति त्रय गुप्ति पाल व्यवहार चरनमग धावे। निश्चय सकलकषायरहित व्है, शुद्धातम थिर थावे ॥ ऐसा योगी० ॥ ५ ॥ कुंकुम पंक दास रिपु तृण मणि, व्याल माल सम भावे। आरत रौद्र कुध्यान बिडारै, धर्म शुकलको ध्यावे ॥ ऐसा योगी० ॥ ६ ॥ जाके सुखसमाजकी महिमा, कहत इन्द्र अकुलावे। दौल तासपद होय दास सो, अविचलऋद्धि लहावे ॥ ऐसा० ॥ ७ ॥

५९

लखो जी या जिय भोरेकी बातें, नित करत अहित हित घातें। लखो जी०॥ टेक ॥ जिन गनधर मुनि देशव्रती समकिती सुखी नित जातें। सो पय ज्ञान न पान करत न अघात विषय-विष खातें ॥ लखो० ॥ १ ॥ दुखस्वरूप दुखफलद जलदसम, टिकत न छिनक बिलातें। तजत न जगत न भजत पतित नित, रचत न फिरत

१ दो प्रकारका परिग्रह। २ तृप्त होता है। ३ दुखरूप फल देनेवाला। ४ बादल।

तहांतैं ॥ लखौ० ॥ २ ॥ देह-गेह-धन-नेह ठान अति, अघ संचत दिन रातैं । कुगति विपतिफ-लकी न भीत, निश्चिंत प्रमाददशातैं ॥ लखौ० ॥ ३ ॥ कबहुं न होय आपनो परद्रव्यादि पृथक चतुघातैं । पै अपनाय लहत दुख शठ नभ-हतन चलावत लातैं ॥ लखौ० ॥ ४ ॥ शिवगृहद्वार सार नरभव यह, लहि दश दुर्लभतातैं । खोवत ज्यों मनि काग उड़ावत, रोवत रंकपनातैं ॥ लखा०॥५॥ चिदानंद निर्द्वंद स्वपद तज, अपद-विपद-पद रातैं । कहत सुशिख गुरु गहत नहीं उर, चहत न सुख समतातैं॥लखौ०॥६॥जैनवैन सुन भवि बहु भवहर, छूटे द्वंददशातैं । तिनकी सुकथा सुनत न गुनत न, आतमबोधकलातैं ॥ लखौ० ॥ ७ ॥ जे जन समुझि ज्ञानदृगचारित, पावन पयवर्षातैं । ताप-विमोह हर्यौ तिनको जस, दौल त्रिभौन वि-ख्यातैं ॥ लखौ० ॥ ८ ॥

---

१ [illegible] । २ आकाशके घात करनेको । ३ विपतिस्थानमें [illegible] । ४ मनन नहीं करता ।

६०.

सुनो जिया ये सतगुरुकी बातैं, हित कहत दयाल दयातैं। सुनो० ॥ टेक ॥ यह तन आन अचेतन है तू, चेतन मिलत न यातैं। तदपि पिछान एक आतमको, तजत न हठ शठतातैं ॥ सुनो० ॥ १ ॥ चहुंगति फिरत भरत ममताको, विषय महाविष खातैं। तदपि न तजत न रजत[1] अभागे, दृगव्रतबुद्धिसुधातैं[2] ॥ सुनो० ॥ २ ॥ मात तात सुत भ्रात स्वजन तुझ, साथी स्वारथनातैं। तू इन काज साज गृहको सब, ज्ञानादिक मत घातै ॥ सुनो० ॥ ३ ॥ तन धन भोग सँयोग सुपनसम, बार न लगत बिलातैं। ममत न कर भ्रम तज तू भ्राता, अनुभव-ज्ञान-कलातैं ॥ सुनो० ॥ ४ ॥ दुर्लभ नरभव सुथल सुकुल है, जिन उपदेश लहा तैं। दौल तजो मनसों ममता ज्यों, निबड़ो द्वंददशातैं॥सुनो०॥५॥

६१.

मोही जीव भरमतमतैं नाहिं, वस्तुस्वरूप लखै

---

१ रंजायमान होता है। २ दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूपी अमृतसे।

है जैसें। मोही० ॥ टेक ॥ जे जे जड़ चेतनकी परनति, ते अनिवार परनवें वैसें[1]। वृथा दुखी शठ कर विकलप यौं, नहिं परिनवें परिनवें ऐसें[3] ॥ मोहि० ॥ १ ॥ अशुचि सरोग समल जड़मूरत, लखत विलात गगनघन जैसें। सो तन ताहि निहार अपनपो, चहत अबाध रहै थिर कैसें ॥ मोही० ॥ २ ॥ सुत-तिय-बंधु-वियोगयोग यौं, ज्यौं सराय जन निकसैं[4] पैसें[5] ॥ बिलखत हरखत शठ अपने लखि, रोवत हँसत मत्त जन जैसें ॥ मोही० ॥ ३ ॥ जिन-रवि-वैन-किरन लहि जिन निज, रूप सुभिन्न कियो परमेंसें ॥ सो जगमोल दौलको चिर थित, मोहविलास निकास हृदेसें ॥ मोही० ॥ ४ ॥

६२.

ज्ञानी जीव निवार भरमतम, वस्तुस्वरूप विचारत ऐसें। ज्ञानी० ॥ टेक ॥ सुत तिय बंधु

---

१ जिसका निवारण नहीं हो सकता। २ जैसा परिणमन होना चाहिये वैसा। ३ इसप्रकार नहीं परिणमैं, किन्तु इसप्रकार अपनी इच्छानुसार परिणमैं। ४ निकलैं। ५ प्रवेश करैं।

घनादि प्रगट पर, ये मुझतैं हैं भिन्नप्रदेशैं। इनकी परनति है इन आश्रित, जो इन भाव परनवैं वैसें ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ देह अचेतन चेतन मैं, इन परनति होय एकसी कैसें। पूरन-गलन स्वभाव-धरै तन, मैं अज अचल अमल नभ जैसें ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पर परिनमन न इष्ट अनिष्ट न, वृथा रागरुष द्वंद्व भयेसें। नसै ज्ञान निज फँसै बंधमें, मुक्त होय समभाव लयेसें ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ विषय-चाह दवदाह नसै नहिं, बिन निज सुधासिंधुमें पैसें। अब जिनवैन सुने श्रवननतैं, मिटै विभाव करूं विधि तैसें ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ ऐसो अवसर कठिन पाय अब, निजहितहेत विलंब करेसें। पछताओ बहु होय सयाने, चेतन दौल छुटो भव भैसें ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥

६३.

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायो, ज्यों शुक नभचाल विसरि, नलिनी लटकायो ॥

---

१ पूरन होने और गलन होनेरूप स्वभाववाला पुद्गल होता है।

अपनी० ॥ टेक ॥ चेतन अविरुद्ध शुद्ध, [illegible]बोधमय विशुद्ध, तजि जड़-रसफरसरूप, पुद्गल अपनायौ । अपनी० ॥ १ ॥ इन्द्रियसुखदुखमें नित्त, पाग रागरुखमें चित्त, दायकभवविपतिवृंद, बंधको बढ़ायौ । अपनी० ॥ २ ॥ चाहदाह दाहै, त्यागौ न ताह चाहै, समतासुधा न गाहै, जिन निकट जो बतायौ । अपनी० ॥ ३ ॥ मानुष भव सुकुल पाय, जिनवरशासन लहाय, दौल निजस्वभाव भज, अनादि जो न ध्यायौ । अपनी० ॥ ४ ॥

६४.

जीव ! तू अनादिहीतैं भूल्यौ शिवगैलवा । जीव० ॥ टेक ॥ मोहमदवार पियौ, स्वपद विसार दियौ, पर अपनाय लियौ, इंद्रियसुखमें रचियौ, भवतैं न भियौ न तजियौ मनमैलवा । जीव० ॥ १ ॥ मिथ्या ज्ञान आचरन, धरिकर कुमरन, तीन लोककी धरन, तामें कियौ है फिरन, पायौ न शरन न लहायौ सुख शैलवा । जीव० ॥ २ ॥

१ [illegible]

अब नरभव पायो, सुथल सुकुल आयो, जिन उपदेश भायो, दौल झट छिटकायो, परपरनति दुखदायिनी चुरैलेवा । जीव ॥ ३ ॥

६५.

आपा नौंहिं जाना, तूने कैसा ज्ञानधारी रे ॥ टेक ॥ देहाश्रित करि क्रिया आपको, मानत शिवमगचारी रे । आपा० ॥ १ ॥ निजनिवेदंविन घोर परीसह, विफल कही जिन सारी रे । आपा० ॥ २ ॥ शिवचाहे तो द्विविधं कर्मतें, कर निजपरनति न्यारी रे ॥ आपा० ॥ ३ ॥ दौलत जिन निजभाव पिछान्यौ, तिन भवविपति विदारी रे । आपा० ॥ ४ ॥

६६.

आतमरूप अनूपम अद्भुत, याहि लखें भवसिंधु तरो । आ० ॥ टेक ॥ अल्पकालमें भरत चक्रधर, निज आतमको ध्याय खरो । केवलज्ञान पाय भवि बोधे, ततछिन पायो लोकशिरो । आ०

---

१ चुड़ैल । २ 'न पिछाना' ऐसा भी पाठ है । ३ अपनी आत्माका स्वरूप जानेबिना । ४ 'द्विविध धर्म कर' ऐसा भी पाठ है । ५ मोक्षशिखर सिद्धशिला ।

॥ १ ॥ या विनसमुझे द्रव्यलिङ्गि मुनि, उग्रै तपन-कर भार भरो। नवग्रीवकपर्यन्त जाय चिर, फेर भवार्णवमाहिं परो ॥ आत० ॥ २ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञानचरनतप, येहि जगतमें सार नरो! । पूरव शिवको गये जाहिं अब, फिर जैहैं यह नियत करो ॥ आ० ॥ ३ ॥ कोटिग्रन्थको सार यही है, येही जिनवानी उचरो। दौल ध्याय अपने आतमको, मुक्तिरमा तव वेग वरो ॥ आ० ॥ ४ ॥

६७.

आप भ्रम विनाश आप आप जान पायो, कर्ण-धृत सुवर्ण जिमि चितार चैन थायो ॥ आप० ॥ टेक ॥ मेरो तन तनमय तन मेरो मैं तनको, त्रिकाल यों कुबोध नश सुबोधभान जायो ॥ आप० ॥१॥ यह सुजैनवैन ऐन, चिंतत पुनि पुनि सुनैन, प्रगटो अब भेद निजै,-निवेदगुन बढ़ायो । आप० ॥ २ ॥ योंही चित अचित मिश्र, ज्ञेय ना अहेय

---

१ घोर । २ भवसमुद्रमें । ३ हे पुरुषो । ४ निश्चय । ५ कानोंसे । ६ आत्मज्ञान ।

रूप, इंधन धनंज जैसे, स्वामियोग गायो। आप० ॥ ३ ॥ भँवर पोतें छुटत झटति, बांछित तट निकटत जिमि, मोह रागरुख हर जिय, शिवतट निकटायो ॥ आप० ॥ ४ ॥ विमल सौख्यमय सदीव, मैं हूँ मैं नहिं अजीव, द्योत होत रज्जुमय, भुजंग भय भगायो। आप० ॥ ५ ॥ यों ही जिनचंद सुगुन, चिंतत परमारथ चुन, दौल भाग जागो जब, अल्पपूर्व आयो। आप० ॥ ६ ॥

६८.

विषेयोंदा मद भानै, ऐसा है कोई वे ॥ टेक ॥ विषय दुःख अर दुखफल तिनको, यों नित चित्त न ठानै। विषयोंदा० ॥ १ ॥ अनुपयोग उपयोग स्वरूपी, तनचेतनको मानै। विषयों० ॥ २ ॥ बरनादिक रागादि भावतैं, भिन्नरूप तिन जानै। विषयों० ॥३॥ स्वपर जान रुषराग हान, निजमें निज परनति सानै। विषयों० ॥ ४ ॥ अंतर बाहरको परिग्रह तजि, दौल बसै शिवथानै। विषयों०॥५॥

---

१ अग्नि। २ उत्तम योग। ३ जहाज। ४ शीघ्र ही। ५ विषयोंका (पंजाबी)।

६९.

और सबै जगद्वन्द मिटावो, लौ लावो जिन-आगमओरी । और० ॥ टेक ॥ है असार जग-द्वन्द्व बंधकर ये कछु गरज न सारत तोरी । कमला[1] चपला[2] यौवन सुरधनु[3], स्वजन पथिकजन क्यों रति जोरी ॥ और० ॥१॥ विषयकषाय दुखद दोनों भव, इनतैं तोर नेहकी डोरी । परद्रव्यनको तू अपनावत, क्यों न तजे ऐसी बुधि भोरी ॥ और० ॥ २ ॥ बीत जाय सागरथिति सुरकी, नर-परजायतनी अति थोरी । अवसर पाय दौल अब चूको, फिर न मिलै मनि सागरबोरी॥और०॥३॥

७०.

और अबै न कुदेव सुहावैं, जिन! थांके चरनन रति जोरी ॥ और० ॥ टेक ॥ कामक्रोधवश गहैं अशन आसि, अंकें[4] निशंक धरैं तिय गोरी । औ-रनके किम भाव सुधारैं, आप कुभाव-भार-धर-धोरी ॥ और० ॥ १ ॥ तुम विनमोह अकोह[5]

---

१ लक्ष्मी । २ बिजली । ३ इन्द्रधनुष । ४ गोदमें । ५ क्रोधक्षोभरहित ।

छोहविन, छके शांतरस पीय कटोरी । तुम तज सेयँ अमेयँ भरी जो, जानत हो विपदा सब मोरी ॥ और ॥ २ ॥ तुम तज तिनैं भजे शठ जो सो, दाख न चाखत खात निबोरी । हे जगतार उधार दौलको, निकट विकट भवजलधि-हिलोरी ॥ और० ॥ ३ ॥

७१.

कबधों मिलैं मोहि श्रीगुरु मुनिवर, करि हैं भवदधि पारा हो । कबधों ॥ टेर ॥ भोगउदास जोग जिन लीनों, छांड़ि परिग्रहभारा हो । इंद्रियदमन वमन मद कीनो, विषय कषाय निवारा हो ॥ कबधों० ॥ १ ॥ कंचन काँच बराबर जिनके, निंदक वंदक सौंरा हो । दुर्धर तप तपि सम्यक निज घर, मन वच तनकर धारा हो ॥ कबधों० ॥ २ ॥ ग्रीषम गिरि हिम सरितातीरें, पावस तरुतर ठारा हो । करुणाभीने चीन त्रस थावर,

१ सेवा । २ अपरिमित । ३ भवसमुद्रकी लहरें । ४ सब । ५ 'लीन' ऐसा भी पाठ है ।

ईर्यापंथ समारा हो ॥ कबधों० ॥ ३ ॥ मारमार[1] व्रतधार शील दृढ, मोहमहामल टारा हो। मास छमास उपास वास वन, प्रासुक करत अहार[2] हो ॥ कबधों० ॥ ४ ॥ आरत[3]रौद्र[4]लेश नहिं जिनके, धर्म[5] शुक्ल[6] चित धारा हो। ध्यानारूढ गूढ निजआतम, शुधउपयोग विचारा हो ॥ कबधों० ॥ ५॥ आप तरहिं औरनको तारहिं, भवजलसिंधु-अपारा हो। दौलत ऐसे जैनजातिनको, नितप्रति धोक हमारा हो ॥ कबधों० ॥ ६ ॥

७२

कुमति कुनारि नहीं है भली रे, सुमति नारि सुंदर गुनवाली ॥ कुमति० ॥ टेक ॥ वासों विरचि रचौ नित यासों, जो पावो शिवधाम गली रे। वह कुबजा दुखदा यह राधा, बाधाटारन करन रली रे ॥ कुमति० ॥ १ ॥ वह कारी परसों रति ठानत, मानत नाहिं न सीख भली रे। यह गोरी

१ कामदेवको मारकर। २ 'धर तप तपि समकित गहि निज चित, करि मनवचतन सारा हो। मासमास उपवास वासवन' ऐसा भी पाठ है। ३ आर्त-ध्यान। ४ रौद्रध्यान। ५ धर्मध्यान। ६ शुक्लध्यान।

चिद्‌गुणसहचारिनि, रमत सदा स्वसमाधि–थली रे ॥ कुमति० ॥ २ ॥ वा सँग कुथल कुयोनि वस्यो नित, तहाँ महादुख–बेल फली रे। या सँग रसिक भविनकी निजमें, परिनति दौल भई न चली रे ॥ कुमति० ॥ ३ ॥

७३

गुरु कहत सीख इमि बार बार, विषसमविषय-नको टार टार ॥ गुरु० ॥ टेक ॥ इन सेवत अनादि दुख पायो, जनममरन बहु धाराधार। गुरु० ॥ १ ॥ कर्माश्रित बाधाजुतफाँसी, बंधबढा-वन द्वंदकार। गुरु० ॥ २ ॥ ये न इन्द्रिके तृप्ति-हेतु जिमि, तिसै न बुझावत क्षारवार। गुरु० ॥ ॥ ३ ॥ इनमें सुख कलपना अबुधके, बुधजन मानत दुख प्रचार। गुरु० ॥ ४ ॥ इन तजि ज्ञान-पियूष चख्यो तिन, दौल लही भववारपार। गुरु० ॥ ५ ॥

---

१ ज्ञानगुणसहचारिणी। २ फिर चलायमान न हुई। ३ तृषा–प्यास। ४ खारापानी।

७४

घडि घडि पल पल छिन छिन निशदिन, प्रभुजीका सुमरन कर ले रे । घडि० ॥ टेक ॥ प्रभुसुमरेतैं पाप कटत हैं, जनममरनदुख हर ले रे । घडि घडि० ॥ १ ॥ मनवचकाय लगाय चरनचित, ज्ञान हिये बिच धर लेरे । घडि घडि० ॥ ॥ २ ॥ दौलतराम, धर्मनौका चढि, भवसागरतैं तिर ले रे । घडि घडि० ॥ ३ ॥

७५.

चिन्मूरतदृग्धारीकी मोहि, रीति लगत है अटापटी[1] ।चिन्मू० ॥ टेक ॥ बाहिर नारकिकृत दुखभोगे, अंतर सुखरस गटागटी । रमत अनेक सुरनिसँग पै तिस, परनतितैं नित हटाहटी[2] ॥ चिन्मू० ॥ १ ॥ ज्ञानविरागशक्तितैं विधिफलें[3], भोगत पैं विधि घटाघटी ॥ सदननिवासी तदपि उदासी, तातैं आस्रव छटाछटी[4] ॥ चिन्मू० ॥ २ ॥ जे भवहेतु अबुधके ते तस, करत बन्धकी झटा-

---

[1] अटपटी । [2] दूरपना । [3] कर्मफल । [4] न्यूनपना ।

अटी। नारक पशु तिय षंढ विकलत्रय, प्रकृतिनकी है कटाकटी ॥ चि० ॥ ३ ॥ संयम धर न सकै पै संयम, धारनकी उर चटाचटी । तासु सुयशगुनकी दौलतके, लगी रहै नित रटारटी॥चि०॥४॥

७६

चेतन यह बुधि कौन सयानी, कही सुगुरु हित सीख न मानी ॥ टेक ॥ कठिन काकताली ज्यों पायो, नरभव सुकुल श्रवण जिनवानी । चेतन० ॥ १ ॥ भूमि न होत चांदनीकी ज्यों, त्यों नहिं धनी ज्ञेयको ज्ञानी । वस्तुरूप यों तू यों ही शठ, हटकर पकरत सोंज विरानी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ ज्ञानी होय अज्ञान रागरुष,—कर निज सहज स्वच्छता हानी । इन्द्रिय जड तिन विषय अचेतन, तहाँ अनिष्ट इष्टता ठानी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ चाहै सुख दुख ही अवगाहै, अब सुनि विधि जो है सुखदानी । दौल आपकरि आप आपमें, ध्या—

१ नपुंसक । २ काकतालीय न्यायसे अर्थात् जैसे तालवृक्षसे तालफलका टूटना और कागका उसे आकाशमें ही पा लेना कठिन है वैसे । ३ 'चहोरे', ऐसा भी पाठ है ।

य लाय लय समरससानी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७७

चेतन कौन अनीति गही रे, न मानै सुगुरु कही रे । चेतन० ॥ जिन विषयनवश बहु दुख पायो, तिनसों प्रीति ठही रे । चेतन० ॥ १ ॥ चिन्मय है देहादि जडनसों, तो मति पागि रही रे । सम्यग्दर्शनज्ञानभाव निज, तिनको गहत नहीं रे ॥ चेतन० ॥ २ ॥ जिनवृष पाय विहाय रागरुष, निजहित हेत यही रे । दौलत जिन येह सीख धरी उर, तिन शिव सहज लही रे ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

७८

चेतन तैं यों ही भ्रम ठान्यों, ज्यों मृग मृगतृष्णा जल जान्यों । चेतन० ॥ टेक ॥ ज्यों निशितममें निरख जेवरी, भुजग मान नर भय उर आन्यों ॥ चेतन० ॥ १ ॥ ज्यों कुध्यान वश महिष मान निज फाँसि नर उरमाहीं अकुलान्यों । त्यों चिर मो-

---

१ '[illegible] नहीं,' ऐसा भी पाठ है ।

ह अविद्या पेन्यो, तेरो तैं ही रूप भुलान्यो ॥ चेतन० ॥२॥ तोय तेल ज्यों मेल न तनको, उपज खेपतमें सुख दुख मान्यो । पुनि परभावनको करता है तैं तिनको निज कर्म पिछान्यो ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ नरभव सुथल सुकुल जिनवानी, काललब्धिबल योग मिलान्यो । दौल सहज भज उदासीनता तोष-रोष दुखकोष जु भान्यो ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७९

चेतन अब धरि सहजसमाधि, जातें यह विनशै भव-व्याधि । चेतन० ॥ टेर ॥ मोह ठग्यो-री खायके रे, परको आपा जान । भूल निजातम ऋद्धिको तैं, पाये दुःख महान ॥ चेतन० ॥ १ ॥ सादि अनादि निगोद दोयमें, पर्यो कर्मवश जाय । श्वासउसासमझार तहाँ भव, मरन अठारह थाय ॥ चेतन० ॥ २ ॥ काल अनंत तहाँ यों वीत्यो, जब भइ मंद कषाय । भू जल अनिल अनल पुन तरु है, काल असंख्य गमाय ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

१ मिथ्यात्व । २ रागद्वेष । ३ नाश किया । ४ अग्निकाय । ५ वायुकाय ।

क्रमक्रम निकसि काठिन तैं पाई, शंखादिक परजा-
य। जल थल खेचर होय अघ ठाने, तस वश श्वभ्रं लहाय॥ चेतन०॥ ४॥ तितैं सागरलों बहु
दुख पाये, निकस कबहुं नर थाय। गर्भजन्म-शि
शु-तरुण-वृद्ध दुख, सहे कहे नाहिं जाय। चेतन०
॥५॥ कबहूँ किंचित पुण्यपाकतैं, चउविधिदेव क-
हाय। विषयआश मन त्रास लही तहँ, मरनसम-
य विललाय॥ चेतन०॥ ६॥ यों अपार भवखार
वारमें, भ्रम्यो अनंते काल। दौलत अव निजभा-
व-नाव चढि, लै भवाब्धिकी पाल॥ चेतन०॥७॥

८०

जिन रागदोषत्यागा वह सतगुरू हमारा।
जिन राग०॥ टेक॥ तज राजऋद्ध तृणवत
निज काज संभारा। जिन राग ०॥ १॥ रहता
है वह वनखंडमें धरि ध्यान कुठारा। जिन
मोह महा तरुको जडमूल उखारा॥ जिन राग०
॥ २॥ सर्वांग तज परिग्रह दिगअंबर धारा।

१ खेचर (पक्षी)। [illegible]। ३ नहीं। ४ यह पद दौलत[illegible] नहीं मालूम होता, [illegible] पड़ता है।

अनंतज्ञानगुनसमुद्र, चारित भँडारा॥ जिन राग० ॥ ३॥ शुक्लाग्निकोप्रजालके वसुकानन जारा। ऐसे गुरूको दौल है नमोऽस्तुहमारा॥ जिनराग ॥४॥

८१

चिदरायगुन मुनो सुनो, प्रशस्त गुरुगिरा। समस्त तजविभाव, हो स्वकीयमें थिरा। चिद० ॥ टेक ॥ निजभावके लखाव विन, भवाब्धिमें परा। जामन मरन जरात्रिदोष अग्निमें जरा॥ चिद० ॥ १ ॥ फिर सादि औ अनादि दो, निगोदमें परा। तहँ अंकके असंख्यभाग, ज्ञान ऊबरा ॥ चिद० ॥ २ ॥ तहाँ भव अंतर मुहूर्तके, कहे गनेश्वरा। छ्यासठ सहस त्रिशत छतीस, जन्मधर मरा॥ चिद० ॥ ३ ॥ यों वशि अनंतकाल फिर, तहाँतें नीसरा। भूजल अनिल अनल प्रतेक, तरुमें तन धरा ॥ चिद० ॥ ४ ॥ अंघरीर कुंथु कान, मच्छ अवतरा। जल थल खचर कुनर नरक, असुर उपज मरा ॥ चिद० ॥ ५ ॥ अबके सुथल सुकुल [illegible]ग, बोध लहि

स्वरा । दौलत त्रिरत्नसाध लाध, पद अनुत्तरा ॥ चिद० ॥ ६ ॥

८२

चित चिंतकैं चिदेश[1] कब, अशेष[2] पर[3] वमूं[4] । दुखदा अपार विधि[5] दु[6]चार,-की चमूँ[7] दमूँ ॥ चित चि० ॥ टेक ॥ ताजि पुण्यपाप थाप आप, आप[8]में रमूँ[9] । कब राग-आग शर्म[10]-बाग,-दाघनी शमूं[11] ॥ चित-चिंतकैं० ॥ १ ॥ दृग[12]ज्ञानभानतैं मिथ्या, अज्ञान-तम दमूँ । कब सर्व जीव प्राणि[13]भूत, सत्त्वसों छमूँ ॥ चित चिंतकैं० ॥ २ ॥ जल[14]मल्ललिप्त-कल[15] सुकल[16]-सुबल्ल परिनमूँ । दलकें त्रिशल्ल[17]मल्ल कब, अटल्ल-पद[18] पमूँ ॥ चित चिंतकैं० ॥ ३ ॥ कब ध्याय अज अमरको फिर न, भवविपिन भमूँ । जिन पूर कौल[19] दौलको यह, हेतु हौं नमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ ४ ॥

---

१ आत्मा । २ सम्पूर्ण । ३ परपदार्थ । ४ वमन कर दूं—छोड दूं । ५ कर्म । ६ दो चार अर्थात् आठ । ७ फौज । ८ आत्मामें । ९ रमण करूं । १० कल्याणरूप बागको जलानेवाली । ११ शमन करूँ, शांत—करूँ । १२ दर्शन और ज्ञानरूपी सूर्यसे । १३ दशप्राणमयी । १४ जड़ । १५ शरीर । १६ शुक्लध्यानके बलसे । १७ माया, मिथ्यात, निदानरूप तीन शल्यरूपी पहलवान । १८ मोक्ष-पद । १९ प्रतिज्ञा ।

८३

जिनछवि लखत यह बुधि भयी । जिन० ॥ टेक ॥ मैं न देह चिदंकमय तन, जड फरसरसमयी ॥ जिनछवि० ॥१॥ अशुभशुभफल कर्म दुखसुख, पृथकता सब गयी । रागदोषविभावचालित, ज्ञानता थिर थयी ॥ जिनछवि० ॥२॥ परिगहन आकुलता दहन, विनशि शमता लयी । दौल पूरव-अलभ आनँद, लह्यो भवथिति जयी ॥ जिन०॥३॥

८४

जिनवैन सुनत, मोरी भूल भगी ॥ जिनवैन० ॥ टेक ॥ कर्मस्वभाव भाव चेतनको, भिन्न पिछानन सुमति जगी । जिन० ॥ १ ॥ जिन अनुभूति सहज ज्ञायकता, सो चिर रुष-तुष-मैल-पगी । स्यादवाद धुनि-निर्मल-जलतैं, विमल भई समभाव लगी ॥ जिन० ॥ २ ॥ संशयमोहभरमता विघटी, प्रगटी आतमसोंज सगी । दौल अपूरव मंगल पायो, शिवसुख लेन हौंस उमगी ॥जिन०॥३॥

१ पूर्वमें जिसका लाभ नहीं हुआ ऐसा । २ निजपरणति ।

८५

जिनवानी जान सुजान ! रे । जिनवानी० ॥ टेक ॥ लागरही चिरतैं विभावता, ताको कर अवसान रे । जिनवानी० ॥ १ ॥ द्रव्यक्षेत्र अरु कालभावकी, कथनीको पहिचान रे । जाहि पिछाने स्वपरभेद सब, जाने परत निदान रे । जिनवानी० ॥ २ ॥ पूरव जिन जानी तिनहीने, भानी संसृतबान रे । अब जाने अरु जानैंगे जे, ते पावैं शिवथान रे ॥ जिनवानी० ॥३॥ कह 'तुषमाष' मुनी शिवभूती, पायो केवल-ज्ञान रे । यों लखि दौलत सतत करो भवि, चिद्वचनामृतपान रे॥ जिन०॥४॥

८६

जम आन अचानक दाबैगा, जम आन०॥ टेक॥ छिनछिन कटत घटत थिति ज्यों जल, अंजुलिको झर जावैगा॥ जम आन० ॥ १ ॥ जन्मतालतरुतैं पर जियफल, कों लग बीच रहावैगा । क्यों न

१ नाश की । २ भ्रमणकी आदत । ३ आयु । ४ [illegible] ताड़वृक्षके पर लगके जीवरूपी फल बीचमें कबतक रहेगा ? वह तो नीचे पड़ेगा ही, अर्थात् मरेगा ।

विचार करै नर आखिर, मरन महीमें आवैगा ॥ जम आन० ॥२॥ सोवत मृत जागत जीवन ही, श्वासा जो थिर थावैगा। जैसे कोऊ छिपै सदासों, कबहूँ अवशि पलावैगा ॥ जम आन० ॥ ३ ॥ कहूँ कबहुँ कैसे हू कोऊ, अंतकसे न बचावैगा। सम्यकज्ञानपियूष पियेसों, दौल अमरपद पावैगा ॥ जम आन० ॥ ४ ॥

८७

छाँडत क्यों नहिं रे, हे नर! रीति अयानी। बारबार सिख देत सुगुरु यह, तू दे आनाकानी॥ छांडत० ॥ टेक ॥ विषय न तजत न भजत बोध व्रत, दुखसुखजाति न जानी। शर्म चहै न लहै शठ ज्यों घृत,–हेत विलोवत पानी॥ छांडत० ॥ १ ॥ तन धन सदन स्वजनजन तुझसों, यह परजाय विरानी। इन परिनमन-विनश-उपजनसों, तैं दुख सुखकर मानी ॥ छांडत० ॥ २ ॥ इस अज्ञानतैं चिरदुख पाये, तिनकी अकथ

---

१ आवेगा। २ यमराजसे। ३ सम्यग्ज्ञानरूपी अमृत।

कहानी। ताको तज दृग-ज्ञान-चरन भज, निज-परनति शिवदानी॥ छाँडत०॥ ३॥ यह दुर्लभ नरभव सुसँग लहि, तत्त्व-लखावन वानी। दौल न कर अब परमें ममता, धर समता सुखदानी॥ छांडत०॥ ४॥

८८

राचि रह्यो परमाहिं अयाने! तू अपनो रूप न पिछानै रे॥ राचि रह्यो०॥ टेक॥ अविचल चिनमूरत विनमूरत, सुखी होत तस ठानै रे॥ राचि रह्यो०॥ १॥ तन धन भ्रात तात सुत जननी, तू इनको निज जानै रे। ये पर इनहिं वियोगयोगमें, यों ही सुख दुख मानै रे॥ राचि०॥ २॥ चाह न पाये पाये तृष्णा, सेवत ज्ञान जघानै रे। विपतिखेत विधिबंधहेत पैं, जान विषय रस खानै रे॥ राचि०॥ ३॥ नरभव जिनसुतश्रवण पाय अब, कर निज सुहित सयानै रे। दौलत आतम-ज्ञान-सुधारस, पीवो सुगुरु बखानै रे॥ राचि रह्यो०॥ ४॥

८९

तू काहेको करत रति तनमें, यह अहितमूल जिम कारासदन । तू काहेको० ॥ टेक ॥ चरमपिहित पल-रुधिर-लिप्त मल,—द्वारस्रवे छिनछिनमें ॥ तू काहेको० ॥ १ ॥ आयु-निगड फँसि विपति भरै सो, क्यों न चितारत मनमें ॥ तू काहेको० ॥ २ ॥ सुचरन लाग त्याग अब याको, जो न भ्रमै भव-वनमें ॥ तू काहेको० ॥ ३ ॥ दौल देहसों नेह देहको,—हेतु कह्यो ग्रंथनमें ॥ तू काहेको० ॥ ४ ॥

९०

धन धन साधर्मीजन मिलनकी घरी, वरसत-भ्रम—तापहरन ज्ञानघनझरी ॥ टेक ॥ जाके विन पाये भवविपति अति भरी । निजपररहित अहितकी कछू न सुध परी ॥ धन० ॥ १ ॥ जाके परभाव चित्त सुथिरता करी । संशय भ्रम मोहकी सु वासना टरी ॥ धन० ॥ २ ॥ मिथ्या

१ कारागार-जहलखाना। २ चमड़ासे ढका हुई। ३ मांस। ४ आयुरूपी-बेड़ियोंमें।

गुरुदेवसेव टेव परिहरी । वीतरागदेव सुगुरुसेव उरधरी ॥ धन०॥ ३॥ चारों अनुयोग सुहितदेश[1] दिठपरी । शिवमगके लाह[2]की सुचाह विस्तरी ॥ धन ०॥ ४॥ सम्यक् तरुधरानि येह करनै-करि[3] हरी । भवजलको तरनि[4] समर-भुजग-विषजरी[5] ॥ धन० ॥ ५॥ पूरवभव या प्रसाद रमनि शिववरी । सेवो अब दौल याहि बात यह खरी ॥धन०॥ ६॥

९१

धनि मुनि जिनकी, लगी लौं[6] शिवओरनै[7] । धनि ॥ टेक ॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचरन-निधि, धरत हरत भ्रमचोरनै ॥ धनि ०॥ १॥ यथाजातमुद्राजुत सुंदर, सदन विजन[8] गिरिकोरनै । तृनकंचन अरि स्वजन गिनत सम, निंदन और निहोरनै[10] । धनि० ॥ २॥ भवसुखचाह सकल तजि बल साजि, करत द्विविध तप घोरनै । परमविरागभाव[11] पवितैं नित,

---

१ हितोपदेश । २ लाभकी । ३ इन्द्रियरूपी हाथियोंको सिंहके समान । ४ जहाज । ५ कामरूपी सर्पके विषको विषनाशक जड़ी । ६ लगन । ७ 'नै' विभक्ति सर्वत्र 'का' के अर्थमें है । ८ नमस्कार । ९ निर्जन । १० प्रार्थना करनेके । ११ परमवैराग्यकी भावना भाते ।

चूरत करम कठोरनै ॥ धनि० ॥ ३ ॥ छीन शरीर न हीन चिदानन, मोहत मोह झकोरनै । जग-तप-हर भवि-कुमुद-निशाकर मोदन दौल चकोरनै ॥ धनि० ॥ ४ ॥

९२

धनि मुनि जिन यह, भाव पिछाना ॥ धनि मुनि० ॥ टेक ॥ तनव्यय वांछित प्रापति मानी, पुण्यउदय दुख जाना । धनि० ॥ १ ॥ एकविहारी सकल ईश्वरता, त्याग महोत्सव माना । सब सुखको परिहार सार सुख, जानि रागरुषभाना ॥ धनि० ॥ २ ॥ चित्स्वभावको चिंत्य प्रान निज, विमल-ज्ञानदृगसाना । दौल कौन सुख जान लह्यो तिन, करो शांतिरसपाना ॥ धनि० ॥ ३ ॥

९३

धनि मुनि जिन आतमहित कीना । भव असार तन अशुचि विषय विष, जान महाव्रत

---

१ भव्यरूपी कुमोदिनीका चन्द्रमा । २ ऐश्वर्य । ३ सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन सहित ।

लीना ॥ धनि मुनि जिन आतमहित० ॥ टेक॥ एकाविहारी परिगहछारी, परिसहसहत अरी ना। पूरबतन तपसाधन मान न, लाज गनी परवीना॥ धनि मुनि० ॥ १ ॥ शून्य सदन गिर गहन गुफामें, पदमासन आसीना। परभावनतैं भिन्न आपपद, ध्यावत मोहविहीना ॥ धनि मुनि० ॥ ॥ २ ॥ स्वपरभेद जिनकी बुधि निजमें, पागी बाह्य लगी ना॥ दौल तास पदवारिजरजने किस अघ करे न छीना॥ धनि मुनि० ॥ ३ ॥

९४

निपट अयाना, तैं आपा न जाना, नाहक भरम भुलाना बे। निपट० ॥ टेक ॥ पीय अनादि मोहमद मोह्यो, परपदमें निज माना बे ॥ निपट० ॥ १ ॥ चेतन चिह्न भिन्न जडतासों, ज्ञानदरशरस-साना बे। तनमें छिप्यो लिप्यो न तदपि ज्यों, जलमें कँजदल माना बे ॥ निपट० ॥ २ ॥सकल

---

१ चरणरूपी कमलोंकी धूलिने। २ किसके। ३ पाप। ४ कमलपत्र।

भाव निजनिजपरनतिमय, कोइ न होय बिराना वे। तू दुखिया परकृत्य मानि ज्यों, नभताडन-श्रम[1] ठाना वे॥ निपट०॥ ३॥ अजगनमें[2] हरि[3] भूल अपनपो, भयो दीन हैराना वे। दौल सुगुरुधुनिसुनि निजमें निज, पाय लह्यो सुखथाना वे। निपट०॥४

९५

निजहितकारज करना भाई! निजहित कारज करना॥ टेक॥ जनममरनदुखपावत जातें, सो विधिबंध[4] कतरना। निज०॥ १॥ ज्ञानदरस अरु राग फरस रस, निजपरचिह्न भ्रमरना। संधिभेद बुधिछैनीतें[5] कर, निज गहि पर परिहरना॥ निजहित०॥ २॥ परिग्रही[6] अपराधी शंकै, त्यागी अभय विचरना। त्यों परचाह बंध दुखदायक, त्यागत सब सुख भरना॥ निजहित०॥ ३॥ जो भवभ्रमन न चाहे तो अब, सुगुरु सीख उर धरना।

१ आकाशको पीटने जैसा। २ बकरोंमें। ३ सिंह। ४ कर्मबन्ध। ५ बुद्धिरूपी छैनीसे निज और परका संधिभेद करना। ६ परिग्रहके धारी तथा परकी वस्तु ग्रहण करनेवाला चोर।

दौलत स्वरस सुधारस चाखो, जो विनसै भव-मरना ॥ निजहित० ॥ ४ ॥

९६

मनवचतन करि शुद्ध भजो जिन, दाव भला पाया । अवसर फेर मिलै नहिं ऐसा, यों सतगुरु गाया ॥ मनवच ० ॥ टेक ॥ वस्यो अनादिनि-गोद निकसि फिर, थावर देह-धरी । काल असंख्य अकाज गमायो, नेकु न समुझि परी ॥ मनवच० ॥ १ ॥ चिंतामनि दुर्लभ लहिये ज्यों, त्रसपर-जाय लही । लट पिपील अलि आदि जन्ममें, लह्यो न ज्ञान कहीं ॥ मनवच० ॥ २ ॥ पंचेंद्रिय पशु भयो कष्टतें, तहाँ न बोध लह्यो । स्वपरविवेकरहित विन संयम, निशदिन भार वह्यो ॥ मनवच० ॥ ३ ॥ चौंपथ चलत रतन लहिये ज्यों, मनुषदेह पाई । सुकुल जैनवृष सतसंगति यह, अतिदुर्लभ भाई ॥ मन० ॥४॥ यों दुर्लभ नरदेह कुधी जे, विषय-

१ नौका । २ मूर्ख ।

नसँग खोवैं। ते नर मूढ अज्ञान सुधारस, पाय पांव धोवैं ॥ मनवच० ॥ ५ ॥ दुर्लभनरभव पाय सुधी जे, जैनधर्म सेवैं। दौलत ते अनंत अविनाशी, सुख शिवका वेवैं[1] ॥ मनवचतन करि० ॥ ६ ॥

९७

मोहिडा रे, जिय! हितकारी ना सीख सम्हारै। भववन भ्रमत दुखी लखि याको, सुगुरु दयालु उचारै ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ विषय भुजंगम संग न छोडत, जो अनंतभव मारै। ज्ञानविराग पियूष न पीवत, जो भवव्याधि विडारै ॥ मोहि० ॥१॥ जाके संग दुरैं अपने गुन, शिवपद अंतरपारै। ता तनको अपनाय आप चिन,-मूरतको न निहारै ॥ मोहि० ॥ २ ॥ सुत दारा धन काज साज अघ, आपनकाज विगारै। करत आपको अहित आपकर, ले कृपान

१ जानें, अनुभव करें।

जेलदारे। मोहि० ॥३॥ सही निगोद नरककी वेदन, वे दिन नाहिं चितारे। दौल गई सो गई अब हू तर, धर दृग-चरन सम्हारे ॥ मोहिडा० ॥ ४ ॥

९८

मेरे कब ह्वै वा दिनकी सुघरी। मेरे०॥टेक॥ तनवि-नवसन असनविन वनमें, निवसों नासादृष्टिधरी। मेरे०॥१॥ पुण्यपापपरसों कब विरचों, परचों निजनिधि चिरविसरी। तज उपाधि सजि सहजसमाधी, सहों घाम-हिम-मेघ-झरी ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब थिरजोग धरों ऐसो मोहि, उपलै जान मृग खाज हरी। ध्यानकमान तान अनुभव-शर, छेदों किहि दिन मोह अरी ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ कब तृनकंचन एक गनों अरु, मनिजडितालय शैलदरी। दौलत सतगुरुचरनसेउं जो, पुरवो आश यहै हमरी ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

---

१ तलवार [illegible] २ धूप-शीत-वर्षा। ३ पत्थर। ४ ध्यानकी [illegible] अनुभवकी बाण। ५ रत्नजडित महल। ६ पर्वतकी [illegible]।

९९

लाल कैसे जावोगे? असरनसरन कृपाल, लाल०॥ टेक॥ इक दिन सरस वसंतसमयमें, केशवकी सब नारी। प्रभुप्रदच्छनारूप खडी हैं, कहत नेमि पर वारी॥ लाल०॥१॥ कुंकुम ले मुख मलत रुकमनी, रँग छिरकत गांधारी। सतभामा प्रभुओर जोरकर, छोरत है पिचकारी॥ लाल०॥२॥ ब्याह कबूल करो तो छूटो, इतनी अरज हमारी। ओंकार[1] कहकर प्रभु मुलके, छाँड दिये जगतारी॥ लाल०॥ ३॥ पुलकितवदन मंदना[2]पितु-भामिनि, निज निज सदन सिधारी। दौलत जादववंश[3]व्योमशशि, जयो जगत हितकारी॥ लाल०॥ ४॥

१००

शिवपुरकी डगर समरससों भरी, सो विषय-विरस-रुचि चिरविसरी। शिव०॥ टेक॥ सम्यक-दरश-बोध-व्रतमय भव,–दुखदावानल-मेघझरी।

---

१ स्वीकार। २ मगनमति—ऐसा भी पाठ है। [illegible]—मदन-प्रद्युम्न कामदेवके पिताकी अर्थात् श्रीकृष्णकी स्त्रियें। ३ '[illegible]' ऐसा भी पाठ है। यदुवंशरूपी आकाशके चन्द्रमा, नेमिनाथ [illegible]। ४ मार्ग।

शिवपुर० ॥ १ ॥ ताहि न पाय तपाय देह बहु, जनममरन करि विपति भरी। काल पाय जिनधुनि सुनि मैं जन, ताहि लहूं सोइ धन्य घरी ॥ शिव० ॥ २ ॥ ते जन धनि या माहिं चरत नित, तिन कीरति सुरपति उचरी। विषयचाह भवराह त्याग अब, दौल हरो रज[1]रहस[2]अरी॥ शिव०॥३॥

१०१

तोहि समझायो सौ सौ बार, जिया तोहि समझायो० ॥ टेक ॥ देख सुगुरुकी परहितमें रति, हितउपदेश सुनायो। सौ सौ बार० ॥ १ ॥ विषयभुजंग सेय दुख पायो, पुनि तिनसों लपटायो। स्वपदविसार रच्यो परपदमें, मदरत ज्यों बौरायो। सौ सौ बार० ॥ २ ॥ तन धन स्वजन नहीं हैं तेरे, नाहक नेह लगायो। क्यों न तजै भ्रम चाख समामृत[3], जो नित संत[4]सुहायो ॥ सौ सौ बार० ॥ ३ ॥ अब हू समुझि कठिन यह नरभव, जिन वृष[5] विना

१ चारघातिया कर्म। २ [illegible]। ३ समता रूपी अमृत। ४ जिन्होंने। ५ धर्म।

गमायो । ते विलखैं मनि डार उदधिमें, दौलतको पछतायो ॥ सौ सौ० ॥ ४ ॥

१०२

न मानत यह जिय निपट अनारी । सिखदेन सुगुरुहितकारी ॥ न मानत० ॥ टेक ॥ कुमति-कुनारिसंग रति मानत, सुमतिसुनारि विसारी । न मानत० ॥ १ ॥ नरपरजाय सुरेश चहैं सो, चखि विषविषय विगारी । त्याग अनाकुल ज्ञान चाह पर,-आकुलता विसतारी ॥ न मानत० ॥ २ ॥ अपनी भूल आप समतानिधि, भवदुख भरत भिखारी । परद्रव्यनकी परनतिको शठ, वृथा बनत करता[2]री ॥ न मानत० ॥ ३ ॥ जिस कषाय दव जरत तहां अभि,—लाषछटा घृत डारी । दुखसों डरैं करैं दुखकारन,—तैं नित प्रीतिकरा[3]री ॥ न मानत० ॥ ४ ॥ अतिदुर्लभ जिनवैन श्रवनकरि, संशयमोह निवारी । दौल स्वपर हित अहित जानके, होवहु शिवमगचारी ॥ न मानत० ॥ ५ ॥

---

१ पुद्गलसम्बन्धी । २ कर्ता ३ पापी ।

१०३

हम तो कबहूं न हित उपजाये। सुकुल-सुदेव-सुगुरु-सुसंगहित, कारन पाय गमाये। हम तो० ॥ टेर ॥ ज्यों शिशु नाचत आप न माचत[1], लखनहार बौराये। त्यों श्रुत बांचत[2] आप न राचत, औरनको समुझाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ सुजसलोहकी[3] चाह न तज निज, प्रभुता लखि हरखाये। विषय तजे न रंजे[4] निजपदमें, परपद अपद लुभाये॥ हम तो० ॥ २ ॥ पापत्याग जिन-आप[5] न कीन्हों, सुमनचापतप-ताये[6]। चेतन तनको कहत भिन्न पर, देह सनेही थाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ यह चिर भूल भई हमरी अब, कहा होत पछताये। दौल अजों भवभोग रचौ मत, यों गुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

१०४

हम तो कबहूं न नि[illegible]न भाये। तन निज मान जान तनदुखसुख-,में विलखे[7] हरखाये। हम

१ मग्न होते। २ बांचते पढ़ते। ३ सुयशके कामकी। ४ रचे—मग्न हुये। ५ [illegible] देवका पाप। ६ सुमनचाप अर्थात् कामदेवकी तपनसे तप्त। ७ विलाप किए।

तो० ॥ टेक ॥ तनको गरन मरन लखि तनको, धरन मान हम जाये । या भ्रमभौंर परे भवजल-चिर, चहुंगति विपत लहाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ दरशबोधव्रतसुधा न चाख्यो, विविध विषय-विष खाये । सुगुरु दयाल सीख दई पुनि पुनि, सुनि सुनि उर नहिं लाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ बहिरा-तमता तजी न अन्तर-,दृष्टि न ह्वै निज ध्याये । धाम-काम-धन-रामाकी नित, आश-हुताश जलाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ अचल अनूप शुद्ध चिद्रूपी सबसुखमय मुनि गाये । दौल चिदानँद स्वगुन मगन जे, ते जिय सुखिया थाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

१०५

हम तो कबहूं न निज घर आये । परघर फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये । हम तो० ॥ टेक ॥ परपद निजपद मानि मगन ह्वै, परपरनीत लपटाये । शुद्ध बुद्ध सुखकंद मनोहर, चेतनभाव न भाये । हम तो० ॥ १ ॥ नर पशु

१ उत्पन्न हुए । आशारूपी अग्निमें ।

देव नरक निज जान्यो, परजय-बुद्धि लहाये।
अमल अखंड अतुल अविनाशी, आतमगुन नहिं
गाये ॥ हम तो० ॥२॥ यह बहु भूल भई हमरी
फिर, कहा काज पछताये। दौल तजो अजहूँ विष-
यनको, सतगुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥३॥

१०६

मानत क्यों नहिं रे, हे नर! सीख सयानी। भयो
अचेत मोह-मद पीकें, अपनी सुधि विसरानी ॥
॥ टेक ॥ दुखी अनादि कुबोधअवृततैं, फिर तिनसों
रति ठानी। ज्ञानसुधा निजभाव न चाख्यो, परप-
रनति मतिसानी ॥ मानत० ॥ १ ॥ भव असारता
लखै न क्यो जहँ, नृप ह्वै कृमि विट-थानी। सधन
निधन नृप दास स्वजन रिपु, दुखिया हरिसे
प्रानी ॥ मानत० ॥ २ ॥ देह येह गँद-गेह नेह
इस, हैं बहु विपतिनिसानी। जड मलीन छिनछीन
करमकृत,-बंधन शिवसुखहानी ॥ मानत० ॥ ३ ॥
चाह-ज्वलन इंधन-विधि-वन-घन, आकुलता कुल-

---

१ कीड़ | २ विष्ठाके स्थानमें। ३ [illegible] सरीखे। ४ रोगका घर।

खानी। ज्ञान-सुधासर-शोषनरवि ये, विषय अमित मृतुदानी ॥ मानत० ॥ ४ ॥ यों लखि भव-तन-भोग विरचिकरि, निजहित सुन जिनवानी, तज रुषराग दौल अब, अवसर, यह जिनचंद्र बखानी ॥ मानत० ॥ ५ ॥

१०७

जानत क्यों नहिं रे, हे नर आतमज्ञानी। जानत०॥ टेक॥ रागदोष पुद्गलकी संपति, निहचै शुद्धनिसानी। जानत० ॥१॥ जाय नरकपशुनरसुरगतिमें, यह परजाय विरानी। सिद्धसरूप सदा अविनाशी, मानत विरले प्रानी॥ जानत०॥२॥ कियो न काहू हरै न कोऊ, गुरु-शिख कौन कहानी। जनममरन-मलरहित विमल हैं, कीच विना जिमि पानी॥ जानत ०॥३॥ सारपदारथ है तिहुंजगमें नहिं क्रोधी नहिं मानी। दौलत सो घटमाहिं विराजै, लखि हूजे शिवथानी ॥ जानत० ॥ ४ ॥

१०८

हे हितवांछक प्रानी रे, कर यह रीति सयानी।

---

१ साधु।

हे हित० ॥ टेक ॥ श्रीजिनचरनाचितार धार गुन, परम विराग विज्ञानी । हे हित० ॥ १ ॥ हरन भयामय[1] स्वपरदयामय, सरधो वृष[2] सुखदानी। दुविध उपाधि बाध शिवसाधक, सुगुरु भजो गुणथानी॥ हे० ॥२॥ मोह-तिमिर-हर मिहँर[3] भजो श्रुत, स्यात्पद जास निशानी। सप्ततत्त्व नव अर्थ विचारहु, जो बरने जिनबानी ॥ हे हित० ॥३॥ निज पर भिन्न पिछान मान पुनि, होहु आप सरधानी। जो इनको विशेष जानन सो, ज्ञायकथा मुनि मानी ॥ हे हित० ॥ ४ ॥ फिर व्रत समिति गुपति सजि अरु तज, प्रवृत्ति शुभास्रवदानी । शुद्ध स्वरूपाचरन लीन है, दौल वरो शिवरानी ॥ हे हित० ॥ ५ ॥

१०९

हे नर भ्रमनींद क्यों न छाँडत दुखदाई । सोवत-चिरकाल सोंज, आपनी ठगाई ॥ हे नर०॥ टेक ॥

---

१ डर और रोग । २ धर्म । ३ सूर्य ।

मूरख[1] अघ कर्म कहा, भेद नहिं मर्म लहा, लागे दुखज्वालाकी न, देहके तताई ॥ हे नर०॥१॥ जमके रव बाजते, सुभैरव अति गाजते, अनेक प्रान त्यागते, सुनै कहा न भाई ॥ हे नर० ॥ २ ॥ परको अपनाय आप, रूपको भुलाय हाय, करनविषय दारु जार, चाहदौं बढाई ॥ हे नर० ॥ ३ ॥ अब सुन जिनबानि, राग द्वेषको जघान, मोक्ष रूप निज पिछान, दौल भज विरागताई ॥ हे नर० ॥४॥

११०

प्रभु थारी आज महिमा जानी, प्रभु थारी० ॥ टेक ॥ अबलौं मोह महामद पिय मैं, तुमरी सुधि विसरानी। भाग जगे तुम शांति छवी लखि, जड़ता नींद बिलानी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जगविजयी दुखदाय रागरुष, तुम तिनकी थिति भानी। शांतिसुधासागर गुनआगर, परमविराग विज्ञानी। प्रभु० ॥ २ ॥ समवसरन अतिशय कमलाजुत, पै

---

१ 'सुनहर अघ करम थान' 'भेदै नहिं मरमथान' ऐसा भी पाठ है।

निर्ग्रन्थ निदानी। क्रोधविना दुठ मोह विदारक, त्रिभुवन पूज्य अमानी। प्रभु० ॥ ३ ॥ एकस्वरूप सकलज्ञेयाकृत, जग-उदास जग-ज्ञानी। शत्रुमित्र सबमें तुम सम हो, जो दुखसुख फल थानी ॥ ४ ॥ परम ब्रह्मचारी है प्यारी, तुम हेरी शिवरानी। है कृतकृत्य तदपि तुम शिवमग, उपदेशक अगवानी ॥ ५ ॥ भई कृपा तुमरी तुममेंतैं, भक्ति सु मुक्ति निसानी। है दयाल अब देहु दौलको, जो तुमने कृति ठानी ॥ ६ ॥

१११

तुम सुनियो श्रीजिननाथ अरज इक मेरी जी। तुम० ॥ टेक ॥ तुम बिन हेत जगत उपकारी, वसु कर्मन मोहि कियो दुखारी, ज्ञानादिक निधि हरी हमारी द्यावो सो निधि ममके जी ॥ तुम सुनि० ॥ १ ॥ मैं निज भूलि तिनहि सँगलाग्यो, तिन कृत करन-विषयरस पाग्यो, तातैं जन्म-जरा दव-दाग्यो, कर समता सम नेरी जी ॥ तुम सु०

॥ २ ॥ वे अनेक प्रभु मैं जु अकेला, चहुंगति विपतिमाहिं मोहि पेला, भाग जगे तुमसों भयो भेला, तुम हो न्यावनिवेरी जी ॥ तुम सु० ॥ ३ ॥ तुम दयाल बेहाल हमारो, जगतपाल निज विरद समारो, ढील न कीजे बेग निवारो, दौलतनी भव फेरी जी ॥ तुम सु० ॥ ४ ॥

११२

अरे जिया जग धोखेकी टाटी । अरे० ॥ टेक ॥ झूठा उद्यम लोग करत हैं, जिसमें निशदिन घाटी । अरे० ॥ १ ॥ जान बूझके अन्ध बने हैं, आंखन बांधी पाटी ॥ अरे० ॥ २ ॥ निकलि जांयगे प्राण छिनकमें, पड़ी रहेगी माटी ॥ अरे० ॥ ३ ॥ दौलतराम समझ मन अपने, दिलकी खोल कपाटी । अरे० ॥ ४ ॥

११३

जय वीर जिनवीर जिनचंद कलुषनिकंद मुनिहृदसुखकंदा । जय वीर ० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनंद

१ इस भजनके प्रत्येक चरणके अन्तमें "हे" लगानेसे इकतीसा कवित्त बन जाता है।

त्रिभुवनको दिनेन्दचन्द, जा वचकिरन भ्रम तिमिरनिकंद । जय वीर ॥ १ ॥ जाके पद अरविन्द सेवत सुरेंद वृंद, जाके गुन रटत कटत भवफंद । जय वीर० ॥ २ ॥ जाकी शान्ति मुद्रा निरखत हरखत रिखि, जाके अनुभवत लहत चिदानन्द। जय वीर०॥३॥ जाके घातिकर्म विघटत प्रघटत भये, अनन्त दरस बोध-वीरज अनन्द । जय वीर० ॥ ४ ॥ लोकालोकज्ञाता पै स्वभावरत राता प्रभु, जगको कुशलदाता त्राता पैं अद्वंद । जय वीर० ॥ ५ ॥ जाकी महिमा अपार गणी न सके उचार, दौलत नमत सुख चहत अमंद ॥ जय वीर० ॥ ६ ॥

जकड़ी ११४

अब मन मेरा बे, सीखवचन सुन मेरा । भजि जिनवरपद बे जो विनशै दुख तेरा ॥ विनशै दुख तेरा भव[1]वनकेरा, मनवचतन जिनचरन भजो। पंचे[2]करन वश राख सुज्ञानी, मिथ्यामतमग दौर

१ संसाररूपी वनका । २ पांच इन्द्रियां ।

तजो ॥ मिथ्यामतमगपागि अनादितैं, तैं चहुंगति कीन्हा फेरा । अब हू चेत अचेत होय मत, सीख बचन सुनि मन मेरा ॥ १ ॥ इस भववनमें बे, तैं साता नहिं पाई । वसुविधिवश है बे, तैं निज सुधि बिसराई ॥ तैं निज सुधि बिसराई भाई, तातैं विमल न बोध लहा । परपरनतिमें मगन भयो तू, जन्म-जरा-मृत-दाह दहा ॥ जिनमत सार-सरोवरकूं अव,-गाहि लागि निजचिंतनमें । तो दुखदाह नशै सब नातर, फेर बसै इस भववनमें ॥ ॥ २ ॥ इस तनमें तू बे, क्या गुन देख लुभाया । महा अपावन बे, सतगुरु याहि बताया ॥ सत-गुरु याहि अपावन गाया, मलमूत्रादिकका गेहा । कृमि-कुल-कलित लखत घिन आवै, यासों क्या कीजे नेहा ॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परनति शिवमगसाधनमें । तो दुखदंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोग शोकके दानी । शुभगति रोकन बे, दुर्गति-पथ-अ-

गवानी ॥ दुर्मतिपथअगवानी हैं जे, जिनकी लगन लगी इनसों। तिन नानाविधि विपति सही है, विमुख भया निज सुख तिनसों ॥ कुंजर[1] झख[2] अलि[3] शलभ[4] हिरन इन, एकअक्षवश[5] मृत्यु लही। यातें देख समझ मनमाहीं, भवमें भोग भले न सही ॥ ॥ ४ ॥ काज सरै तब बे, जब निजपद आराधै। नशै भवावलि[6] बे, निराबाधपद लाधै ॥ निराबाधपद लाधै तब तोंहि, केवल दर्शन ज्ञान जहाँ। सुख अनन्त अतिइन्द्रियमंडित, वीरज अचल अनंत तहाँ ॥ ऐसा पद चाहै तो भज निज[7], बारबार अब को उचरै। दौल मुख्य उपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥ ५॥

जकड़ी ११५

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं, शारद अंबा चित लाऊं। द्वैविधि-परिग्रह -परिहारी, गुरु नमहुं स्वपराहितकारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरु,

---

१ हाथी। २ मछली। ३ भौंरा—भ्रमर। ४ पतंग। ५ एक एक इंद्रियके वश। ६ भवोंका समूह। ७ 'जिन' भी पाठ है।

परख निज उर लाइये। दुखदाय कुपथ विहाय शिवसुख,–दाय जिनवृष ध्याइये॥ चिरतैं कुमग पागि मोहठगकर, ठग्यौ भव[1]-कानन पर्यो। ल्यों-लीस-द्विकलख जोनिमें[2], जर-मरन-जामन-दव[3] जर्यो॥१॥ जब मोहरिपु दीन्हीं घुमरिया, तसवश निगोदमें परिया। तहाँ स्वास एकके माहीं, अष्टादश मरन लहाहीं॥ लहि मरन अन्तमुहूर्तमें, छ्यासठसहस शत तीन ही। षटतीस काल अनंत यों दुख, सहे उपमा ही नहीं॥ कबहूं लही वर आयु छिति[4]-जल[5], पवन-पावक-तरुतणी। तसु भेद किंचित कहूं सो सुन, कह्यौ गौतमगणी॥२॥ पृथिवी द्वय भेद बखाना, मृदु माटी कठिन पखाना। मृदु द्वादशसहस बरसकी, पाहन बाईस सहसकी॥ पुनि सहस सात कही उदेक त्रय, सहसवर्ष समीरकी। दिन तीन पावक दशसहस तरु, प्रमित नाश सुपीरकी॥ विनघात

---

१ संसाररूपी वन। २ चौरासी लाख योनि। ३ वृद्धावस्था, मृत्यु, जन्मरूपी अग्निमें जला। ४ पृथ्वी। ५ पानी।

सूक्ष्म देहधारी, घातजुत गुरुतन लह्यो । तहँ खनन तापन जलन व्यंजन, छेद भेदन दुख सह्यौ ॥२ शंखादि दुइंद्री प्रानी, थिति द्वादशवर्ष बखानी । थूकादि तिइंद्री हैं जे, वासर उनचास जियें ते ॥ जीवें छमास अलीप्रमुख, व्यालीससहस उरगतनी । खगकी बहत्तरसहस, नवपूर्वांग सरिसृपकी भनी ॥ नर मत्स्य पूरवकोटकी थिति, करमभूमि बखानिये । जलचर विकल विन भोगभूनर, पशु त्रिपल्य प्रमानिये ॥ ४ ॥ अघ-वशकर नरकबसेरा, भुगतै तहँ कष्ट घनेरा । छेदै तिल-तिल तन सारा, छेपैद्रह-पूतिमझारा ॥ मंझार वज्रानिल पचावें, धरहिं शूली ऊपरें । सींचै जु खारे वारिसों दुठ, कहैं व्रण नीके करें ॥ वैतरणिसरिता समलजल अति, दुखद तरु सेंवलतने । अति भीम वन असिक्रांतसम दल, लगत दुख देवें घने ॥ ५ ॥ तिस भूमें हिम गरमाई, सुर-गिरिसम अस गल जाई । तामें थिति

---

१ जूं आदि । २ भ्रमर आदि । ३ सर्पविशेष। ४ भोगभूमिया मनुष्य और पशु । ५ दुर्गंधिके भरे तालाब। ६ फोड़े । ७ तलवारकी धार । ८ पत्ते । ९ लोहा।

सिंधुतनी है, यों दुखद नरक अवनी है॥ अवनी तहांकीतैं निकासि, कबहूं जनम पायो नरो। सर्वांग सकुचित अति अपावन, जठर जननीके परो॥ तहँ अधोमुख जननीरसांश,-थकी जियो नवमास लों। ता पीरमें कोउ सीर नाहीं, सहे आप निकास लों॥ ६॥ जनमत जो संकट पायो, रसनातैं जात न गायो। लहि बालपनैं दुख भारी, तरुनापो लयो दुखकारी॥ दुखकारि इष्टवियोग अशुभ,-सँयोग सोग सरोगता। परसेव ग्रीषम सीत पावस सहे दुख अति भोगता॥ काहू कुतिय काहू कुबांधव, कहुँ सुता व्यभिचारिणी। किसहू बिसनरत पुत्र दुष्ट,-कलत्र कोऊ परऋणी॥ ७॥ वृद्धापनके दुख जेते, लखिये सब नयननतैं ते। मुख लाल बहे तन हालै, विन शक्ति न बसन सँभालै॥ न सँभाल जाके देहकी तो, कहो वृषकी का कथा?। तब ही अचानक आन जम

१ पृथिवी। २ दूसरोंकी सेवा-चौकरी। ३ दुष्ट स्त्री। ४ व्यसनी। ५ कर्जा, उधार। ६ धर्मकी।

गह, मनुज जन्म गयो वृथा ॥ काहू जनम शुभठान किंचित, लह्यो पद चहुंदेवको। अभियोग किल्विष नाम पायो, सह्यो दुख परसेवको ॥ ८ ॥ तहाँ देख महत सुरऋद्धी, झूरयो विषयनकरि गृद्धी। कबहूं परिवार नसानो, शोकाकुल ह्वै बिललानो ॥ बिललाय अति जब मरन निकट्यो, सह्यो संकट मानसी। सुरविभव दुखद लगी जबै तब, लखी माल मैलानसी ॥ तब ही जु सुर उपदेशहित, समुझाइयो समुझ्यो न त्यों। मिथ्यात्वजुत च्युत कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यों? ॥ ९ ॥ यों चिरभव अटवीगाही, किंचित साता न लहाही। जिनकथित धरम नहिं जान्यो, परमाहिं अपनपो मान्यो ॥ मान्यो न सम्यक त्रयातम, आतम अनातममें फस्यो। मिथ्याचरन दृगज्ञान रंज्यो, जाय नवग्रीवक बस्यो ॥ पै लह्यो नहिं जिनकथित शिवमग, वृथा भ्रम भूल्यो जिया। चिद्भावके

---

१ चार प्रकारके देव। २-३ आभियोग और किल्विष देवोंमें एक प्रकारके नीचे सेवकोंके समान देव होते हैं। ४ माला। ५ म्लान-मुरझाती हुई।

दरसाव विन सब, गये अहेले तप क्रिया ॥ १० ॥ अब अद्भुत पुण्य उपायो, कुल जात विमल तू पायो। यातैं सुन सीख सयाने, विषयनसों रति मति ठाने ॥ ठाने कहा रति विषयमें ये, विषम विषधरसम लखो । यह देह मरत अनंत इनको, त्याग आतमरस चखो ॥ या रस-रसिकजन बसे शिव अब, बसें पुनि बासि हैं सही । दौलत स्वरुचि परविरचि सतगुरु,-शीख नित उरधर यही ॥ ११ ॥

होली ११६

ज्ञानी ऐसी होली मचाई ०॥टेक॥ राग कियो विपरीत विपन घर, कुमतिकुसौति सुहाई । धार दिगंबर कीन्ह सुसंवर, निज-पर-भेद लखाई । घात विषयनिकी बचाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ १ ॥ कुमति सखा भाजि ध्यानभेद सम, तनमें तान उड़ाई। कुंभक ताल मृदंगसों पूरक, रेचक बीन बजाई । लगन अनुभवसों लगाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥

१ व्यर्थ। २ सर्प।

॥२॥ कर्मबलीता रूप नाम अरि, वेद सुइन्द्रि ग-
नाई । दे तप अग्नि भस्म करि तिनको, धूल अ-
घाति उड़ाई । करी शिव तियको मिलाई ॥ ज्ञानी
ऐसी० ॥ ३ ॥ ज्ञानकी फाग भागवश आवै, ला-
ख करौ चतुराई । सो गुरु दीनदयाल कृपाकरि,
दौलत तोहि बताई । नहीं चितसे विसराई ॥
ज्ञानी ऐसी होली मचाई ॥ ४ ॥

११७

मेरो मन ऐसी खेलत होरी॥टेक॥ मन मिरदंग
साजकरि त्यारी, तनको तमूरा बनोरी । सुमति
सुरंग सरंगी बजाई, ताल दोउ कर जोरी । राग
पांचों पद कोरी ॥ मेरो मन० ॥ १ ॥ समकित
रूप नीर भर झारी, करुना केशर घोरी । ज्ञानमई
लेकर पिचकारी, दोउ करमाहिं सम्होरी । इन्द्रि
पांचों सखि बोरी ॥ मेरो मन० ॥ २ ॥ चतुर
दानको है गुलाल सो, भरि भरि मूठि चलोरी । तपमें
मेवांकी भरि निज झोरी, यशको अबीर उड़ोरी ।

रंग जिनधाम मचौरी ॥ मेरो मन० ॥ ३ ॥ दौल बाल खेलें अस होरी, भवभव दुःख टलो-री। शरना ले इक श्रीजिनकोरी, जगमें लाज हो तोरी। मिलै फगुआ शिवगौरी ॥ मेरो मन० ॥ ४ ॥

११८

निरखत जिनचंदरी माई ॥ टेक ॥ प्रभुदुति देख मंद भयौ निशिपति, आन सु पग लिपटाई। प्रभु सुचंद वह मंद होत है, जिन लखि सूर छिपाई। सीत अद्भुत सो बताई ॥ निरखत जिन० ॥ १ ॥ अंबर शुभ्र निजंतर दीसे, तत्त्वमित्र सरसाई। फैलि रही जग धर्म जुन्हाई, चारन चार लखाई। गिरा अम्रत जो गनाई ॥ निरखत जिन० ॥ २ ॥ भये प्रफुल्लित भव्य कुमुदमन, मिथ्यातम सो नसाई। दूर भये भवताप सबनके, बुध अंबुधिसों बढ़ाई। मदन चकवेकी जुदाई ॥ निरखत जिन० ॥ ३ ॥ श्री जिनचंद वंद अब दौलत, चितकर चंद लगाई।

कर्मबंध निर्बंध होत हैं, नागसुदमनि लसाई।
होत निर्विष सरपाई॥ निरखत जिन०॥ ४॥

११९

जिया तुम चालो अपने देश, शिवपुर थारो शुभथान। जिया०॥ टेक॥ लख चौरासीमें बहु भटके, लह्यो न सुखरो लेश॥ जिया०॥ १॥ मिथ्यारूप धरे बहुतेरे, भटक्यो बहुत विदेश॥ जिया०॥ २॥ विषयादिक बहुते दुख पाये, भुगते बहुत कलेश॥ जिया०॥ ३॥ भयो तिरजंच नारकी नरसुर, करि करि नाना भेष॥ जिय०॥४॥ दौलतराम तोड़ जगनाता, सुनो सुगुरु उपदेश॥ जिया०॥ ५॥

१२०

जय जय जग-भरम-तिमर,-हरन जिन धुनी॥ टेक॥ या विन समझे अजौं न, सौंज निज मुनी। यह लखि हम निजपर अवि,-वेकता लुनी॥ जय जय०॥ १॥ याको गनराज अंग,-पूर्वमय चुनी। सोई कही है कुंदकुंद, प्रमुख

बहुमुनी ॥ जय जय० ॥ २ ॥ जे चर जड़ भये पीय, मोह वारुनी । तत्त्व पाय चेते जिन, थिर सुचित सुनी ॥ जय जय० ॥ ३ ॥ कर्ममल पखारनेहि, विमलसुरधुनी । तज विलंब अंब करो, दौल उर पुनी ॥ जय जय० ॥ ४ ॥

१२१

अब मोहि जानि परी, भवोदधि तारनको है जैन ॥ टेक ॥ मोहतिमिरतें सदा कालके, छाय रहे मेरे नैन । ताके नाशन हेत लियो मैं, अंजन जैन सु ऐन ॥ अब० ॥ १ ॥ मिथ्यामती भेषको लेकर, भाषत हैं जो बैन । सो वे बैन असार लखे मैं, ज्यों पानीके फैन ॥ अब मो०॥२॥ मिथ्यामती बेल जग फैली, सो दुख फलकी दैन। सतगुरु भक्तिकुठार हाथ लै, छेद लियो अति चैन ॥ अब० ॥ ३ ॥ जा विन जीव सदैव कालतें, विधिवश सुखन (?) लहै न । अशरनशरन अभय दौलत अब, भजो रैनदिन जैन ॥ अब० ॥ ४ ॥

१२२

सुन जिन वैन, श्रवन सुख पायौ ॥ टेक ॥
नस्यो तत्त्व दुर अभिनिवेशतम, स्याद उजास
कहायौ । चिर विसस्यो लह्यो आतम रैन ॥
श्रवन० ॥ १ ॥ दह्यौ अनादि असंजम दवतैं,
लहि व्रत सुधा सिरायौ । धीर धरी मन जीतन
मैन ॥ श्रवन सुख० ॥ २ ॥ भरयो विभाव अभाव
सकल अब, सकलरूप चित लायौ । दास लह्यो
अब अविचल चैन ॥ श्रवन सुख० ॥ ३ ॥

१२३

बामा घर बजत बधाई, चलि देखि री माई॥टेक॥
सुगुनरास जग-आस-भरन तिन, जने पार्श्व जि-
नराई । श्री ह्री धृति कीरति, बुधि लछमी हर्षत
अंग न माई ॥ चलि० ॥ १ ॥ वरन वरन मनि
चूर सची सब, पूरत चौक सुहाई । हाहा हूहू
नारद तुंबर, गावत श्रुतसुखदाई ॥ चलि० ॥ २ ॥
तांडव नृत्य नटत हरिनट तिन, नख नखसुरीं नचाई
किन्नर कर धर वीन बजावत, दृगमनहर छवि

जाई ॥ चलि० ॥ ३ ॥ दौल तासु प्रभुकी महिमा सुर,-गुरुपै कहिय न जाई। जाके जन्म समय नरकनमें, नारकि साता पाई ॥ चलि० ॥ ४ ॥

१२४

जय श्री ऋषभ जिनेन्दा। नाश तो करो स्वामी मेरे दुखदंदा ॥ मातु मरुदेवी प्यारे, पिता नाभिके दुलारे, वंश तो इक्ष्वाक जैसे, नभवीच चंदा ॥ जय श्री० ॥ १ ॥ कनक वरन तन, मोहत भविक जन, रवि शशि कोटि लाजैं, लाजै मकरन्दा ॥ जयश्री० ॥२॥ दोष तो अठारा नासे, गुन छियालीस भासे, अष्टकर्म काट स्वामी, भये निरफंदा ॥ जयश्री० ॥ ॥ ३ ॥ चार ज्ञानधारी गनी, पार नाहिं पावैं मुनी, दौलत नमत सुख, चाहत अमंदा ॥ जय श्री ऋषभ० ॥ ४ ॥

जैनपदसंग्रह

तृतीय भाग।

प्रकाशक
जैन ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय।

श्रीवीतरागाय नमः।

जैनपदसंग्रह

द्वितीय भाग।

पं० भागचन्द्रजीके पदोंका संग्रह।
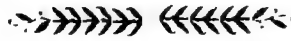
प्रकाशक

जैन ग्रंथ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, बम्बई।

श्रावण, वि० सं० १९८३।

चौथी बार] [मूल्य चार आने

प्रकाशक—

छगनमल बाकलीवाल
मालिक
जैन ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, पो० गिरगांव—बम्बई।
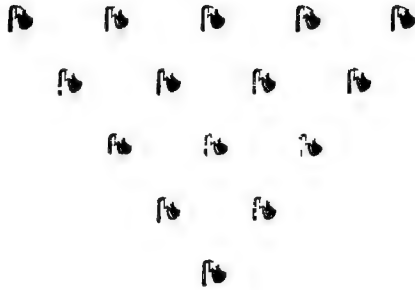
मुद्रक—
मंगेश नारायण कुलकर्णी
कर्नाटक प्रेस,
३१८ ए, ठाकुरद्वार—बम्बई।

पदोंकी वर्णानुक्रमणिका।

ओंनमः सिद्धेभ्यः ।

जैनपदसंग्रह ।

द्वितीय भाग ।

१

राग कुमरी ।

सन्त निरन्तर चिन्तत ऐसें, आतमरूप अबाधित ज्ञानी ॥ टेक ॥ रागादिक तो देहाश्रित हैं, इनतें होत न मेरी हानी । दहन दहत ज्यों दहन न तदगत, गगन दहन ताकी विधि ठानी ॥ १ ॥ वरणादिक विकार पुद्गलके, इनमें नहिं चैतन्य निशानी । यद्यपि एक क्षेत्र अवगाही, तद्यपि लक्षण भिन्न पिछानी ॥ २ ॥ मैं सर्वांगपूर्ण ज्ञायक रस, लवण खिल्लवत लीला ठानी । मिलौ निराकुल स्वाद न यावत, तावत परपरनति हित मानी ॥ ३ ॥ भागचन्द्र निरद्वन्द निरामय, मूरति निश्चय सिद्धसमानी । नित अकलंक अवंक शंक बिन, निर्म्मल पंक बिना जिमि पानी ॥ सन्त निरन्तर चि० ॥ ४ ॥

२

धन धन जैनी साधु अबाधित, तत्त्वज्ञानविलासी हो ॥ टेक ॥ दर्शन-बोधमई निजमूरति, जिनकों

अपनी भासी हो। त्यागी अन्य समस्त वस्तुमें, अहंबुद्धि दुखदा सी हो ॥ १ ॥ जिन अशुभोपयोगकी परनति, सत्तासहित विनाशी हो। होय कदाच शुभोपयोग तो, तहँ भी रहत उदासी हो ॥ २ ॥ छेदत जे अनादि दुखदायक, दुविधि बंधकी फाँसी हो। मोह क्षोभ रहित जिन परनति, विमल मयंक-कला सी हो ॥ ३ ॥ विषय-चाह-दव-दाह खुजावन, साम्य सुधारस-रासी हो। भागचन्द ज्ञानानंदी पद, साधत सदा हुलासी हो ॥ धन० ॥ ४ ॥

३

यही इक धर्ममूल है मीता! निज समकितसार-सहीता। यही० ॥टेक॥ समकित सहित नरकपदवासा, खासा बुधजन गीता। तहँतें निकसि होय तीर्थंकर, सुरगन जजत सप्रीता ॥ १ ॥ स्वर्गवास हू नीको नाहीं, विन समकित अविनीता। तहँतें चय एकेंद्री उपजत, भ्रमत सदा भयभीता ॥ २ ॥ खेत बहुत जोते हु बीज विन, रहत धान्यसों रीता ॥ ३ ॥ सिद्धि न लहत कोटि तपहूतें, वृथा कलेश सहीता ॥ ३ ॥ समकित अतुल अखंड सुधारस, जिन पुरुषननें पीता। भागचन्द ते अजर अमर भये, तिनहीनें जग जीता ॥ यही इक धर्म० ॥ ४ ॥

४

राग ठुमरी ।

जीवनके परिनामनिकी यह, अति विचित्रता देखहु ज्ञानी ॥ टेक ॥ नित्य निगोदमाहितैं कढ़िकर, नर परजाय पाय सुखदानी । समकित लहि अंतर्मुहूर्तमें, केवल पाय वरैं शिवरानी ॥ १ ॥ मुनि एकादश गुणथानक चढ़ि, गिरत तहांतैं चितभ्रम ठानी । भ्रमत अर्धपुद्गलप्रावर्तन, किंचित् ऊन काल परमानी ॥ २ ॥ निज परिनामनिकी सँभालमें, तातैं गाफिल मत है प्रानी । बंध मोक्ष परिनामनिहीसों, कहत सदा श्रीजिनवरवानी ॥ ३ ॥ सकल उपाधिनिमित भावनिसों, भिन्न सु निज परनतिको छानी । ताहि जानि रुचि ठानि होहु थिर, भागचन्द यह सीख सयानी ॥ जीवनके पर० ॥ ४ ॥ •

५

परनति सब जीवनकी, तीन भाँति वरनी ।
एक पुण्य एक पाप, एक रागहरनी ॥ परनति० ॥टेक॥
तामें शुभ अशुभ अंध, दोय करैं कर्मबंध,
वीतराग परनति ही, भवसमुद्रतरनी ॥ १ ॥
जावत शुद्धोपयोग, पावत नाहीं मनोग,
तावत ही करन जोग, कही पुण्य करनी ॥ २ ॥
त्याग शुभ क्रियाकलाप, करो मत कदाच पाप,
शुभमें न मगन होय, शुद्धता विसरनी ॥ ३ ॥

ऊंच ऊंच दशा धारि, चित्त प्रमादको विडारि,
ऊंचली दशानैं मति, गिरो अधो धरनी ॥ ४ ॥
भागचन्द या प्रकार, जीव लहै सुख अपार,
याके निरधार स्याद्,-वादकी उचरनी ॥ परनति० ॥५॥

६

जीव! तू भ्रमत सदीव अकेला। संग साथी कोई नहिं तेरा ॥टेक॥ अपना सुखदुख आप हि भुगतै, होत कुटुंब न भेला। स्वार्थ भयें सब विछुरि जात हैं, विघट जात ज्यों मेला॥ १॥ रक्षक कोइ न पूरन है जब, आयु अंतकी बेला। फूटत पारि बंधत नहीं जैसें, दुद्धर-जलको ठेला ॥२॥ तन धन जीवन विनशि जात ज्यों, इन्द्रजालका खेला। भागचन्द इमि लख करि भाई, हो सतगुरुका चेला॥ जीव तू भ्रमत०॥ ३॥

७

आकुलरहित होय इमि निशदिन, कीजे तत्त्व-विचारा हो। को मैं कहा रूप है मेरा, पर है कौन प्रकारा हो ॥टेक॥ १ ॥को भव-कारण बंध कहा को, आस्रवरोकनहारा हो। खिपत कर्मबंधन काहेसों, थानक कौन हमारा हो ॥ २ ॥ इमि अभ्यास कियें पावत है, परमानंद अपारा हो। भागचंद यह सार जान करि, कीजे वारंवारा हो॥ आकुलरहित होय० ॥ ३ ॥

८

राग भैरव।

सुन्दर दशलच्छन वृष, सेय सदा भाई।
जासतैं ततच्छन जन, होय विश्वराई॥ टेक॥
क्रोधको निरोध शांत, सुधाको नितांत शोध,
मानको तजौ भजौ स्वभाव कोमलाई॥ १॥
छल बल तजि सदा विमलभाव सरलताई भजि,
सर्व जीव चैन दैन, बैन कह सुहाई॥ २॥
ज्ञान तीर्थ स्नान दान, ध्यान भान हृदय आन,
दया-चरन धारि करन-विषय सब बिहाई॥ ३॥
आलस हरि द्वादश तप, धारि शुद्ध मानस करि,
खेहगेह देह जानि, तजौ नेहताई॥ ४॥
अंतरंग बाह्य संग, त्यागि आत्मरंग पागि,
शीलमाल अति विशाल, पहिर शोभनाई॥ ५॥
यह वृष-सोपान-राज, मोक्षधाम चढ़न काज,
ननसुख (?) निज गुनसमाज, केवली बताई॥ सुन्दर०॥६

९

प्रभाती।

षोड़शकारन सुहृदय, धारन कर भाई!
जिनतैं जगतारन जिन, होय विश्वराई॥ टेक॥
निर्मल श्रद्धान ठान, शंकादिक मल जघान,
देवादिक विनय सरल-भावतैं कराई॥ १॥

शील निरतिचार धार, मारको सदैव मार,
अंतरंग पूर्ण ज्ञान, रागको विघाई ॥ २ ॥
यथाशक्ति द्वादश तप, तपो शुद्ध मानस कर,
आर्त रौद्र ध्यान त्यागि, धर्म शुक्ल ध्याई ॥ ३ ॥
जथाशक्ति वैयावृत, धार अष्टमान टार,
भक्ति श्रीजिनेन्द्रकी, सदैव चित्त लाई ॥ ४ ॥
आरज आचारजके, वंदि पाद-वारिजकों,
भक्ति उपाध्यायकी, निधाय सौख्यदाई ॥ ५ ॥
प्रवचनकी भक्ति जननसेनि बुद्धि धरो नित्य,
आवश्यक क्रियामें न, हानि कर कदाई ॥ ६ ॥
धर्मकी प्रभावना सु, शर्मकर बढावना सु,
जिनप्रणीत सूत्रमाहिं, प्रीति कर अघाई ॥ ७ ॥
ऐसे जो भावत चित, कलुषता बहावत तसु,
चरनकमल ध्यावत बुध, भागचंद गाई ॥ षोड़श० ॥ ८ ॥

१०

प्रभाती ।

श्रीजिनवर दरश आज, करत सौख्य पाया ।
अष्ट प्रातिहार्यसहित, पाय शांति काया ॥ टेक ॥
वृक्ष है अशोक जहां, भ्रमर गान गाया ।
सुन्दर मन्दार-पहुप,-वृष्टि होत आया ॥ १ ॥
ज्ञानामृत भरी वानि, खिरै भ्रम नसाया ।
विमल चमर ढोरत हरि, हृदय भक्ति लाया ॥ २ ॥

सिंहासन प्रभाचक्र, वालजग सुहाया।
देव दुंदुभी विशाल, जहां सुर बजाया॥ ४॥
मुक्ताफल माल सहित, छत्र तीन छाया।
भागचन्द अद्भुत छवि, कही नहीं जाया॥ श्रीजिन०॥५॥

११

राग ठुमरी।

वीतराग जिन महिमा थारी, वरन सकै को जन त्रिभुवनमें॥ वीतराग०॥ टेक॥ तुमरे अनट चतुष्टय प्रगट्यो, निःशेषावरनच्छय छिनमें। मेघ पटल विघटननैं प्रगटत, जिमि मार्तंड प्रकाश गगनमें॥ वीतराग०॥ १॥ अप्रमेय ज्ञेयनके ज्ञायक, नहिं परिनमत तदपि ज्ञेयनमें। देखन नयन अनेकरूप जिमि, मिलत नहीं पुनि निज विषयनमें॥ वीतराग०॥२॥ निज उपयोग आपनै स्वामी; गाल दिया निश्चल आपनमें। है असमर्थ बाह्य निकसनको, लवन घुला जैसें जीवनमें[1]॥ वीतराग०॥ ३॥ तुमरे भक्त परम सुख पावत, परत अभक्त अनंत दुखनमें। जैसो मुख देखो तैसो है, भासत जिम निर्मल दरपनमें॥ वीतराग०॥ ४॥ तुम कषाय विन परम शांत हो, तदपि दक्ष कर्मारिहतनमें। जैसे अतिशीतल तुषार पुनि, जार देत द्रुम भारि गहनमें॥ वीतराग०॥ ५॥ अब तुम रूप

१ जीवन शब्दका अर्थ जल भी होता है।

जथारथ पायो, अब इच्छा नाहिं अन कुमननमें। भागचन्द अम्रतरस पीकर, फिर को चाहै विष निज मनमें ॥ वीतराग० ॥ ६ ॥

१२

राग ठुमरी।

बुधजन पक्षपात तज देखो, सांचा देव कौन है इनमें ॥ बुधजन० ॥ टेक ॥ ब्रह्मा दंड कमंडलधारि, स्वांत भ्रांत वशि सुरनारिनमें। मृगछाला माला मौंजी पुनि, विषयासक्त निवास नलिनमें ॥ बुधजन० ॥ १ ॥ शंभू खट्वाअंगसहित पुनि, गिरिजा भोगमगन निशदिनमें। हस्त कपाल व्याल भूषन पुनि, रुंडमाल तन भस्म मलिनमें ॥ बुधजन० ॥ २ ॥ विष्णु चक्रधर मदनवानवश, लज्जा तजि रमता गोपिनमें। क्रोधानल ज्वाजल्यमान पुनि, तिनके होत प्रचंड अरिनमें ॥ बुधजन० ॥ ३ ॥ श्रीअरहंत परम वैरागी, दूषन लेश प्रवेश न जिनमें। भागचंद इनको स्वरूप यह, अब कहो पूज्यपनो है किनमें? ॥ बुधजन० ॥ ४ ॥

१३

अति संक्लेश विशुद्ध शुद्ध पुनि, त्रिविध जीव परिनाम बखाने ॥ अति० ॥ टेक ॥ तीव्र कषाय उदयतैं भावित, दर्वित हिंसादिक अघ ठाने। सो संक्लेश भावफल नरकादिक गति दुख भोगत अस-

हाने ॥ अति० ॥ १ ॥ शुध उपयोग कारननमें जो, रागकषाय मंद उदयाने । सो विशुद्ध तसु फल इंद्रादिक, विभव समाज सकल परमाने ॥ अति० ॥ २ ॥ परकारन मोहादिकतैं च्युत, दरसन ज्ञान चरन रस पाने । सो है शुद्ध भाव तसु फलतैं, पहुँचत परमानंद ठिकाने ॥ अति संक्ले० ॥ ३ ॥ इनमें जुगल बंधके कारन, परद्रव्याश्रित हेयप्रमाने । 'भागचंद' स्वसमय निज हित लखि, तामें रम रहिये भ्रम हाने ॥ अति० ॥ ४ ॥

१४

उग्रसेन गृह व्याहन आये, समदविजयके लाला ये ॥ उग्रसेन० ॥ टेक ॥ अशरन पशु आक्रंदन लखिकै, करुना भाव उपाये । जगत विभूति भूति सम तजिकै, अधिक विराग बढ़ाये ॥ उग्रसेन० ॥ १ ॥ मुद्रा नगन धरि तंद्रा विन, आतमब्रह्मरुचि लाये । उर्जयंतगिरि शिखरोपरि चढ़ि, शुचि थानकमें थाये ॥ उग्रसेन० ॥२॥ पंचमुष्टि कच लुँच मुंच रज, सिद्धनको शिर नाये । धवल ध्यान पावक ज्वालातैं, करम कलंक जलाये ॥ उग्र० ॥ ३ ॥ वस्तु समस्त हस्तरेखावत, जुगपत ही दरसाये । निरवशेष विध्वस्त कर्मकर, शिवपुरकाज सिधाये ॥ उग्रसेन० ॥ ४ ॥ अव्याबाध अगाध बोधमयतआनंद सुहाये । जगभूषन दूषनविन स्वामी, भागचंद गुन गाये ॥ उग्रसेन० ॥ ५ ॥

१५

राग चर्चरी ।

सांची तो गंगा यह वीतरागवानी, अविच्छन्न धारा निज धर्मकी कहानी ॥ सांची० ॥ टेक ॥ जामें अति ही विमल अगाध ज्ञानपानी, जहां नहीं संशयादि पंककी निशानी ॥ सांची० ॥ १ ॥ सप्तभंग जहँ तरंग उछलत सुखदानी, संतचित मरालवृंद रमैं नित्य ज्ञानी ॥ सांची० ॥ २ ॥ जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्रानी, भागचंद्र निहचै घटमाहिं या प्रमानी॥ सांची० ॥२॥

१६

राग प्रभाती ।

प्रभु तुम मूरत दृगसों निरखै हरखै मोरो जीयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ टेक ॥ भुजत कषायानल पुनि उपजै, ज्ञानसुधारस सीयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ १ ॥ वीतरागता प्रगट होत है, शिवथल दीसै नीयरा ॥ प्रभु तुम० ॥२॥ भागचंद तुम चरन कमलमें, वसत संतजन हीयरा ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

१७

राग प्रभाती ।

अरे हो जियरा धर्ममें चित्त लगाय रे ॥ अरे हो० ॥टेक॥ विषय विषसम जान भौदूं, वृथा क्यों लुभाय- रे । अरे हो० ॥ १ ॥ संग भार विषाद तोकौं, करत

क्या नहिं भाय रे । रोग-उरग-निवास-वामी, कहा नहिं यह काय रे ॥ अरे हां० ॥ २ ॥ काल हरिकी गर्जना क्या, तोहि सुन न पराय रे । आपदा भर नित्य तोकौं, कहा नहीं दुःख दायरे ॥ अरे हां० ॥ ३ ॥ यदि तोहि कहा नहीं दुःख, नरकके असहाय रे । नदी वैतरनी जहां जिय, परै अति बिललाय रे ॥ अरे हां० ॥ ४ ॥ तन धनादिक घनपटल सम, छिनकमांहीं बिलाय रे । भागचंद सुजान इमि जदु-कुल-तिलक गुन गाय रे ॥ अरे हां० ॥ ५ ॥

१८

श्रीजिनवरपद ध्यावैं जो नर श्रीजिनवर पद ध्यावैं ॥ टेक ॥ तिनकी कर्मकालिमा विनशै, परम ब्रह्म हो जावैं । उपल अग्नि संजोग पाय जिमि, कंचन विमल कहावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ १ ॥ चन्द्रोज्वल जस तिनको जगमें, पंडित जन नित गावैं । जैसे कमलसुगंध दशोंदिश, पवन सहज फैलावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ २ ॥ तिनहिं मिलनको मुक्ति सुंदरी चित अभिलाषा ल्यावै । कृषिमें तृण जिम सहज ऊपजै त्यों स्वर्गादिक पावै ॥ श्रीजिनवर० ॥३॥ जनमजरामृत दावानल ये; भाव सलिलतैं बुझावैं । भागचन्द कहाँ ताइ बरनै, तिनहिं इंद्र शिर नावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ ४ ॥

१९

राग बिलावल ।

सुमर सदा मन आतमराम, सुमर सदा मन आतमराम ॥ टेक ॥ स्वजन कुटुंबी जन तू पोषै, तिनको होय सदैव गुलाम । सो तो हैं स्वारथके साथी, अंतकाल नहिं आवत काम ॥ सुमर सदा० ॥ १ ॥ जिमि मरीचिकामें मृग भटकै, परत सो जब ग्रीषम अति घाम । तैसे तू भवमाहीं भटकै, धरत न इक छिनहू विसराम ॥ सुमर० ॥२॥ करत न ग्लानि अब भोगनमें, धरत न वीतराग परिनाम । फिर किमि नरकमाहिं दुख सहसी, जहाँ सुख लेश न आठौं जाम ॥ ३ ॥ तातैं आकुलता अब तजिकै, थिर ह्वै बैठो अपने धाम । भागचंद वसि ज्ञान नगरमें, तजि रागादिक ठग सब ग्राम ॥ सुमर० ॥ ४ ॥

२०

राग सारंग ।

श्रीमुनि राजत समता संग । कायोत्सर्ग समायत अंग ॥टेक॥ करतैं नहिं कछु कारज तातैं, आलम्बित भुज कीन अभंग । गमन काज कछु हू नहिं तातैं, गति तजि छाके निज रसरंग ॥ श्रीमुनि० ॥ १ ॥ लोचनतैं लखिवौ कछु नाहीं, तातैं नासा दृग अचलंग । सुनिवे जोग रह्यो कछु नाहीं, तातैं प्राप्त इकंत सुचंग

॥श्रीमुनि०॥२॥ तहँ मध्यान्हमाहिं निज ऊपर, आयो उग्र प्रताप पतंग। कैधौं ज्ञान पवनबल प्रज्वालेत, ध्यानानलसौं उछलि फुलिंग ॥ श्रीमु० ॥३॥ चित्त निराकुल अतुल उठत जहँ, परमानंद पियूषतरंग। भागचंद ऐसे श्रीगुरुपद, वंदत मिलत स्वपद उत्तंग ॥ श्रीमुनि० ॥४॥

२१

राग गौरी।

आतम अनुभव आवै जब निज, आतम अनुभव आवै। और कछू न सुहावै, जब निज० ॥ टेक ॥ रस नीरस हो जात ततच्छिन, अच्छ विषय नहीं भावै ॥ आतम०॥ ॥१॥ गोष्ठी कथा कुतूहल विघटै, पुद्गलप्रीति नसावै॥ आतम० ॥ २ ॥ राग दोष जुग चपल पक्षजुत मन पक्षी मर जावै ॥आतम० ॥३॥ज्ञानानन्द सुधारस उमगै, घट अंतर न समावै ॥आतम०॥ भागचंद ऐसे अनुभवके हाथ जोरि सिर नावै ॥ आतम० ॥ ४ ॥

२२

राग ईमन।

महिमा है अगम जिनागमकी ॥ टेक॥ जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतमकी॥ महिमा० ॥१॥ रागादिक दुखकारन जानें, त्याग बुद्धि दीनी भ्रमकी। ज्ञान ज्योति जागी घट अंतर, रुचि बाढ़ी पुनि शमदमकी ॥ महि० ॥ २ ॥ कर्म बंधकी भई निरजरा, कारण परंपरा क्रमकी। भागचन्द शिव-

लालच लागो, पहुंच नहीं है जहँ जमकी ॥ महि-
मा० ॥ ३ ॥

२३

राग ईमन ।

धन धन श्रीश्रेयांसकुमार । तीर्थदान करतार ॥ टेक ॥ प्रभु लखि जाहि पूर्वश्रुत आई, चित हरषाय उदार । नवधा भक्ति समेत इक्षुरस, प्रासुक दियो अहार ॥ धन० ॥ १ ॥ रतनवृष्टि सुरगन नभ कीनी, अमित अमोघ सुधार । कलपवृक्ष पहुपनकी वर्षा, जहँ अलि करत गुँजार ॥ धन० ॥ २ ॥ सुरदुंदुभि सुन्दर अति बाजी, मन्द सुगंधि बयार । धन धन यह दाता इमि नभमें, चहुँदिशि होत उचार ॥ धन० ॥ ३॥ जस ताको अमरी नित गावत, चन्द्रोज्ज्वल अविकार । भागचन्द लघुमति क्या वरनै, सो तो पुन्य अपार ॥ धन० ॥ ४ ॥

२४

ऐसे जैनी मुनिमहाराज, सदा उर मो बसो ॥ टेक ॥ तिन समस्त परद्रव्यनिमाहीं, अहंबुद्धि तजि दीनी ॥ गुन अनंत ज्ञानादिक मम पुनि, स्वानुभूति लखि लीनी ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ जे निजबुद्धिपूर्व रागादिक, सकल विभाव निवारैं । पुनि अबुद्धिपूर्वकनाशनको, अपनें शक्ति सम्हारैं ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ कर्म शुभाशुभ

बंध उदयमें हर्ष विषाद न राखैं। सम्यगदर्शनज्ञान-चरनतप, भावसुधारस चाखैं ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ परकी इच्छा तजि निजबल सजि, पूरव कर्म खिरावैं। सकल कर्मतैं भिन्न अवस्था सुखमय लखि चित चावैं ॥ ऐसे० ॥ ४ ॥ उदासीन शुद्धोपयोगरत सबके दृष्टा ज्ञाता। बाहिजरूप नगन समताकर, भागचन्द सुखदाता ॥ ऐसे० ॥ ५ ॥

२५

राग जंगला।

तुम गुनमनिनिधि हो अरहंत ॥ टेक ॥ पार न पावत तुमरो गनपति, चार ज्ञान धरि संत ॥ तुम गुन० ॥ १ ॥ ज्ञानकोष सब दोष रहित तुम, अलख अमूर्ति अचिंत ॥ तुम गुन० ॥ २ ॥ हरिगन अरचत तुम पदवारिज, परमेष्ठी भगवंत ॥ तुम गुन० ॥ ३ ॥ भागचन्दके घटमंदिरमें, वसहु सदा जयवंत ॥ तुम गुन० ॥ ४ ॥

२६

राग जंगला।

शांति वरन मुनिराई वर लखि। उत्तर गुनगन सहित (मूल गुन सुभग) बरात सुहाई ॥ टेक ॥ तप रथपै आरूढ अनूपम, धरम सुमंगलदाई ॥ शांति वरन० ॥ १ ॥ शिवरमनीको पानिग्रहण करि, ज्ञानानन्द उपाई ॥ शांति वरन० ॥ २ ॥ भागचन्द ऐसे

बनराको, हाथ जोर सिरनाई ॥ शांति वरन० ॥ ३ ॥

२७

राग जंगला।

म्हाकैं जिनमूरति हृदय बसी बसी ॥ टेक ॥ यद्यपि करुनारसमय तद्यपि, मोह शत्रु हनि असी असी ॥ म्हा० ॥ १ ॥ भामंडल ताको अति निर्मल, निःकलंक जिमि ससी ससी ॥ म्हाकैं० ॥ २ ॥ लखत होत अति शीतल मति जिमि, सुधा जलधिमें धसी धसी ॥ म्हाकैं० ॥ ३ ॥ भागचन्द जिम ध्यानमंत्रसों, ममता नागिन नसी नसी ॥ म्हाकैं० ॥ ४ ॥

२८

राग खमाच।

ज्ञानी मुनि छै ऐसे स्वामी गुनराम ॥ टेक ॥ जिनके शैलनगर मंदिर पुनि, गिरिकंदर सुखवास ॥ ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ निःकलंक परंजक शिला पुनि, दीप मृगांक उजास ॥ ज्ञा० ॥ २ ॥ मृग किंकर करुना वनिता पुनि, शील सलिल तपग्रास ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ भागचन्द ते हैं गुरु हमरे, तिनहीके हम दास ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

२९

राग खमाच।

श्रीगुरु है उपगारी ऐसे वीतराग गुनधारी वे ॥

टेक ॥ स्वानुभूति रमनी सँग कीड़ैं, ज्ञानसंपदा भारी वे ॥ श्रीगुरु० ॥ १ ॥ ध्यान पिंजरामें जिन रोकौ चिन खग चंचलचारी वे ॥ श्रीगुरु है० ॥ २ ॥ तिनके चरनसरोरुह ध्यावै, भागचन्द अघटारी वे ॥ श्री-गुरु० ॥ ३ ॥

३०

राग खमाच।

सारौ दिन निरफल खोयबौ करै छै। नरभव लहिकर प्रानी विनज्ञान, सारौ दिन नि० ॥ टेक ॥ परसंपति लखि निजचितमाहीं, विरथा मूरख रोयबौ करै छै ॥ सारौ० ॥ १ ॥ कामानलतैं जरत सदा ही, सुन्दर कामिनी जोयबौ करै छै ॥ सारौ० ॥ २ ॥ जिनमत तीर्थस्थान न ठानै, जलमों पुद्गल धोयबौ करै छै ॥ सारौ० ॥ ३ ॥ भागचन्द इमि धर्म विना शठ, मोहनींदमें सोयबौ करै छै ॥ सारौ० ॥ ४ ॥

३१

राग परज।

सम आराम विहारी, साधुजन सम आराम विहारी ॥ टेक ॥ एक कलपतरु पुष्पन सेती, जजत भक्ति विस्तारी ॥ एक कंठविच सर्प नाखिया, क्रोध दर्पजुत भारी ॥ राखत एक वृत्ति दोउनमैं, सबहीके उपगारी ॥ सम आरा० ॥ १ ॥ सारंगी हरिबाल चुखावै, पुनि

मराल मंजारी । व्याघ्रबालकरि सहित नन्दिनी, व्याल नकुलकी नारी ॥ तिनके चरनकमल आश्रयतैं, अरिता सकल निवारी ॥ सम आ० ॥ २ ॥ अक्षय अतुल प्रमोद विधायक, ताकौ धाम अपारी । काम धरा विव गढी सो चिरतें, आतमनिधि अविकारी ॥ खनन ताहि लै कर करमें जे, तीक्षण बुद्धि कुदारी ॥सम आराम० ॥३॥ निज शुद्धोपयोगरस चाखन, पर-ममता न लगारी । निज सरधान ज्ञान चरनात्मक, निश्चय शिवमगचारी ॥ भागचंद ऐसे श्रीपति प्रति, फिर फिर ढोक हमारी ॥ सम आराम वि० ॥ ४ ॥

३२

राग सोरठ ।

इष्टजिन केवली म्हाकै इष्टजिन केवली, जिन सकल कलिमल दली ॥टेक॥ शान्ति छबि जिनकी विमल जिमि, चन्द्रद्युति मंडली । संत-जन-मन-केकि-नर्पन सघन वनपटली ॥ इष्टजिन के० ॥ १ ॥ स्यात्पदांकित धुनि सुजिनकी, वदनतें निकली । वस्तुतत्त्वप्रकाशिनी जिमि, भानु किरनावली ॥ इष्टजिन० ॥ २ ॥ जासुपद अरविंदकी, मकरंद अति निरमली । ताहि घ्रान करै नमित हर,-मुकुट-द्युति-मनि अली ॥ इष्टजिन० ॥ ३ ॥ जाहि जजत विराग उपजत, मोहनिद्रा टली । ज्ञान-लोचननैं प्रगट लखि, धरत शिववटगली ॥ इष्टजिन०

॥ ४ ॥ जासु गुन नहिं पार पावन, बुद्धि ऋद्धि बली। भागचंद सु अलपमति जन,—की तहां क्या चली ॥ इष्टजिन० ॥ ५ ॥

३३

राग सोरठ।

स्वामी मोहि अपनो जानि तारौ, या विनती अब चित धारौ ॥ टेक ॥ जगत उजागर करुणासागर, नागर नाम तिहारौ ॥ स्वामी मोहि० ॥ १ ॥ भव अटवीमें भटकत भटकत, अब मैं अति ही हारौ ॥ स्वामी मोहि० ॥ २ ॥ भागचन्द स्वच्छन्द ज्ञानमय, सुख अनंत विस्तारौ ॥ स्वामी मोहि० ॥ ३ ॥

३४

राग सोरठ देशी।

थांकी तो वानीमें हो, निज स्वपरप्रकाशक ज्ञान ॥ टेक ॥ एकीभाव भये जड़ चेतन, तिनकी करत पिछान ॥ थांकी तो० ॥ १ ॥ सकल पदार्थ प्रकाशत जामें, मुकुर तुल्य अमलान ॥ थांकी तो० ॥२॥ जग चूड़ामनि शिव भये ते ही, तिन कीनों सरधान ॥ थांकी तो० ॥ ३ ॥ भागचंद बुधजन ताहीको, निशदिन करत बखान ॥ थांकी तो० ॥ ४ ॥

३५

राग सोरठ मल्हारमें।

गिरिवनवासी मुनिराज, मन वसिया म्हारै हो

॥टेक॥ कारनविन उपगारी जगके, तारन-तरन-जिहाज ॥गिरिवन० ॥ १ ॥ जनम-जरामृत-गद-गंजनको, करत विवेक इलाज ॥ गिरिवन० ॥२॥ एकाकी जिमि रहत केसरी, निरभय स्वगुन समाज ॥ गिरिवन० ॥ ३ ॥ निर्भूषन निर्वसन निराकुल, सजि रत्नत्रय साज ॥ गिरिवन० ॥४॥ ध्यानाध्ययनमाहिं तत्पर नित, भागचन्द शिवकाज ॥ गिरिवन० ॥ ५ ॥

३६

राग सोरठ।

म्हांके घट जिनधुनि अब प्रगटी ॥टेक॥ जागृत दशा भई अब मेरी, सुप्त दशा विघटी। जगरचना दीसत अब मोकों, जैसी रँहटघटी ॥ म्हांके घट० ॥ १ ॥ विभ्रम तिमिर-हरन निज दृगकी, जैसी अँजनवटी। तातैं स्वानुभूति प्रापतितैं, परपरनति सब हटी ॥ म्हांके घट० ॥ २ ॥ ताके विन जो अवगम चाहै, सो तो शठ कपटी। तातैं भागचन्द निशिवासर, इक ताहीको रटी ॥ म्हांके घट० ॥ ३ ॥

३७

राग सोरठ।

आवै न भोगनमें तोहि गिलान ॥ टेक ॥ तीरथनाथ भोग तजि दीनें, तिनतैं मन भय आन। तू तिनतैं कहुँ डरपत नाहीं, दीसत अति बलवान ॥ आवै न० ॥ १ ॥ इन्द्रियतृप्ति काज तू भोगै, विषय

महा अघखान। सो जैसे घृतधारा डारै, पावकज्वाल बुझान ॥ आवै न० ॥ २ ॥ जे सुख तो तीछन दुखदाई, ज्यों मधुलिप्त-कृपान। तातैं भागचन्द इनको तजि, आत्मस्वरूप पिछान ॥ आवै न० ॥ ३ ॥

३८

राग सोरठ।

स्वामीजी तुम गुन अपरंपार, चन्द्रोज्ज्वल अविकार ॥ टेक ॥ जबै तुम गर्भमाहिं आये, तबै सब सुरगन मिलि आये। रतन नगरीमें वरषाये, अमित अमोघ सुढार ॥ स्वामीजी० ॥ १ ॥ जन्म प्रभु तुमने जब लीना, न्हवन मंदिरपै हरि कीना। भक्ति करि सची सहित भीना, बोला जयजयकार ॥ स्वामीजी० ॥ २ ॥ जगत छनभंगुर जब जाना, भये तब नगनवृत्ती वाना। स्तवन लौकांतिकसुर ठाना, त्याग राजको भार ॥ स्वामीजी० ॥ ३ ॥ घातिया प्रकृति जबै नासी, चराचर वस्तु सबै भासी। धर्मकी वृष्टी करी स्वामी, केवलज्ञान भँडार ॥ स्वामीजी० ॥ ४ ॥ अघाती प्रकृति सुविघटाई, मुक्तिकान्ता तब ही पाई। निराकुल आनंद असहाई, तीनलोकसरदार ॥ स्वामीजी० ॥ ५ ॥ पार गनधर हू नहिं पावें, कहां लगि भागचन्द गावै। तुम्हारे चरनांबुज ध्यावैं, भवसागर सों तार ॥ स्वामीजी० ॥ ६ ॥

३९

राग मल्हार।

मान न कीजिये हो परवीन ॥ टेक ॥ जाय पलाय चंचला कमला, तिष्ठै दो दिन तीन । धनजोबन छनभंगुर सब ही, होत सुछिन छिन छीन ॥ मान न० ॥ १ ॥ भरत नरेन्द्र खंड-खट-नायक, तेहु भये मद हीन । तेरी बात कहा है भाई, तू तो सहज हि दीन ॥ मान न० ॥२॥ भागचन्द मार्दव रससागर, माहिं होहु लवलीन । तातैं जगतजालमें फिर कहुं, जनम न होय नवीन ॥ मान न० ॥ ३ ॥

४०

राग मल्हार।

अरे हो अज्ञानी तूने कठिन मनुषभव पायो ॥ टेक॥ लोचनरहित मनुषके करमें, ज्यों बटेर खग आयो ॥ अरे हो० ॥ १ ॥ सो तू खोवत विषयनमाहीं, धरम नहीं चित लायो ॥ अरे हो० ॥ २ ॥ भागचन्द उपदेश मान अब, जो श्रीगुरु फरमायो ॥ अरे हो० ॥३॥

४१

राग मल्हार।

बरसत ज्ञान सुनीर हो, श्रीजिनमुखघनसों ॥ टेक ॥ शीतल होत सुबुद्धिमेदिनी, मिटत भवातपपीर ॥ बरसत० ॥ १ ॥ स्यादवाद नयदामिनि दमकै, होत निनाद गँभीर ॥ बरसत० ॥ २ ॥ करुनानदी

बसै चहुं दिशितैं, भरी सो दोई नीर ॥ वरसन० ॥३॥ भागचन्द अनुभवमंदिरको, तजत न मंत सुधीर ॥ वरसन० ॥ ४ ॥

४२

राग मल्हार।

मेघघटासम श्रीजिनवानी ॥ टेक ॥ स्यात्पद चपला चमकत जामें, वरसत ज्ञान सुपानी ॥ मेघघटा० ॥ १ ॥ धरमसस्य जातैं बहु बाढ़ैं, शिवआनँदफलदानी॥ मेघघटा० ॥ २ ॥ मोहन धूल दबी सब यातैं, क्रोधानल सुबुझानी ॥ मेघघटा० ॥ ३ ॥ भागचन्द बुधजन केकीकुल, लखि हरखै चितज्ञानी ॥ मेघघटा० ॥ ४ ॥

४३

राग धनाश्री।

प्रभू थांकों लखि ममचित हरषायो ॥ टेक ॥ सुंदर चिंतारतन अमोलक, रंकपुरुष जिमि पायो ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ निर्मलरूप भयो अब मेरो, भक्तिनदीजल न्हायो प्रभू० ॥ २ ॥ भागचन्द अब मम करतलमें अविचल शिवथल आयो ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥

४४

राग मल्हार।

प्रभू म्हाकी सुधि, करुना करि लीजे ॥ टेक ॥ मेरे इक अवलम्बन तुम ही, अब न विलम्ब करीजे ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ अन्य कुदेव तजे सब मैंने, तिनतैं

निजगुन छीजे ॥ प्रभू० ॥ २ ॥ भागचन्द तुम शरन लियो है, अब निश्चलपद दीजे ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥

४५

राग कलिंगड़ा ।

ऐसे साधू सुगुरु कब मिल हैं ॥ टेक ॥ आप तरें अरु परको तारें, निष्प्रेही निरमल हैं ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ तिलतुषमात्र संग नहिं जाके, ज्ञान-ध्यान-गुण--बल हैं ॥ ऐसे साधू० ॥ २ ॥ शान्तदिगम्बर मुद्रा जिनकी, मन्दिरतुल्य अचल हैं ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ भागचन्द तिनको नित चाहै, ज्यों कमलनिको अल है ॥ ऐसे० ॥ ४ ॥

४६

राग कहरवा कलिंगड़ा ।

केवल जोति सुजागी जी, जब श्रीजिनवरके ॥ टेक ॥ लोकालोक विलोकन जैसें, हस्तामल बड़भागी जी ॥ के० ॥ १ ॥ हार-चूड़ामनिशिखा सहज ही, नम्र भूमितें लागी जी ॥ केवल० ॥ २ ॥ समवसरन रचना सुर कीन्हीं, देखत भ्रम जन त्यागी जी ॥ केवल० ॥ ३ ॥ भक्तिसहित अरचा तब कीन्हीं, परम धरम अनु-रागी जी ॥ केवल० ॥ ४ ॥ दिव्यध्वनि सुनि सभा दुवादश, आनँदरसमें पागी जी ॥ केवल० ॥ ५ ॥ भागचंद प्रभुभक्ति चहत है, और कछू नहिं मांगी जी ॥ केवल० ॥ ६ ॥

४७

ख्याल।

विन काम ध्यानमुद्राभिराम, तुम हो जगनायकजी ॥ टेक ॥ यद्यपि, वीतरागमय तद्यपि, हो शिवदायक जी ॥ विन काम० ॥ १ ॥ रागी देव आप ही दुखिया, सो क्या लायक जी ॥ विन काम० ॥ २ ॥ दुर्जय मोह शत्रु हनवेको, तुम वच शायकजी ॥ विन काम० ॥ ३ ॥ तुम भवमोचन ज्ञानसुलोचन, केवलक्षायकजी ॥ विन काम० ॥ ४ ॥ भागचन्द भागनतैं प्रापति, तुम सब ज्ञायकजी ॥ विन काम० ॥ ५ ॥

४८

राग काफी।

अहो यह उपदेशमाहीं, खूब चित्त लगावना। होयगा कल्याननेरा, सुख अनंत बढ़ावना ॥ टेक ॥ रहित दूषन विश्वभूषन, देव जिनपति ध्यावना। गगनवत निर्मल अचल मुनि, तिनहिं शीस नवावना ॥ अहो० ॥ १ ॥ धर्म अनुकंपा प्रधान, न जीव कोई सतावना। सप्ततत्त्वपरीक्षना करि, हृदय श्रद्धा लावना ॥ अहो० ॥ २ ॥ पुद्गलादिकतैं पृथक्, चैतन्य ब्रह्म लखावना। या विधि विमल सम्यक्त धरि, शंकादि पंक बहावना ॥ अहो० ॥ ३ ॥ रुचें भव्यनको वचन जे, शठनको न सुहावना। चन्द्र लखि जिमि कुमुद

विकसै, उपल नहिं विकसावना ॥ अहो० ॥ ४ ॥
भागचंद विभावतजि, अनुभव स्वभावित भावना ।
या शरण न अन्य जगना–रन्यमें कहुँ पावना ॥
अहो० ॥ ५ ॥

४९

राग काफी ।

ऐसे विमल भाव जब पावै, तब हम नरभव सुफल कहावै ॥ क ॥ दरशबोधमय निज आतम लखि, परद्रव्यनिको नहिं अपनावै । मोह–राग–रुष अहित जान तजि, झटित दूर तिनको छिटकावै ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ कर्म शुभाशुभबंध उदयमें, हर्ष विषाद चित्त नहिं ल्यावै । निज-हित-हेत विराग ज्ञान लखि, तिनसों अधिक प्रीति उपजावै ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ विषय चाह तजि आत्मवीर्य सजि, दुखदायक विधिबंध खिरावै । भागचन्द शिवसुख सब सुखमय, आकुलता विन लखि चित चावै ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥

५०

राग काफी ।

प्रभूपै यह वरदान सुपाऊं, फिर जगकीचबीच नहिं आऊं ॥ टेक ॥ जल गंधाक्षत पुष्प सुमोदक, दीप धूप फल सुन्दर ल्याऊँ । आनँदजनक कनकभाजन धरि, अर्घ अनर्घ बनाय चढ़ाऊँ ॥ प्रभूपै० ॥ १ ॥

आगमके अभ्यासमाहिं पुनि, चित एकाग्र सदैव लगाऊं। संतनकी संगति तजिके मैं, अंत कहूं इक छिन नहिं जाऊं॥ प्रभूपै०॥ २॥ दोषवादमें मौन रहूं फिर, पुण्यपुरुषगुन निशिदिन गाऊं। मिष्ट स्पष्ट सबहिसों भाषौं, वीतराग निज भाव बढ़ाऊं॥ प्रभूपै०॥ ३॥ बाहिजदृष्टि ऐंचके अन्तर, परमानन्द-स्वरूप लखाऊं। भागचन्द शिवप्राप्त न जौलौं तौं लौं तुम चरनांबुज ध्याऊं॥ प्रभूपै०॥ ४॥

५१

लावनी।

धन्य धन्य है घड़ी आजकी, जिनधुनि श्रवन परी। तत्त्वप्रतीत भई अब मेरे, मिथ्यादृष्टि टरी॥ टेक॥ जड़तैं भिन्न लखी चिन्मूरति, चेतन स्वरस भरी। अहंकार ममकार बुद्धि पुनि, परमें सब परिहरी॥ धन्य०॥ १॥ पापपुन्य विधिबंध अवस्था, भासी अतिदुखभरी। वीतराग विज्ञानभावमय, परिनति अति विस्तरी॥ धन्य०॥ २॥ चाह-दाह विनसी वरसी पुनि, समतामेघझरी। बाढ़ी प्रीति निराकुल पदसों, भागचन्द हमरी॥ ३॥

५२

लावनी।

सफल है धन्य धन्य वा घरी, जब ऐसी अति निर्मल

होसी, परमदशा हमरी ॥ टेक ॥ धारि दिगंबरदीक्षा सुंदर, त्याग परिग्रह अरी । वनवासी कर पात्र परीषह, सहि हों धीर धरी ॥ सफल० ॥ १ ॥ दुर्धर तप निर्भर नित तप हौं, मोह कुवृक्ष करी । पंचाचारक्रिया आचर हीं, सकल सार सुथरी ॥ सफल० ॥ २ ॥ विभ्रमतापहरन झरसी निज, अनुभव-मेघ-झरी । परम शान्त भावनकी तातैं, होसी वृद्धि खरी ॥ सफल० ॥ ३ ॥ त्रेसठिप्रकृति भंग जब होसी, जुत त्रिभंग सगरी । तब केवलदर्शनविबोध सुख, वीर्यकला पसरी ॥ सफल० ॥ ४ ॥ लखि हो सकल द्रव्य गुनपर्जय, परनति अति गहरी । भागचन्द्र जब सहजहि मिल है, अचल मुकति नगरी ॥ सफल० ॥ ५ ॥

५३

राग सोरठ ।

जे दिन तुम विवेक विन खोये ॥ टेक ॥ मोह वारुणी पी अनादितैं, परपदमें चिर सोये । सुखकरंड चितपिंड आपपद, गुन अनंत नहिं जोये । जे दिन० ॥ १ ॥ होय बहिर्मुख ठानि राग रुख, कर्म बीज बहु बोये । तसु फल सुख दुख सामिग्री लखि, चितमें हरषे रोये ॥ जे दिन० ॥ २ ॥ धवल ध्यान शुचि सलिलपूरतें, आस्रव मल नहिं धोये । परद्रव्यनिकी चाह न रोकी, विविध परिग्रह ढोये ॥ जे दिन० ॥

॥ ३ ॥ अब निजमें निज जान नियत तहां, निज परिनाम समोये। यह शिवमारग समरससागर, भागचन्द हित तो ये ॥ जे दिन० ॥ ४ ॥

५४

राग दादरा।

धनि ते प्रानि, जिनके तत्त्वारथ श्रद्धान ॥ टेक ॥ रहित सप्त भय तत्त्वारथमें, चित्त न संशय आन। कर्म कर्ममलकी नहिं इच्छा, परमें धरत न ग्लानि ॥ धनि० ॥ १ ॥ सकल भावमें मूढ़दृष्टितजि, करत साम्यरसपान। आतम धर्म बढ़ावें वा, परदोष न उचरैं वान ॥ धनि० ॥ २ ॥ निज स्वभाव वा, जैनधर्ममें, निजपरथिरता दान,। रत्नत्रय महिमा प्रगटावैं, प्रीति स्वरूप महान ॥ धनि० ॥ ३ ॥ ये वसु अंगसहित निर्मल यह, समकित निज गुन जान। भागचन्द शिवमहल चढ़नको, अचल प्रथम सोपान ॥ धनि० ॥ ४ ॥

५५

राग जोड़ा।

ज्ञानी जीवनके भय होय, न या परकार ॥ टेक ॥ इह भव परभव अन्य न मेरो, ज्ञानलोक मम सार। मैं वेदक इक ज्ञानभावको, नहिं परवेदनहार ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ निज सुभावको नाश न तातैं, चहिये नहिं

रखवार। परमगुप्त निजरूप सहज ही, परका तहँ न सँचार ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ चितस्वभाव निज प्रान तासको, कोई नहीं हरतार। मैं चितपिंड अखंड न तातैं, अकस्मात भयभार ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ होय निशंक स्वरूप अनुभव, जिनके यह निरधार। मैं सो मैं पर सो मैं नाहीं, भागचन्द भ्रम डार ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

५६

राग जोड़ा।

मैं तुम शरन लियो, तुम सांचे प्रभु अरहंत ॥ टेक ॥ तुमरे दर्शन ज्ञान मुकरमें, दरशज्ञान झलकंत। अतुल निराकुल सुख आस्वादन, वीरज अरज (?) अनंत ॥ मैं तुम० ॥ १ ॥ रागद्वेष विभाग नाश भये, परम समरसी संत। पद देवाधिदेव पायो किय, दोष क्षुधादिक अंत ॥ मैं तुम० ॥ २ ॥ भूषन वसन शस्त्र कामादिक, करन विकार अनंत। तिन तुम परमौदारिक तन, मुद्रा सम शोभंत ॥ मैं तुम० ॥ ३ ॥ तुम वानीतें धर्मतीर्थ जग, माहिं त्रिकाल चलंत। निजकल्याणहेतु इन्द्रादिक, तुम पदसेव करंत ॥ मैं तुम० ॥ ४ ॥ तुम गुन अनुभवतैं निज पर गुन, दरसत अगम अचिंत। भागचन्द निजरूपप्राप्ति अब, पावैं हम भगवंत ॥ मैं तुम० ॥ ५ ॥

५७

राग गौरी।

आतम अनुभव आवै जब निज, आतम अनुभव आवै। और कछू न सुहावै जब निज, आतम अनुभव आवै ॥ टेक ॥ जिनआज्ञाअनुसार प्रथम ही, तत्त्व प्रतीति अनावै। वरनादिक रागादिकतैं निज, चिन्न भिन्न फिर ध्यावै ॥ आतम० ॥ १ ॥ मतिज्ञान फरसादि विषय तजि, आतम सम्मुख धावै। नय प्रमान निक्षेप सकल श्रुत, ज्ञानविकल्प नसावै ॥ आतम० ॥ २ ॥ चिदहं शुद्धोऽहं इत्यादिक, आपमाहिं बुध आवै। तन पै वज्रपात गिरतैं हु, नेकु न चित्त डुलावै ॥ आतम० ॥ ॥ ३ ॥ स्वसंवेद आनंद बढ़ै अति, वचन कह्यो नहिं जावै। देखन जानन चरन तीन विच, इक स्वरूप बहरावै ॥ आतम० ॥ ४ ॥ चितकर्ता चित कर्मभाव चित, परनति क्रिया कहावै। साधक साध्य ध्यान ध्येयादिक, भेद कछू न दिखावै ॥ आतम० ॥ ५ ॥ आत्मप्रदेश अदृष्ट तदपि, रसस्वाद प्रगट दरसावै। ज्यों मिश्री दीसत न अंधकों, सपरस मिष्ट चखावै ॥ आतम० ॥ ६ ॥ जिन जीवनके, संसृत पारावार पार निकटावै। भागचंद ते सार अमोलक, परम रतन वर पावै ॥ आतम० ॥ ७ ॥

५८

राग दादरा।

चेतन निज भ्रमतैं भ्रमत रहै ॥ टेक ॥ आप अभंग तथापि अंगके, संग महा दुख (पुंज) वहै। लोहपिंड संगति पावक ज्यों, दुर्धर घनकी चोट सहै ॥ चेतन० ॥ १ ॥ नामकर्मके उदय प्राप्त नर, नरकादिक परजाय धरै। तामें मान अपनपौ विरथा, जन्म जरा मृतु पाय डरै ॥ चेतन० ॥ २ ॥ कर्ता होय रागरुष ठानै, परको साक्षी रहत न यहै। व्याप्य सुव्यापक भाव विना किमि, परको करता होत न यहै ॥ चे० ॥ ३ ॥ जब भ्रमनींद त्याग निजमें निज, हित हेत सम्हारत है। वीतराग सर्वज्ञ होत तब, भागचन्द हितसीख कहै ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

५९

दोहा।

विश्वभावव्यापी तदपि, एक विमल चिद्रूप।
ज्ञानानंदमयी सदा, जयवंतौ जिनभूप ॥ १ ॥

छन्द चाल।

सफली मम लोचनद्वंद। देखत तुमको जिनचंद ॥
मम तनमन शीतल एम। अमृतरस सींचत जेम ॥२॥
तुम बोध अमोघ अपारा। दर्शन पुनि सर्व निहारा ॥
आनंद अतिन्द्रिय राजै। बल अतुल स्वरूप न त्याजै

॥३॥ इत्यादिक स्वगुन अनन्ता। अन्तर्लक्ष्मी भगवंता। बाहिज विभूति बहु सोहै। वरनन समर्थ कवि को है ॥४॥ तुम वृच्छ अशोक सुस्वच्छ। सब शोकहरनको दच्छ। तहां चंचरीक गुंजारैं। मानों तुम स्तोत्र उचारैं ॥५॥ शुभ रत्नमयूख विचित्र। सिंहासन शोभ पवित्र। तह वीतराग छवि सोहै। तुम अंतरीछ मनमोहै ॥६॥ वर कुन्दकुन्द अवदात। चामरव्रज सर्व सुहात। तुम ऊपर मघवा ढारै। धर भक्ति भाव अघ टारै ॥ ७ ॥ मुक्ताफल माल समेत। तुम ऊर्ध्व छत्रत्रय सेत। मानों तारान्वित चन्द। त्रय मूर्ति धरी दुति वृन्द ॥८॥ शुभ दिव्य पटह बहु बाजैं। अतिशय जुत अधिक विराजैं। तुमरो जस घोकैं मानों। त्रैलोक्यनाथ यह जानों ॥९॥ हरिचन्दन सुमन सुहाये। दशदिशि सुगंधि महकाये॥ अलिपुंज विगुंजत जामैं। शुभ वृष्टि होत तुम सामैं ॥१०॥ भामंडल दीप्ति अखंड। छिप जात कोट मार्तंड। जग लोचनको सुखकारी। मिथ्यातमपटल निवारी ॥११॥ तुमरी दिव्यध्वनि गाजै। विन इच्छा भविहित काजै। जीवादिक तत्त्वप्रकाशी। भ्रमतमहर सूर्यकला-सी ॥१२॥ इत्यादि विभूति अनंत। बाहिज अतिशय अरहंत। देखत मन भ्रमतम भागा। हित अहित ज्ञान उर जागा॥१३॥तुम सब लायक उपगारी। मैं दीन दुखी संसारी। तातैं सुनिये यह अरजी। तुम शरन लियो जि-नवरजी ॥१४॥ मैं जीवद्रव्य विन अंग। लागो अनादि विधि संग। ता निमित पाय दुख पाये। हम मिथ्यातादि

महा ये ॥१५॥ निज गुण कबहूं नहिं भाये। सब परपदार्थ अपनाये। रति अरति करी सुखदुखमें। व्है करि निजधर्म विमुख में ॥१६॥ पर–चाह–दाह नित दाहौ। नहिं शांत सुधा अवगाहौ॥ पशु नारक नर सुरगतमें। चिर भ्रमत भयो भ्रममनमें ॥१७॥ कीनें बहु जामन मरना। नहिं पायो सांचो शरना। अब भाग उदय मो आयो। तुम दर्शन निर्मल पायो ॥ १८ ॥ मन शांत भयो उर मेरो। बाढ़ो उछाह शिवकेरो। परविषयरहित आनन्द। निज रस चाखो निरद्वन्द ॥१९॥ मुझ काजतनें कारज हो। तुम देव तरन तारन हो॥ तातैं ऐसी अब कीजे। तुम चरन भक्ति मोह दीजे ॥ २० ॥ दृग–ज्ञान–चरन परिपूर। पाऊं निश्चय भवचूर। दुखदायक विषय कषाय। इनमें परनति नहिं जाय ॥ २१ ॥ सुरराज समाज न चाहौं। आतम समाधि अवगाहौं। पर इच्छा तो मनमानी। पूरो सब केवलज्ञानी ॥ २२ ॥

दोहा।

गनपति पार न पावहीं, तुम गुनजलधि विशाल।
भागचन्द तुव भक्ति ही, करै हमैं वाचाल ॥ २३ ॥

६०

गीतिका।

तुम परम पावन देख जिन, अरि-रज-रहस्य

विनाशनं। तुम ज्ञान-दृग-जलबीच त्रिभुवन, कमलवन प्रतिभासनं॥ आनंद निजज अनंत अन्य, अचिंत संतत परनये। बल अतुल कलित स्वभावतैं नहिं, खलित गुन अमिलित थये॥ १॥ सब राग रुष हनि परम श्रवन स्वभाव घन निर्मल दशा। इच्छारहित भवहित खिरत, वच सुनत ही भ्रमतम नशा। एकान्त-गहन-सुदहन स्यात्पद, बहन मय निजपर दया। जाके प्रमाद विषाद विन, मुनिजन सपदि शिवपद लहा॥ २॥ भूषन वसन सुमनादिविन तन, ध्यानमय मुद्रा दिपै। नासाग्र नयन सुपलक हलय न, तेज लखि खगगन छिपै॥ पुनि वदन निरखत प्रशम जल, वरखत सुहरखत उर धरा। बुधि स्वपर परखत पुन्यआकर, कलिकलिल दुरखत जरा॥ ३॥ इत्यादि बहिरंतर असाधारन, सुविभवनिधान जी। इन्द्रादिवंद पदारविंद, अनिंद तुम भगवान जी। मैं चिर दुखी परचाहतैं, तुम धम नियत न उर धरो॥ परदेवसेव करी बहुत, नहिं काज एक तहां सरो॥ ४॥ अब भागचन्द्रउदय भयो, मैं शरन आयो तुम तने। इक दीजिये वरदान तुम जस, स्वपद दायक बुध भने॥ परमाहिं इष्ट-अनिष्ट-मति तजि, मगन निज गुनमें रहों। दृग-ज्ञान-चर संपूर्ण पाऊं, भागचंद न पर चहों॥ ५॥

६१

राग दीपचन्दी ।

कीजिये कृपा मोह दीजिये स्वपद, मैं तो तेरो ही शरन लीनों है नाथ जी ॥ टेक ॥ दूर करो यह मोह शत्रुको, फिरत सदा जी मेरे साथ जी ॥ कीजिये० ॥ १ ॥ तुमरे वचन कर्मगत-मोचन, संजीवन औषधी काथजी ॥ कीजि० ॥ २ ॥ तुमरे चरन कमल बुध ध्यावत, नावत हैं पुनि निजमाथ जी ॥ कीजि०॥३॥ भागचंद मैं दास तिहारो, ठाडो जोरौं जुगल हाथ जी ॥ कीजि० ॥ ४ ॥

६२

राग दीपचन्दी ।

निज कारज काहे न सारै रे, भूले प्रानी ॥ टेक ॥ परिग्रह भारथकी कहा नाहीं, आरत होत तिहारै रे ॥ निज० ॥ १ ॥ रोगी नर तेरी वपुको कहा, तिस दिन नाहीं जारै रे ॥ निज का० ॥ २ ॥ क्रूरकृतांत सिंह कहा जगमें, जीवनको न पछारै रे ॥ निज का० ॥ ३ ॥ करनविषय विषभोजनवत कहा, अंत विसरता न धारै रे ॥ निज० ॥ ४ ॥ भागचन्द भवअंधकूपमें धर्म रतन काहे डारै रे ॥ निज का० ॥ ५ ॥

६३

हरी तेरी मति नर कौनें हरी । तजि चिन्तामन

कांच गहत शठ ॥ टेक ॥ विषय कषाय रुचत तोकों नित, जे दुखकरन अरी। हरी० ॥ १ ॥ सांचे मित्र सुहितकर श्रीगुरु, तिनकी सुधि विसरी। हरी तेरी० ॥ २ ॥ परपरनतिमें आपो मानत, जो अति विपति भरी। हरी० ॥ ३ ॥ भागचन्द जिनराज भजन कहुं, करत न एक घरी। हरी तेरी० ॥ ४ ॥

६४

सुमर मन समवसरन सुखदाई। अशरन शरन धनदकृत प्रभुको ॥ टेक ॥ मानस्तंभ सरोवर सुंदर, विमल सलिलजुत खाई। पुष्पवाटिका तुंगकोट पुनि, नाट्यशाल मनभाई ॥ सुमर मन० ॥ १ ॥ उपवन जुगल विशाल वेदिका, धुजपंकति हलकाई। हाटक कोट कल्पतरुवन पुनि, द्वादश सभा वरनि नहिं जाई ॥ सुमर० ॥ तहँ त्रिपीठपर देव स्वयंभू, राजत श्रीजिनराई। जाहि पुरंदरजुत वृन्दारक-वृन्द सु वंदन आई। भागचन्द इमि ध्यावत ते जन, पावत जगठ-कुराई ॥ सुमर मन० ॥ ३ ॥

६५

सोई है सांचा महादेव हमारा। जाके नाहीं रागरोष गद, मोहादिक विस्तारा ॥ टेक ॥ जाके अंग न भस्म लिप्त है, नहिं रुंडनकृत हारा। भूषण व्याल न माल चन्द्र नहिं, शीस जटा नहिं धारा ॥ सोई है० ॥ १ ॥

जाके गीत न नृत्य न, मृत्यु न, बैलननो न सवारा। नहिं कोपीन न काम कामिनी, नहिं धन धान्य पसारा॥ सोई है० ॥२॥ सो तो प्रगट समस्त वस्तुको, देखन जाननहारा। भागचन्द ताहीको ध्यावत, पूजत बारंबारा॥ सोई है०॥ ३॥

६६

समझाओ जी आज कोई करुनाधरन, आये थे ब्याहन काज वे तो भये, हैं विरागी पशुदया लख लख॥ टेक॥ विमल चरन पागी, करन विषय त्यागी, उनने परम ज्ञानानंद चख चख॥ समझाओ० ॥ १ ॥ सुभग मुकति नारी, उनहिं लगी प्यारी, हममों नेह कछु नहीं रख रख॥ समझाओ० ॥२॥ वे त्रिभुवनस्वामी, मदनरहित नामी, उनके अमर पूजे पद नख नख॥ समझाओ० ॥ ३॥ भागचन्द मैं तो तलफत अति-जैसे, जलमों तुरत न्यारी जक झख झख॥ समझाओ० ॥ ४ ॥

६७

गिरनारीपै ध्यान लगाया, चल सखि नेमिचन्द्र मुनि-राया॥ टेक॥ संग भुजंग रंग उन लखि तजि, शत्रु अनंग भगाया। बाल ब्रह्मचारी, व्रतधारी, शिवनारी चित लाया॥ गिरनारी० ॥ १ ॥ मुद्रा नगन मोहनिद्रा विन, नासादृग मन भाया। आसन धन्य अनन्य वन्य चित, पुष्ट (?) थूल सम थाया॥ गिरनारी ०॥२॥ जाहि

पुरन्दर पूजन आये, सुन्दर पुन्य उपाया। भागचन्द मम प्राननाथ सो, और न मोह सुहाया ॥ गि० ॥ ३ ॥

६८

राग दीपचन्दी परज।

नाथ भये ब्रह्मचारी, सखी घर मैं न रहोंगी ॥ टेक ॥ पाणिग्रहण काज प्रभु आये, सहित समाज अपारी। ततछिन ही वैराग भये हैं, पशुकरुना उर धारी ॥ नाथ० ॥ १ ॥ एक सहस्र अष्ट लच्छनजुत, वा छबिकी बलिहारी। ज्ञानानंद मगन निशिवासर, हमरी सुरत विसारी ॥ नाथ० ॥२॥ मैं भी जिनदीक्षा धरि हों अब जाकर श्रीगिरनारी। भागचन्द इमि भनत सखिनसों, उग्रसेनकी कुमारी ॥ नाथ० ॥ ३ ॥

६९.

राग दीपचन्दी कानेर।

जानके सुज्ञानी, जैनवानीकी सरधा लाइये ॥ टेक ॥ जा विन काल अनंते भ्रमता, सुख न मिलै कहूं प्रानी ॥ जानके० ॥ १ ॥ स्वपर विवेक अखंड मिलत है जाहीके सरधानी ॥ जानके० ॥ २ ॥ अखिलप्रमान-सिद्ध अविरुद्धन, स्यात्पद शुद्ध निशानी ॥ जानके० ॥ ३ ॥ भागचन्द सत्यारथ जानी, परमधरमरज-धानी ॥ जानके० ॥ ४ ॥

७०

राग दीपचन्दी धनाश्री ।

तू स्वरूप जाने विन दुखी, तेरी शक्ति न हलकी वे ॥ टेक ॥ रागादिक वर्णादिक रचना, सोहै सब पुद्गलकी वे ॥ तू स्व० ॥ १ ॥ अष्ट गुनातम तेरी मूरति, सो केवलमें झलकी वे ॥ तू स्व० ॥ २ ॥ जगी अनादि कालिमा तेरे, दुस्त्यज मोहन मलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ३ ॥ मोह नसैं भासत है मूरत, पँक नसैं ज्यों जलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ४ ॥ भागचन्द सों मिलत ज्ञान सों, स्फूर्ति अखंड स्वबलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ५ ॥

७१

राग दीपचन्दी ।

महिमा जिनमतकी, कोई वरन सकै बुधिवान ॥ टेक ॥ काल अनंत भ्रमत जिय जा विन, पावत नहिं निज थान ॥ परमानन्दधाम भये तेही, तिन कीनों सरधान ॥ महिमा० ॥ १ ॥ भव मरुथलमें ग्रीषमरितु रवि, तपत जीव अति प्रान। ताको यह अति शीतल सुंदर, धारा सदन समान ॥ महिमा० ॥ २ ॥ प्रथम कुमत मनमें हम भूले, कीनी नाहिं पिछान। भागचन्द अब याको सेवत, परम पदारथ जान ॥ महिमा० ॥ ३ ॥

७२

राग दीपचन्दी सोरठ।

प्रानी समकित ही शिवपंथा। या विन निर्मल सब ग्रंथा ॥टेक॥ जा विन बाह्यक्रिया तप कोटिक, सफल वृथा है रंथा ॥ प्रानी० ॥ १ ॥ हयजुतरथ भी सारथ विन जिमि, चलन नहीं ऋजु पंथा ॥ प्रानी० ॥ २ ॥ भागचन्द सरधानी नर भये, शिवलछमीके कंथा ॥ प्रानी० ॥ ३ ॥

७३

राग दीपचन्दी।

तेरे ज्ञानावरनदा परदा, तातैं सूझत नहिं भेद स्व परदा ॥ टेक ॥ ज्ञान विना भवदुख भोगै तू, पंछी जिमि विन परदा ॥ तेरे० ॥ १ ॥ देहादिकमें आपौ मानत, विभ्रममदवश परदा ॥ तेरे० ॥ २ ॥ भागचन्द भव विनसै वासी, होय त्रिलोक उपरदा ॥ तेरे० ॥३॥

७४

राग दीपचंदी खम्माचकी।

जैनमन्दिर हमको लागै प्यारा ॥टेक॥ कैंधौं व्याह मुकति मंगल ग्रह, तोरनादि जुत लसत अपारा ॥ जैन० ॥ १ ॥ धर्मकेतु सुखहेत देत गुन, अक्षय पुन्य रतनभंडारा ॥ जैन० ॥२॥ कहुं पूजन कहुं भजन होत हैं, कहुं बरसत पुन श्रुतरसधारा ॥ जैन० ॥ ३ ॥ ध्या-

नारूढ़ विराजत हैं जहां, वीतराग प्रतिबिम्ब उदारा ॥ जैन० ॥ ४ ॥ भागचन्द तहां चलिये भाई, तजिकै गृहकारज अघ भारा ॥ जैन० ॥ ५ ॥

७५

राग दीपचन्दी ।

जिनमन्दिर चल भाई, शिव-तिय-ब्याह सुमंगलग्रहवन ॥ टेक ॥ जन धर्मिष्ट समाज सकल तहाँ, तिष्ठत मोद बढाई । अमल धर्मआभूषनमंडित, एकसों एक सवाई ॥ जिन० ॥ १ ॥ धर्म ध्यान निर्धूम हुताशन, कुंड प्रचंड बनाई । होमत कर्महविष्य सुपंडित, श्रुत धुनि मंत्र पढाई ॥ जिन० ॥ २ ॥ मनिमय तोरनादि जुत शोभन, केतुमाल लहकाई । जिनगुन पढ़न मधुर सुर छावत, बुधजन गीत सुहाई ॥ जिन० ॥ ३ ॥ वीन मृदंग रंगजुत बाजत, शोभा वरनि न जाई । भागचंद वर लख हरषत मन, दूलह श्रीजिनराई ॥ जिनमंदिर० ॥ ४ ॥

७६

भववनमें, नहीं भूलिये भाई । कर निज थलकी याद ॥ टेक ॥ नर परजाय पाय अति सुंदर, त्यागहु सकल प्रमाद । श्रीजिनधर्म सेय शिव पावत, आतम जासु प्रसाद ॥ भवव० ॥ १ ॥ अबके चूकत ठीक न पड़सी, पासी अधिक विषाद । सहसी नरक वेदना

पुनि तहां, सुणसी कौन फिराद ॥ भव० ॥ २ ॥ भागचन्द श्रीगुरु शिक्षा विन, भटका काल अनाद । तू कर्ता तूही फल भोगत, कौन करै बकवाद ॥ भव०॥३॥

७७

जे सहज होरीके खिलारी, तिन जीवनकी बलिहारी ॥ टेक॥ शांतभाव कुंकुम रस चन्दन, भर ममता पिचकारी । उड़त गुलाल निर्जरा संवर, अंवर पहरैं भारी ॥ जे० ॥ १ ॥ सम्यकदर्शनादि सँग लेकै, परम सखा सुखकारी । भींज रहे निज ध्यान रंगमें, सुमति सखी प्रियनारी ॥ जे० ॥ २ ॥ कर स्नान ज्ञान जलमें पुनि, विमल भये शिवचारी । भागचन्द तिन प्रति नित वंदन, भावसमेत हमारी ॥ जे० ॥ ३ ॥

७८

राग दीपचन्दी सोरठकी ।

लखिकै स्वामी रूपको, मेरा मन भया चंगा जी ॥टेक॥ विभ्रम नष्ट गरुड लखि जैसे, भगत भुजंगा जी ॥ लखि० ॥ १ ॥ शीतल भाव भये अब न्हायो, भक्ति सुगंगा जी ॥ लखि० ॥ २ ॥ भागचन्द अब मेरे लागो, निजरसरंगा जी ॥ लखिकै० ॥ ३ ॥

७९

राग दीपचन्दी इमन ।

स्वामीरूप अनूप विशाल, मन मेरे बसा ॥टेक॥

हरिगन चमरवृन्द ढोरत तहां, उज्जल जेम मराल ॥ स्वामी० ॥ १ ॥ छत्रत्रय ऊपर राजत पुनि, सहित सुमुक्तामाल ॥ स्वामी० ॥ २ ॥ भागचन्द ऐसे प्रभु-जीको, नावत नित्य त्रिकाल ॥ स्वामी० ॥ ३ ॥

८०

राग दीपचन्दी ।

करौ रे भाई, तत्त्वारथ सरधान । नरभव सुकुल सुक्षेत्र पायके ॥ टेक ॥ देखन जाननहार आप लखि, देहादिक परमान ॥ करौ रे भाई० ॥ १ ॥ मोह रागरुष अहित जान तजि, बंधहु विधि दुखदान ॥ करौ रे भाई० ॥ २ ॥ निज स्वरूपमें मगन होय कर, लगन-विषय दो भान ॥ करौ रे भाई० ॥ ३ ॥ भागचन्द साधक है साधो, साध्य स्वपद अमलान ॥ करौ रे भाई० ॥ ४ ॥

८१

आनन्दाश्रु बहैं लोचनतैं, तातैं आनन न्हाया । गद्गद स्पष्ट वचनजुत निर्मल, मिष्टगान सुरगाया ॥टेक॥ भव वनमें बहु भ्रमन कियो तहां, दुख दावा-नल ताया । अब तुम भक्तिसुधारस वापी,-में अवगाह कराया ॥ आ० ॥ १ ॥ तुम वपुदर्पनमें मैंने अब, आतमस्वरूप लखाया । सर्वकषाय नष्ट भये अब ही, विभ्रम दुष्ट भगाया ॥ आ० ॥ २ ॥ कलपवृक्ष मैंने निज

गृहके, आंगनमांझ उगाया। स्वर्ग विमोक्ष विलास वास पुनि, मम करतलमें आया॥ आ० ॥ ३ ॥ कलिमल पंक सकल अब मैंने, चिनमे दूर बहाया। भागचन्द तुम चरनाम्बुजको भक्तिसहित सिर नाया॥ आ० ४॥

८२

राग दीपचन्दी परज।

महाराज श्रीजिनवर जी, आज मैंने प्रभुदर्शन पाये॥ टेक॥ तुमरे ज्ञान द्रव्य गुन पर्जय, निज चित गुन दरशाये। निज लच्छननैं सकल विलच्छन, ततछिन पर दृग आये॥ म० ॥ १ ॥ अप्रशस्त संक्लेश भाव अघ,-कारन ध्वस्त कराये। राग प्रशस्त उदयतैं निर्मल, पुन्य समस्त कमाये॥ म० ॥२॥ विषय कषाय अताप नस्यो सब, साम्य सरोवर न्हाये। रुचि भई तुम समान होवेकी, भागचन्द गुन गाये॥ म० ॥ ३ ॥

८३

राग दीपचन्दी जोड़ी।

जिन स्वपरहिताहित चीना, जीव तेही हैं साचै जैनी॥ टेक॥ जिन बुधछैनी पैनीतैं जड़, रूप निराला कीना, परतैं विरच आपमे राचे, सकल विभाव विहीना॥ जि० ॥ १ ॥ पुन्य पाप विधि बंध उदयमें, प्रमुदित होत न दीना। सम्यकदर्शन ज्ञान चरन निज, भाव सुधारस भीना॥ जिन० ॥ २ ॥

विषयचाह तजि निज वीरज मजि, करत पूर्वविधि छीना। भागचन्द साधक ह्वै साधत, साध्य स्वपद स्वाधीना ॥ जिन० ॥ ३ ॥

८४

राग दीपचन्दी।

यह मोह उदय दुख पावै, जगजीव अज्ञानी ॥ टेक ॥ निज चेतनस्वरूप नहिं जानै, परपदार्थ अपनावै। पर परिनमन नहीं निज आश्रित, यह तहँ अति अकुलावै ॥ यह० ॥ १ ॥ इष्ट जानि रागादिक सेवै, ते विधिबंध बढ़ावै। निजहितहेत भाव चित सम्यक्दर्शनादि नहिं ध्यावै ॥ यह० ॥ इन्द्रियतृप्ति करनके काजै, विषय अनेक मिलावै। ते न मिलैं तब खेद खिन्न ह्वै, समसुख हृदय न ल्यावै ॥ यह० ॥ ३ ॥ सकल कर्मछय लच्छन लच्छित, मोच्छदशा नहिं चावै। भागचन्द ऐसे भ्रमसेती, काल अनंत गमावै ॥ यह मोह० ॥ ४ ॥

८५

प्रेम अब त्यागहु पुद्गलका। अहितमूल यह जाना सुधीजन ॥ टेक ॥ कृमि–कुल–कलित स्रवत नव द्वारन, यह पुतला मलका। काकादिक भखते जु न होता, चामतना खलका ॥ प्रेम० ॥ १ ॥ काल-व्याल मुख थित इसका नहिं, है विश्वास पलका। क्षणिक

मात्रमें विघट जात है, जिमि बुद्बुद जलका ॥ प्रेम० ॥ २ ॥ भागचन्द क्या सार जानके, तू या सँग ललका। तातैं चित अनुभव कर जो तू, इच्छुक शिवफलका ॥ प्रेम० ॥ ३ ॥

८६

सहज अबाध समाध धाम तहाँ, चेतन सुमति खेलैं होरी ॥ टेक ॥ निजगुनचंदनमिश्रित सुरभित, निर्मल कुंकुम रस घोरी। ममता पिचकारी अति प्यारी, भर जु चलावत चहुँ ओरी ॥ सहज० ॥ १ ॥ शुभ संवर सुअबीर आडंबर, लावत भरभर कर जोरी। उड़त गुलाल निर्जरा निर्भर, दुखदायक भव थिति टोरी ॥ सहज० ॥ २ ॥ परमानंद मृदंगादिक धुनि, विमल विरागभावधोरी। भागचंद दृग--ज्ञान--चरनमय, परिनत अनुभव रँग बोरी ॥ सहज० ॥३॥

८७

सत्ता रंगभूमिमें, नटत ब्रह्म नटराय ॥ टेक ॥ रत्नत्रय आभूषणमंडित, शोभा अगम अथाय। सहज सखा निशंकादिक गुन, अतुल समाज बढ़ाय ॥ सत्ता रंग० ॥ १ ॥ समता बीन मधुररस बोलै, ध्यान मृदंग बजाय। नदत निर्जरा नाद अनूपम, नूपुर संवर ल्याय॥ सत्ता रंग० ॥२॥ लय निज-रूप-मगनता-ल्यावत, नृत्य सुज्ञान कराय। समरस गीतालापन पुनि जो, दुर्लभ

जगमह आय ॥ सत्ता रंग० ॥ ३ ॥ भागचन्द आपहि रीझत तहाँ, परम समाधि लगाय । तहाँ कृतकृत्य सु होत मोक्षनिधि, अतुल इनामहिं पाय ॥ सत्ता० ॥ ॥ ४ ॥

इति श्रीभागचन्द्रपदावली समाप्त ।

जैनपदसंग्रह

तृतीय भाग।

प्रकाशक

जैन ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय।

श्रीवीतरागाय नमः।

जैनपदसंग्रह

तृतीय भाग।

अर्थात्

आगरा निवासी कविवर भूधरदासजी कृत

पदविनतियोंका संग्रह।

जिसे

श्रीजैन ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालयके मालिकने

बम्बईके

नेटिव ओपिनियनप्रेसमें त्रि. वा. परांजपेके

प्रबंधसे छपाया।

भाद्रपद वि० सं० १९८३।

द्वितीयावृत्ति] * [मूल्य पाँच आने।

प्रकाशक
छगनमल बाकलीवाल
मालिक
जैन ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय
हीराबाग, पो० गिरगांव—बम्बई ।

मुद्रक—
विनायक बा. परांजपे,
नेटिव ओपिनियन प्रेस,
गिरगांव—बॅकरोड, मुंबई.

पदोंकी वर्णानुक्रमणिका ।

पद संख्या.

श्रीजिनाय नमः ।

जैन पदसंग्रह ।

तृतीयभाग ।

अर्थात्

कविवर भूधरदासजीकृत भजनोंका संग्रह ।

---

१. राग सोरठ ।

लगी लो नाभिनंदनसों । जपत जेम चकोर चकई, चन्द भरताकों ॥ लगी लो० ॥ १ ॥ जाउ तन धन जाउ जोवन, प्रान जाउ न क्यों । एक प्रभुकी भक्ति मेरे, रहो ज्योंकी त्यों ॥ लगी लो० ॥ २ ॥ और देव अनेक सेये, कछु न पायो हों । ज्ञान खोयो गांठिको, धन करत कुवानिज[1] ज्यों ॥ लगी लो० ॥ ३ ॥ पुत्र मित्र कलत्र ये सब सगे अपनी गों[2] । नरककूपउद्धरन श्रीजिन, समझ भूधर यों ॥ लगी लो० ॥ ४ ॥

---

१ बुरा व्यापार । २ गरज ।

२. राग गौरी।

अजितजिनेसुर अघहरणं। अघहरणं अशरणशरणं ॥ टेक ॥ निरखत नैन तनक नहिं त्रपते, आनँदजनक कनकवरणं ॥ अजित० ॥ १ ॥ करुना भीजे [1]वायक जिनके, गण-नायक उर [2]आभरणं। मोह महारिपु घायक, [3]सायक, सुखदायक दुखछयकरणं ॥ अजित० ॥ २ ॥ परमातम प्रभु पतितउधारन, [4]वारणलच्छन पगधरणं। [5]मनमथमारण विपतिविदारण, शिवकारण तारण तरणं ॥ अजित० ॥ ३ ॥ भवआतापनिकन्दन चन्दन, जगवंदन वांछाभरणं। जय जिनराज जगत वंदत जस, जन भूधर वंदत चरणं ॥ अजित० ॥ ४ ॥

३. राग काफी।

सीमंधरस्वामी, मैं चरननका चेरा ॥ टेक ॥ इस संसार असारमें कोई, और न [6]रच्छक मेरा ॥ सीमंधर० ॥१॥ लख चौरासी जोनिमें मैं, फिरि

---

१ वचन। २ नाश करनेवाला। ३ बाण। ४ हाथीका चिह्न। ५ काम। ६ रक्षक।

फिरि कीनौं फेरा। तुम महिमा जानी नहीं प्रभु, देख्या दुःख घनेरा॥ सीमंधर०॥२॥ भाग उदयतैं पाइया अब, कीजे नाथ निबेरा। बेगि दया करि दीजिये मुझे, अविचलथान बसेरा॥ सीमंधर०॥३॥ नाम लिये अघ ना रहै ज्यों, ऊगे भान अँधेरा। भूधर चिन्ता क्या रही ऐसा, समरथ साहिब तेरा॥ सीमंधर०॥४॥

४. राग सोरठ।

वा पुरके वारणें जाऊं॥ टेक॥ जम्बूद्वीप विदेहमें, पूरव दिश सोहै हो। पुंडरीकिनी नाम है, नर सुर मन मोहै हो॥ वा पुर०॥१॥ सीमंधर शिवके धनी, जहँ आप विराजै हो। बारह गण विच पीठपै, शोभानिधि छाजै हो॥ वा पुर०॥२॥ तीन छत्र माथैं दिपैं, वर चामर वीजै हो। कोटिक रतिपति रूपपै, न्योछावर कीजै हो॥ वा पुर०॥३॥ निरखत विरख अशो-

---

१ अपार। २ मोक्ष। ३ पाप। ४ दरवाजे। ५ मस्तकपर। ६ ढुरता है। ७ कामदेव। ८ वृक्ष।

कको, शोकावलि भाजै हो। वानी वरसै अमृत सी, जलधर[1] ज्यों गाजे हो॥ वा पुर०॥ ४॥ वरसैं सुमनसुहावनें, सुरदुंदभि[2] गाजै हो। प्रभु तन तेजसमूहसों, ससि[3] सूरज लाजै हो॥ वा पुर०॥ ५॥ समोसरन विधि वरनतें, बुधि वरन न पावें हो। सब लोकोत्तर लच्छमी, देखें वनि आवें हो॥ वा पुर०॥ ६॥ सुरनर मिलि आवें सदा, सेवा अनुरागी हो। प्रकट निहारें नाथकों, धनि वे बड़भागी हो। वा पुर०॥ ७॥ भूधर विधिसों भावसों, दीनी त्रय फेरी हो। जैवन्ती वरतो सदा, नगरी जिनकेरी हो॥ वा पुर०॥ ८॥

५. राग सोरठ।

अज्ञानी पाप धतूरा न बोय॥ टेक॥ फल चाखनकी वार भरै दृग, मर है मूरख रोय॥ अज्ञानी०॥ १॥ किंचित् विषयनिके सुख कारण, दुर्लभ देह न खोय। ऐसा अवसर फिर न मिलैगा, इस नींदड़ी न सोय॥ अज्ञानी०॥

---

१ समुद्र। २ पुष्प। ३ चन्द्र।

॥ २ ॥ इस विरियाँमें धर्म-कल्प-तरु, सींचत स्याने लोय । तू विष बोवन लागत तो सम, और अभागा कोय ॥ अज्ञानी० ॥ ३ ॥ जे जगमें दुखदायक बेरस, इसहीके फल सोय । यों मन भूधर जानिकै भाई, फिर क्यों भोंदू होय ॥ अज्ञानी० ॥ ४ ॥

६. राग सोरठ।

मेरे मन सूवा, जिनपद पींजरे वसि, यार लाव न वार रे ॥ टेक ॥ संसारमेंवलवृच्छ सेवत, गयो काल अपार रे । विषय फल तिस तोड़ि चाखे, कहा देख्यौ सार रे ॥ मेरे मन० ॥ १ ॥ तू क्यों निचिन्तो सदा तोकों, तकत काल मँजार रे । दावै अचानक आन तब तुझे, कौन लेय उबार रे ॥ मेरे मन० ॥ २ ॥ तू फँस्यो कर्म कुफन्द भाई, छुटै कौन प्रकार रे । तैं मोह-पंछी-वधक-विद्या, लखी नाहिं गँवार रे ॥ मेरे मन० ॥ ॥ ३ ॥ है अजौं एक उपाय भूधर, छुटै जो

१ बेला-समय । २ विवेकी । ३ लोग । ४ निश्चिन्त । ५ बिल्ली ।

नर धार रे । रटि नाम राजुलरमनको, पशुबंध छोड़नहार रे ॥ मेरे मन० ॥ ४ ॥

७. राग सोरठ ।

भलो चेत्यो वीर नर तू, भलो चेत्यो वीर ॥ टेक ॥ समुझि प्रभुके शरण आयो, मिल्यो ज्ञान वजीर ॥ भलो० ॥ १ ॥ जगतमें यह जनम हीरा, फिर कहां थो धीर । भली वार विचार छाँड्यो, कुमति कामिनि सीर[1] ॥ भलो० ॥ २ ॥ धन्य धन्य दयाल श्रीगुरु, सुमरि गुणगंभीर । नरक परतें राखि लीनों, वहुत कीनी भीर[2] ॥ भलो० ॥ ३ ॥ भक्ति नौका लही भागनि, कितेक[3] भवदधिनीर । ढील अब क्यों करत भूधर, पहुँच पैली तीर ॥ भलो० ॥ ४ ॥

८. राग सोरठ ।

सुन ज्ञानी प्राणी, श्रीगुरु सीख सयानी ॥ टेक ॥ नरभव पाय विषय मति सेवो, ये दुरगति अगवानी ॥ सुन० ॥ १ ॥ यह भव कुल यह तेरी महिमा, फिर समझी जिनवानी ।

१ साँझा । २ सहाय । ३ कितना ।

इस अवसरमें यह चपलाई, कौन समझ उर आनी ॥ सुन० ॥ २ ॥ चंदन काठ-कनकके भाजन, भरि गंगाका पानी । तिल खालि राँधत मंदमती जो, तुझ क्या रीस बिरानी ॥ सुन० ॥ ३ ॥ भूधर जो कथनी सो करनी, यह बुधि है सुखदानी । ज्यों मशालची आप न देखै, सो मति करै कहानी ॥ सुनि० ॥

९. राग सोरठ ।

सुनि ठगनी माया, तैं सब जग ठग खाया ॥ टेक ॥ टुक विश्वास किया जिन तेरा, सो मूरख पिछताया ॥ सुनि० ॥ १ ॥ आपा तनक दिखाय बीजे ज्यौं, मूढमती ललचाया । करि मद अंध धर्म हर लीनौं, अंत नरक पहुँचाया ॥ सुनि० ॥ २ ॥ केते कंथ किये तैं कुलटा, तो भी मन न अघाया । किसहीसौं नहिं प्रीति निबाही, वह तजि और लुभाया ॥ सुनि० ॥ ३ ॥ भूधर छलत फिरै यह सबकों, भौंदू करि जग पाया । जो इस ठगनीकों ठग बैठे, मैं तिसको सिर नाया ॥ सुनि० ॥ ४ ॥

१ बिजलीके समान ।

१०.

वे कोई अजब तमासा, देख्या बीच जहान वे, जोर तमासा सुपनेकासा ॥ टेक ॥ एकोंके घर मंगल गावैं, पूगी[1] मनकी आसा। एक वियोग भरे बहु रोवैं, भरि भरि नैन निरासा ॥ वे कोई० ॥ १ ॥ तेज तुरंगनिपै चढ़ि चलते, पहिरैं मलमल खासा। रंक भये नागे अति डोलैं, ना कोइ देय दिलासा[2] ॥ वे कोई० ॥ २ ॥ तरकैं[3] राज तख्त[4]पर बैठा, था खुशवक्त खुलासा। ठीक दुपहरी मुद्दत आई, जंगल कीना वासा ॥ वे कोई० ॥३॥ तन धन अथिर निहायत[5] जगमें, पानीमाहिं पतासा। भूधर इनका गरब करैं जे, फिट्ट[6] तिनका जनमासा[7] ॥ वे कोई० ॥ ४ ॥

११. राग ख्याल।

जगमें जीवन थोरा, रे अज्ञानी जागि ॥टेक॥ जनम ताड़ तरुतैं पड़ै, फल संसारी जीव। मौत महीमें आय हैं, और न ठौर सदीव ॥ जगमें०

---

१ पूरी हुई। २ धीरज। ३ सबेरे। ४ सिंहासन। ५ सर्वथा। ६ धिक। ७ मनुष्यजन्म।

॥ १ ॥ गिर-सिर दिवला[1] जोइया, चहुँदिशि बाजै[2] पौन। बलत अचंभा मानिया, बुझत अचंभा कौन ॥ जगमें० ॥ २ ॥ जो छिन जाय सो आयुमें, निशि दिन ढूकै[3] काल। बांधि सकै तो है भला, पानी पहिली पाल ॥ जगमें० ॥ ३ ॥ मनुष-देह दुर्लभ्य है, मति चूकै यह दाव। भूधर राजुल-कंतकी[4], शरण सिताबी आव ॥ जगमें० ॥ ४ ॥

१२. राग ख्याल।

गरव नहिं कीजै रे, ऐ नर निपट गँवार ॥ टेक ॥ झूठी काया झूठी माया, छाया ज्यों लखि लीजै रे ॥ गरव० ॥ १ ॥ कै छिन सांझ सुहागरु जोबन, कै दिन जगमें जीजै[5] रे ॥ गरव० ॥ २ ॥ बेगा[6] चेत विलम्ब तजो नर, बंध बढ़ै तिथि[7] छीजै रे ॥ गरव० ॥ ३ ॥ भूधर पलपल हो है भारी, ज्यों ज्यों कमरी भीजै रे ॥ गरव० ॥ ४ ॥

१३. राग ख्याल।

थांकी कथनी म्हांनें प्यारी लगै जी, प्यारी

---

१ दीपक। २ चलै। ३ निकट आवै। ४ श्रीनेमिनाथकी। ५ जीवेंगे। ६ जल्दी। ७ आयु।

लगै म्हांरी भूल भगै जी ॥ टेक ॥ तुमहित हांक विना हो श्रीगुरु, सूतो जियरो काई जगै जी ॥ थांकी० ॥ १ ॥ मोहनिधूलि मेलि म्हारे मांथै, तीन रतन म्हांरा मोह ठगै जी । तुम पद ढोकैत सीस झरी रज, अब ठगको कर नाहिं वगै जी ॥ थांकी० ॥ २ ॥ टूव्यो चिर मिथ्यात महाज्वर, भागां मिल गया वैद मगै जी । अंतर अरुचि मिटी मम आतम, अब अपने निजदर्व पगै जी ॥ थांकी० ॥ ३ ॥ भव वन भ्रमत बढ़ी तिसना तिस, क्योंहि बुझै नहिं हियरा दगै जी । भूधर गुरुउपदेशामृतरस, शान्तमई आनँद उमगै जी ॥ थांकी० ॥ ४ ॥

१४. राग ख्याल ।

मा विलंब न लाव पठाव तहाँ री, जहँ जगपति पिय प्यारो ॥ टेक ॥ और न मोहि सुहाय कछू अब, दीसै जगत अँधारो री ॥ मा विलंब०

१ कैसे । २ मेरे । ३ सिरपर । ४ मेरा । ५ प्रणाम करनेसे । ६ भाग्यसे । ७ मार्गमें । ८ हृदय । ९ जलता है । १० कर । ११ भेज दे । १२ उसी जगह ।

॥ १ ॥ मैं श्रीनेमिदिवाकरको कब, देखों वदन उजारो। विन देखें मुरझाय रह्यो है, उर अरविंद हमारो री ! ॥ मा विलंब० ॥ २॥ तन छाया ज्यों संग रहोंगी, वे छांड़हिं तो छांरो। विन अपराध दंड मोहि दीनो, कहा चले मेरो चारो ॥ मा विलंब० ॥ ३ ॥ इहि विधि रागउदय राजुल नैं, सह्यो विरह दुख भारो। पीछें ज्ञानभान बल विनश्यो, मोह महातम कारो री ॥ मा विलंब० ॥ ४ ॥ पियके पैंड़े पैंड़ो कीनों, देखि अथिर जग सारो। भूधरके प्रभु नेमि पियासों, पाल्यो नेह करारो री ॥ मा विलंब० ॥ ५ ॥

१५. राग ख्याल।

देख्यो री ! कहीं नेमिकुमार ॥ टेक ॥ नैननि प्यारो नाथ हमारो, प्रानजीवन प्रानन आधार॥ देख्यो० ॥ १ ॥ पीव वियोग विथा बहु पीरी, पीरी भई हलदी उनहार। होउं हरी तबही जब भेटों, श्यामवरन सुंदर भरतार ॥ देख्यो० ॥ २॥

---

१ सूरज। २ कमल। ३ सूर्य। ४ पांड़ा की। ५ पीली। ६ समान।

विरह नदी असराल[1] बहै उर, बूड़त हौं वामें निरधार[2]। भूधर प्रभु पिय खेवटिया बिन, समरथ कौन उतारनहार ॥ देख्यो० ॥ ३ ॥

१६. राग पंचम।

जिनराज ना विसारो, मति जन्म वादि[3] हारो ॥ टेक ॥ नर भौ आसान नाहीं, देखो सोच समझ वारो ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ सुत मात तात तरुनी[5], इनसौं ममत निवारो। सबही सगे गरजके दुखसीर नहिं निहारो ॥ जिनराज० ॥ २ ॥ जे खायँ लाभ सब मिलि, दुर्गतमैं तुम सिधारो। नटका कुटंब जैसा, यह खेल यों विचारो ॥ जिनराज० ॥ ३ ॥ नाहक[6] पराये काजैं, आपा नरकमैं पारो। भूधर न भूल जगमैं, जाहिर दगा है यारो ॥ जिनराज० ॥ ४ ॥

१७. राग नट।

जिनराज चरन मन मति बिसरै ॥ टेक ॥ को जानैं किहिं बाँर[7] कालकी, धार[8] अचानक आनि

१ अथाह। २ निराधार। ३ वृथा खोओ। ४ सहज। ५ स्त्री। ६ वृथा। ७ समय। ८ धाड़।

परै ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ देखत दुख भजि जाहिं दशों दिश, पूजत पातकपुंज गिरै। इस संसार क्षारसागरसौं, और न कोई पार करै ॥ जिनराज० ॥ २ ॥ इक चित ध्यावत वांछित पावत, आवत मंगल विघन टरै। मोहनि धूलि परी मांथें चिर, सिर नावत ततकाल झरै ॥ जिनराज० ॥३॥ तबलौं भजन सँवार सयाने, जबलौं कफ नहिं कंठ अरै। अगनि प्रवेश भयो घर भूधर, खोदत कूप न काज सरै ॥ जिनराज० ॥४॥

१८. राग सारंग।

भवि देखि छबी भगवानकी ॥ टेक ॥ सुंदर सहज सोम आनँदमय, दाता परम कल्यानकी ॥ भवि० ॥१॥ नासादृष्टि मुदित[1] मुखवारिज[2], सीमा सब उपमानकी। अंग अडोल अचल आसन दिढ़, वही दशा निज ध्यानकी ॥ २ ॥ इस जोगासन जोगरीतिसों, सिद्ध भई शिवथानकी। ऐसें प्रगट दिखावै मारग, मुद्रा धात पखानकी ॥

१ प्रसन्न। २ कमल।

भवि० ॥३॥ जिस देखें देखन अभिलाषा, रहत न रंचक आनकी । तृपत होत भूधर जो अब ये, अंजुलि अम्रतपानकी ॥ भवि० ॥ ४ ॥

१९. राग मलार ।

अब मेरें समकित सावन आयो ॥ टेक ॥ बीति कुरीति मिथ्यामति ग्रीषम, पावस सहज सुहायो ॥ अब मेरें० ॥१॥ अनुभव दामिनि दमकन लागी, सुरति घटा घन छायो । बोलै विमल विवेक पपीहा, सुमति सुहागिन भायो ॥ अब मेरें० ॥ २ ॥ गुरुधुनि गरज सुनत सुख उपजें, मोर सुमन विहसायो । साधक भाव अँकूर उठे बहु, जित तित हरष सवायो ॥ अब मेरें० ॥ ३ ॥ भूल धूल कहिं मूल न सूझत, समरस जल झर लायो । भूधर को निकसै अब बाहिर, निज निरचू घर पायो ॥ अब मेरें० ॥ ४ ॥

२०. राग सोरठ ।

भगवन्तभजन क्यों भूला रे ॥ टेक ॥ यह

---

१ अन्यकी । २ वर्षाऋतु । ३ बिजुली । ४ मेघ । ५ जिसमें पानी नहीं चता है ।

संसार रैनका सुपना, तन धन वारि-बबूला रे ॥ भगवन्त० ॥ १ ॥ इस जोवनका कौन भरोसा, पावकमें तृणपूला रे ! । काल कुदार लियें सिर ठाड़ा, क्या समझै मन फूला रे ! ॥ भगवन्त० ॥ २ ॥ स्वारथ साधे पाँच पाँव तू, परमारथकों लूला रे ! । कहु कैसें सुख पैहै प्राणी, काम करे दुखमूला रे ॥ भगवन्त० ॥ ३ ॥ मोह पिशाच छल्यो मति मारे, निज कर कंध वसूला रे । भज श्रीराजमतीवर भूधर, दो दुरमति सिर धूला रे ॥ भगवन्त० ॥ ४ ॥

२१. राग विहागरो।

नेमि विना न रहै मेरो जियरा ॥ टेक ॥ हेर री हेली तपत उर कैसो, लावत क्यों निज हाथ न नियरा ॥ नेमि विना० ॥ १ ॥ करि करि दूर कपूर कमल दल, लगत करूर कलाधर सियरा ॥

---

१ जलका। २ बुदबुदा। ३ घासका पूला। ४ लँगड़ा। ५ नेमिनाथ। ६ देख री। ७ सहेली—सखी। ८ निकट। ९ क्रूर। १० चंद्र। ११ शीतल।

नेमि विना० ॥ २ ॥ भूधर के प्रभु नेमि पिया विन, शीतल होय न राजुल हियरा ॥ नेमि विना० ॥ ३ ॥

२२. राग ख्याल ।

मन मूरख पंथी, उस मारग मति जाय रे ॥ टेक ॥ कामिनि तन कांतार[1] जहां है, कुच परवत दुखदाय रे ॥ मन मूरख० ॥ १ ॥ काम किरात[2] बसे तिह थानक[3], सरवस लेत छिनाय रे । खाय खता[4] कीचकसे बैठे, अरु रावनसे राय रे ॥ मन मूरख० ॥ २ ॥ और अनेक लुटे इस पैंड़े[5], वरनें कौन बढ़ाय रे । वरजत हों वरज्यौ रह भाई, जानि दगा मति खाय रे ॥ मन मूरख० ॥ ३ ॥ सुगुरु दयाल दया करि भूधर, सीख कहत समझाय रे । आगें जो भावै करि सोई, दीनी बात जताय रे ॥ मन मूरख० ॥ ४ ॥

२३. राग बिलावल ।

सब विधि करन उतावला[6], सुमरनकौं सीरा[7] ॥ टेक ॥ सुख चाहै संसारमें, यों होय न नीरा ॥

१ वन । २ भील । ३ स्थानमें । ४ धोखा । ५ रास्ते । ६ जल्दबाज ७ ठंढा—सुस्त ।

सब विधि० ॥ १ ॥ जैसे कर्म कमाय है, सो ही फल वीरा ! । आम न लागै आकके, नग होय न हीरा ॥ सब विधि० ॥ २ ॥ जैसा विषयनिकों चहै. न रहै छिन धीरा । त्यों भूधर प्रभुकों जपै, पहुँचै भवतीरा ॥ सब विधि० ॥ ३ ॥

२४. राग बिलावल ।

रटि रसना मेरी ऋषभ जिनन्द, सुर नर जच्छ चकोरन चन्द ॥ टेक ॥ नामी नाभि नृपतिके बाल, मरुदेवीके कँवर कृपाल ॥ रटि० ॥ १ ॥ पूज्य प्रजापति पुरुष पुरान, केवल किरन धरैं जगभान ॥ रटि० ॥ २ ॥ नरकनिवारन विरद विख्यात, तारन तरन जगतके नात ॥ रटि० ॥ ३ ॥ भूधर भजन किये निरबाह, श्रीपद-पदम भँवर हो जाह ॥ रटि० ॥ ४ ॥

२५. राग गौरी ।

मेरी जीभ आठों जाम, जपि जपि ऋषभजिनिंदजीका नाम ॥ टेक ॥ नगर अजुध्या उत्तम ठाम, जनमैं नाभि नृपतिके धाम ॥ मेरी० ॥ १ ॥ सहस अठोत्तर अति अभिराम, लसत सुलच्छन

लाजत काम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ करि थुति गान थके हरि राम, गनि न सके गणधर गुनग्राम ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ भूधर सार भजन परिनाम, अर सब खेल खेलके खांम (?) ॥ मेरी० ॥ ४ ॥

२६. राग धमाल ।

देखे देखे जगतके देव, राग रिसंसौं भरे ॥ टेक ॥ काहूके सँग कामिनि कोऊ आयुधवान खरे ॥ देखे० ॥ १ ॥ अपने औगुन आपही हो, प्रकट करें उघरे । तऊ अबूझ न बूझहिं देखो, जन मृग भोरंप रे ॥ देखे० ॥ २ ॥ आप भिखारी है किनही हो, काके दलिद हरे । चढ़ि पाथरकी नावपै कोई, सुनिये नाहिं तरे ॥ देखे० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त जा देवमें औ, ठारह दोष टरे । भूधर ता प्रति भावसौं दोऊ, कर निज सीस धरे ॥ देखे० ॥ ४ ॥

२७

देखो गरबगहेली री हेली ! जादोंपतिकी नारी ॥ टेक ॥ कहां नेमि नायक निज मुखसौं,

---

१ द्वेषसे । २ भोळापन ।

टहल करे बड़भागी। तहां गुमान कियो मति-हीनी, सुनि उर दौंसी[2] लागी॥ देखो०॥ १॥ जाकी चरण धूलिको तरसैं, इन्द्रादिक अनुरागी। ता प्रभुको तन-वसन न पीड़े,[4] हा! हा! परम अभागी॥ देखो०॥ २॥ कोटि जनम अघभंजन जाके, नामतनी बलि जइये। श्रीहरिवंशतिलक तिम सेवा, भाग्य विना क्यों पइये॥ देखो०॥ ३॥ धनि वह देश धन्य वह धरनी, जगमें तीरथ सोई। भूधरके प्रभु नेमि नवल[5] निज, चरन धरैं जहाँ दोई॥ देखो०॥ ४॥

२८. राग धमाल सारंग।

अरज करै राजुल नारी, वनवासी पिया तुम क्यों छाँरी?॥ टेक॥ प्रभु तो परम दयाल सबनिपै, सबहीके हितकारी। मोपै कठिन भये क्यों साजन!, कहिये चूक हमारी॥ अरज०॥ १॥ अब ही भोग-जोग हो वालम, यह बुधि कौन विचारी। आगें ऋषभदेवजी व्याही, कच्छ-

१ चाकरी, वस्त्र निचोड़नेके लिए। २ दावाग्निसी। ३ धोती। ४ निचोड़े। ५ श्रीनेमिनाथ।

सुकच्छकुमारी । सोई पंथ गहो पिय पाछें, हूजौ संजमधारी ॥ अरज० ॥ २ ॥ तुम विन एक पलक जो प्रीतम, जाय पहर सौ भारी । कैसें निशदिन भरौं नेमिजी !, तुम तो ममता डारी । याको ज्वाब देहु निरमोही !, तुम जीते मैं हारी ॥ अरज० ॥ ३ ॥ देखो रैनवियोगिनि चकई, सो विलखै निशि सारी । आश बाँधि अपनो जिय राखै, प्रात मिलैं पिय प्यारी । मैं निराश निरधारिनि कैसें, जीवौं अती दुखारी ॥ अरज० ॥ ४ ॥ इह विधि विरह नदीमें व्याकुल, उग्रसेनकी बारी । धनि धनि समुद्रविजयके नंदन, बूड़त पार उतारी । करहु दयाल दया ऐसी ही, भूधर शरन तुम्हारी ॥ अरज० ॥५॥

२९. राग धमाल सारंग ।

हूं तो कहा करूं कित जाउं, सखी अब कासों पीर कहूं री ! ॥ टेक ॥ सुमति सती सखियनिके आगें, पियके दुख परकासै । चिदानन्द-वल्लभकी वनिता, विरह वचन मुख भासै ॥ हूं तो० ॥ १ ॥ कंत विना कितने दिन बीते, कौलों

धीर धरौं री । पर घर हँडे निज घर छांडे, कैंसी विपति भरौं री ॥ हूं तो० ॥ २ ॥ कहत कहावतमें सब यों ही. वे नायक हम नारी । पै सुपनें न कभी मुँह बोले, हमसी कौन दुखारी ॥ हूं तो० ॥ ३ ॥ जइयो नाश कुमति कुलटाको, विरमायो पति प्यारो । हमसौं विरचि रच्यो रँग वाके. असमझ (?) नाहिं हमारो ॥ हूं तो० ॥ ४ ॥ सुंदर सुघर कुलीन नारि मैं. क्यों प्रभु मोहि न लोरैं । सत हू देखि दया न धरें चित, चेरीसों हित जोरैं ॥ हूं तो० ॥ ५ ॥ अपने गुनकी आप बड़ाई, कहत न शोभा लहिये । ऐरी ! वीर चतुर चेतनकी, चतुराई लखि कहिये ॥ हूं तो० ॥ ६ ॥ करिहौं आजि अरज जिनजीसों, प्रीतमको समझावैं । भरता भीख दई गुन मानौं, जो बालम घर आवैं ॥ हूं तो० ॥ ७ ॥ सुमति वधू यों दीन दुहागनि, दिन दिन झुरत निरासा । भूधर पीउ प्रसन्न भये विन, वसै न तिय घरवासा ॥ हूं तो० ॥ ८ ॥

१ भटके । २ प्रेम करें ।

३०. राग सोरठ।

चित ! चेतनकी यह विरियाँ रे ॥ टेक ॥ उत्तम जनम सुतन तरुनापौ[1], सुकृत[2] बेल फल फरियाँ रे ॥ चित० ॥१॥ लहि सत संगतिसौं सब समझी, करनी खोटी खरियाँ रे। सुहित सँभालि शिथिलता तजिकै, जाहैं बेली झरियाँ रे ॥ चित० ॥ २ ॥ दल बल चहल महल रूपेका, अर कंचनकी कलियाँ रे। ऐसी विभव बढ़ी कै बढ़ि है, तेरी गरज क्या सरियाँ रे ॥ चित० ॥ ३ ॥ खोय न वीर विषय खल सांटैं[3], ये कोरनकी[4] घरियाँ रे। तोरि न तनक तगा[5]हित भूधर, मुकताफलकी लरियाँ[6] रे ॥ चित० ॥ ४ ॥

३१. राग पंचम।

आज गिरिराजके शिखर सुंदर सखी, होत है अतुल कौतुक महा मनहरन ॥ टेक ॥ नाभिके नंदकों जगतके चन्दकौं, ले गये इन्द्र मिलि जन्म-मंगल करन ॥आज०॥१॥ हाथ हाथन धरे सुरन

---

१ जवानी। २ पुण्य। ३ बदलेमें। ४ करोड़ोंकी। ५ धागा, डोराके लिए। ६ लड़ी।

कंचन घंरे, छीरसागर भरे नीर निरमल वरन। सहस अर आठ गिन एक ही वार जिन, सीस सुरईशके करन लागे ढरन ॥ आज० ॥ २ ॥ नचत सुरसुन्दरीं रहस रसमों भरीं, गीत गावैं अरी देहिं ताली करन। देव दुंदभि बजे वीन बंसी मजे, एकसी परत आनंद घनकी भरन ॥ आज० ॥ ३ ॥ इन्द्र हर्षित हिये नेत्र अंजुल किये, तृपति होत न पिये रूपअम्रतझरन। दास भूधर भनें सुदिन देखें बनें, कहि थकें लोक लख जीभ न सकें वरन ॥ आज० ॥ ४ ॥

३२

ऐसी समझके सिर धूल ॥ ऐसी० ॥ टेक ॥ धरम उपजन हेत हिंसा, आचरें अघमूल ॥ ऐसी० ॥ १ ॥ छके मत-मद-पान पीके, रहे मनमें फूल। आम चाखन चहें भोंदू, बोय पेड़ बँबूल ॥ ऐसी० ॥ २ ॥ देव रागी लालची गुरु, सेय सुखहित भूल। धर्म नेगकी परख नाहीं, भ्रम हिंडोले झूल ॥ ऐसी० ॥ ३ ॥ लाभकारन

१ घड़े—कलश। २ खर्की।

रतन विणजे, परखको नहिं सूल । करत इहि विधि वणिज भूधर, विनस जै है मूल ॥ एसी० ॥ ४ ॥

३३

अव पूरीकर नींदड़ी, सुन जीया रे! चिरकाल तू सोया ॥ सुन० ॥ टेक ॥ माया मैली रातमें, केता काल विगोया ॥ अव० ॥१॥ धर्म न भूल अयान रे! विषयोंवश वाला । मार सुधारस छोड़के, पीवै जहर पियाला ॥ अव० ॥२॥ मानुष भवकी पैठमें, जग विणजी आया । चतुर कमाई कर चले, मूढ़ौं मूल गुमाया ॥ अव० ॥ ३ ॥ तिसना तज तप जिन किया. तिन बहु हित जोया । भोगमगन शठ जे रहे, तिन सरवस खोया ॥ अव० ॥ ४ ॥ काम विथा-पीड़ित जिया, भोगहि भले जानें । खाज खुजावत अंगमें, रोगी सुख मानें ॥ अव० ॥ ५ ॥ राग उरगनी जोरतें, जग डसिया भाई! सब जिय गाफिल हो रहे, मोह लहर चढ़ाई ॥

१ शहर । २ खोया । ३ सर्पनी ।

अब० ॥ ६ ॥ गुरु उपगारी गारुड़ी, दुख देख निवारैं। हित उपदेश सुमंत्रसों, पढ़ि जहर उतारैं ॥ अब० ॥ ७ ॥ गुरु माता गुरु ही पिता, गुरु सज्जन भाई। भूधर या संसारमें, गुरु शरनसहाई ॥ अब० ॥ ८ ॥

३४. राग बंगाला।

जगमें श्रद्धानी जीव जीवनमुकत हैंगे ॥ टेक ॥ देव गुरु सांचे मानें, सांचो धर्म हिये आनें, ग्रंथ ते ही सांचे जानें, जे जिनउकत हैंगे ॥ जगमें० ॥ १ ॥ जीवनकी दया पालें, झूठ तजि चोरी टालें, परनारी भालें नैन जिनके लुकत हैंगे ॥ जगमें० ॥ २ ॥ जीयमें सन्तोष धारें हियें समता विचारें, आगें को न बंध पारें, पाछेंसों चुकत हैंगे ॥ जगमें० ॥ ३ ॥ बाहिज क्रिया अराधें, अन्तर सरूप साधें, भूधर ते मुक्त लाधें, कहूं न रुकत हैंगे ॥ जगमें० ॥ ४ ॥

१ जहर उतारनेवाले। २ इस पदकी चारों टेकें निकाल डालनेसे एक घनाक्षरी (३२ वर्ण) कवित्त बन जाता है। ३ उक्त, प्रणीत, कहे हुए। ४ देखनेमें। ५ छिपते हैं, लज्जित होते हैं।

३५. राग बंगाला ।

आया रे बुढापा मानी सुधि बुधि विसरानी ॥ टेक ॥ श्रवनकी शक्ति घटी, चाल चाले अटपटी, देह लटी[2] भूख घटी, लोचन झरत पानी ॥ आया रे० ॥१॥ दाँतनकी पंक्ति टूटी, हाड़नकी संधि छूटी, कायाकी नगरि लूटी, जात नहिं पहिचानी ॥ आया रे० ॥ २ ॥ बालोंने वैरन फेरा, रोगने शरीर घेरा, पुत्रहू न आवे नेरा[4], औरोंकी कहा कहानी ॥ आया रे० ॥२॥ भूधर समुझि अब, स्वहित करैगो कब, यह गति ह्वै है जब, तब पिछतैहै प्रानी ॥ आया रे० ॥ ४ ॥

३६. राग सोरठ ।

अन्तर उज्जल करना रे भाई ! ॥ टेक ॥ कपट कृपान तजे नहिं तबलौं, करनी काज न सरना रे ॥ अन्तर० ॥ १ ॥ जप तप तीरथ जज्ञ व्रतादिक, आगमअर्थउचरना रे । विषय कषाय कीच नहिं धोयो, यों ही पचि पचि मरना रे ॥

१ इसकी भी टेक निकाल देनेसे घनाक्षरी बन जाता है । २ कमजोर हुई । ३ रंग । ४ निकट ।

अन्तर० ॥ २ ॥ बाहिर भेष किया उर शुचिसों कीयें पार उतरना रे । नाहीं है सब लोक रंजना, ऐसे वेदन वरना रे ॥ अन्तर० ॥ ३ ॥ कामादिक मनसों मन मैला, भजन किये क्या तिरना रे । भूधर नीलेंवसनपर कैसें, केसररंग उछरना रे ॥ अन्तर० ॥ ४ ॥

२७. राग सोरठ।

वीरा! थारी वान बुरी परी रे. वरज्यो मानत नाहिं ॥ टेक ॥ विषय विनोद महा बुरे रे, दुख दाता सरवंग । तू हटसौं ऐसें रमै रे, दीवे पड़त पतंग ॥ वीरा० ॥ १ ॥ ये सुख हैं दिन दोयके रे, फिर दुखकी सन्तान । कैरे कुहाड़ी लेइकै रे, मति मारै पँग जानि ॥ वीरा० ॥२॥ तनक न संकट सहि सकै रे! छिनमें होय अधीर । नरक विपति बहु दोहली रे, कैसे भरि है वीर ॥ वीरा० ॥ ३ ॥ भव सुपना हो जायगा रे, करनी रहेगी निदान । भूधर फिर पछतायगा रे, अब ही समुझि अजान ॥ वीरा० ॥४॥

१ काले कपड़ेपर। २ दीपकमें। ३ अपने हाथसे। ४ अपने पैरपर।

३८. राग काफी।

मनहंस! हमारी लै शिक्षा हितकारी ॥टेक॥
श्रीभगवानचरन पिंजरे वसि, तजि विषयनिकी यारी ॥ मन० ॥ १ ॥ कुमति कागलीसौं मति राचो, ना वह जात तिहारी। कीजे प्रीत सुमति हंसीसौं, बुध हंसनकी प्यारी ॥ मन० ॥ २ ॥ काहेको सेवत भव झीलर[1], दुखजलपूरित खारी। निज बल पंख पसारि उड़ो किन, हो शिव सरवरचारी[2] ॥ मन० ॥ ३ ॥ गुरुके वचन विमल मोती चुन, क्यों निज वान विसारी। है है सुखी सीख सुधि राखें, भूधर भूलें खारी ॥ मन० ॥ ४ ॥

३९. राग ख्याल कान्हडी।

एजी मोहि तारिये शान्तिजिनंद ॥ टेक ॥
तारिये तारिये अधम उधारिये, तुम करुनाके कंद ॥ एजी० ॥ १ ॥ हथनापुर जनमें जग जानैं, विश्वसेननृपनन्द ॥ एजी० ॥ २ ॥ धनि वह माता ऐरादेवी, जिन जाये जगचंद ॥

१ झील। २ सरोवर—तालाबका रहनेवाला।

एजी० ॥ ३ ॥ भूधर विनवै दूर करो प्रभु, सेवकके भवद्वंद ॥ एजी० ॥ ४ ॥

४०. राग ख्याल।

और सब थोथी बातें, भज ले श्रीभगवान ॥ टेक ॥ प्रभु विन पालक कोई न तेरा, स्वारथमीत जहान ॥ और० ॥ १ ॥ परवनिता जननी सम गिननी, परधन जान पखान । इन अमलों परमेसुर राजी, भाखैं वेद पुरान ॥ और० ॥ २ ॥ जिम उर अन्तर वसत निरन्तर, नारी औगुनखान । तहां कहां साहिबका वासा, दो खांड़े[1] इक म्यान ॥ और० ॥ ३ ॥ यह मत सतगुरुका उर धरना, करना कहिं न गुमान । भूधर भजन न पलक विसरना, मरना मित्र निदान ॥ और० ॥ ४ ॥

४१. राग प्रभाती।

अजित जिन विनती हमारी मान जी, तुम लागे मेरे प्रान जी ॥ टेक ॥ तुम त्रिभुवनमें कलप तरोवर, आस भरो भगवान जी ॥

---

१ दो तलवार।

अजित० ॥ १ ॥ वादि अनादि गयो भव भ्रमतैं, भयो बहुत कुलकान जी । भाग सँजोग मिले अब दीजे, मनवांछित वरदान जी ॥ अजित० ॥ २ ॥ ना हम मांगें हाथी घोड़ा, ना कछु संपति आन जी । भूधरके उर बसो जगतगुरु, जबलौं पद निरवानजी ॥ अजित० ॥ ३ ॥

४२. राग धनासरी ।

सो मत सांचो है मन मेरे ॥ टेक ॥ जो अनादि सर्वज्ञप्ररूपित, रागादिक विन जे रे ॥ सो मत० ॥ १ ॥ पुरुष प्रमान प्रमान वचन तिस, कलपित जान अने रे । राग-दोष-दूषित तिन वायक, सांचे हैं हित तेरे ॥ सो मत० ॥ २ ॥ देव अदोष धर्म हिंसा विन, लोभ विना गुरु वे रे । आदि अन्त अविरोधी आगम, चार रतन जहँ ये रे ॥ सो मत० ॥ ३ ॥ जगत भर्खो पाखण्ड परख विन, खाइ खता बहुते रे । भूधर करि निज सुबुधि कसौटी, धर्म कनक कसि ले रे ॥ सो मत० ॥ ४ ॥

---

१ वृथा । २ अन्यमत । ३ वचन ।

४३

मेरे चारौं शरन सहाई ॥ टेक ॥ जैसें जलधि परत वायसकौं[1] बोहिथ[2] एक उपाई ॥ मेरे० ॥१॥ प्रथम शरन अरहन्त चरनकी. सुरनर पूजत पाई । दुतिय शरन श्रीसिद्धनकेरी, लोक-तिलक-पुर-राई ॥ मेरे० ॥ २ ॥ तीजे सरन सर्व साधुनिकी, नगन दिगम्बर-कोई । चौथे धर्म अहिंसारूपी, सुरगमुकतिसुखदाई ॥ मेरे० ॥३॥ दुरगति परत सुजन परिजनपै. जीव न राख्यो जाई । भूधर सत्य भरोसो इनको, ये ही लेहिं बचाई ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

४४. राग सारंग।

जपि माला जिनवर नामकी ॥ टेक ॥ भजन सुधारससों नहिं धोई, सो रसना किस कामकी ॥ जपि० ॥ १ ॥ सुमरन सार और मिथ्या, पटतर धूँवा नामकी । विषम कमान समान विषय सुख, काय कोंथली[3] चामकी ॥ जपि० ॥ २ ॥ जैसे चित्रनागके मांथे, थिर मूरति चित्रामकी।

१ कौएको। २ जहाज। ३ थैली।

चित आरूढ़ करो प्रभु ऐसें, खोय गुँड़ी परिनामकी ॥ जपि० ॥ ३ ॥ कर्म वैरि अहनिशि[1] छल जोवें, सुधि न परत पल जामकी । भूधर कैसें बनत विसारें, रटना पूरन रामकी ॥ जपि० ॥४॥

४५. राग मलार ।

वे मुनिवर कब मिलि हैं उपगारी ॥ टेक ॥ साधु दिगम्बर नगन निरम्बर, संवरभूषणधारी ॥ वे मुनि० ॥ १ ॥ कंचन काच बराबर जिनके, ज्यों रिपु त्यों हितकारी । महल मसान मरन अरु जीवन, सम गरिमा[2] अरु गारी[3] ॥ वे मुनि० ॥ २ ॥ सम्यग्ज्ञान प्रधान पवन बल, तप पावक परजारी[4] । शोधत जीव सुवर्ण सदा जे, काय-कारिमा टारी ॥ वे मुनि० ॥ ३ ॥ जोरि जुगल कर भूधर विनवै, तिन पद ढोक हमारी । भाग उदय दरसन जब पाऊं, ता दिनकी बलिहारी ॥ मुनि० ॥ ४ ॥

४६. राग धमाल सारंग ।

होरी खेलौंगी, घर आये चिदानँद कन्त ॥

---

१ रातदिन । २ महिमा, बड़ाई । ३ गाली । ४ जलाई ।

टेक ॥ शिशिर[1] मिथ्यात गयो आई अब, काल्की लब्धि वसन्त ॥ होरी० ॥ १ ॥ पिय सँग खेलनको हम सखियो ! तरसीं काल अनन्त । भाग फिरे अब फाग रचानों, आयो विरहको अन्त ॥ होरी० ॥ २ ॥ सरधा गागरमें रुचिरूपी, केसर घोरि तुरन्त । आनँद नीर उमग पिचकारी, छोड़ो नीकी भन्त ॥ होरी० ॥ ३ ॥ आज वियोग कुमति सौतनिके, मेरे हरष महन्त । भूधर धनि यह दिन दुर्लभ अति, सुमति सखी विंहसन्त ॥ होरी० ॥ ४ ॥

४७. राग भैरों ।

*पारस-पद-नख-प्रकाश, अरुन[2] वरन ऐसो ॥ टेक ॥ मानों तप कुंजरके[3], सीसको सिंदूर पूर, राग दोष काननकों[4], दावानल जैसो ॥ पारस० ॥ १ ॥ बोधमई प्रातकाल, ताको रवि उदय लाल, मोक्षवधू-कुचप्रलेप, कुंकुमाभ तैसो ॥

१ ठंडी ऋतु । * यह पद सिन्दूरप्रकरके पहले श्लोक (सिन्दूरप्रकरस्तपःकँरिशिरः क्रोड़ कषायाटवी) की छाया है । २ लाल । ३ हाथीके । ४ वनको ।

पारस० ॥ २ ॥ कुशलवृक्ष दल उलास, इहि विधि बहु गुणनिवास, भूधरकी भरहु आस, दीन दासके सो ॥ पारस० ॥ ३ ॥

४८. राग धनासरी ।

शेष सुरेश नरेश रटैं तोहि, पार न कोई पावै जू ॥ टेक ॥ कांपै नपत व्योम विलसतसौं, को तारे गिन लावै जू ॥ शेष० ॥ १ ॥ कौन सुजान मेघ बूंदनकी, संख्या समुझि सुनावै जू ॥ शेष० ॥ २ ॥ भूधर सुजस गीत संपूरन, गनपति भी नहिं गावै जू ॥ शेष० ॥ ३ ॥

४९. राग रामकली ।

आदि पुरुष मेरी आस भरो जी । औगुन मेरे माफ करो जी ॥ टेक ॥ दीनदयाल विरद विसरो जी, कै विनती मोरी श्रवण धरो जी ॥१॥ काल अनादि वस्यों जगमाहीं, तुमसे जगपति जानें नाहीं । पाँय न पूजे अन्तरजामी, यह अपराध क्षमा कर स्वामी ॥ आदि० ॥ २ ॥ भक्ति प्रसाद परम पद है है, बंधी बंध दशा

---

१ किससे । २ आकाश । ३ विलस्तसे । ४ गणधर ।

मिट जै है। तब न करौं तेरी फिर पूजा, यह अपराध ख्मों[1] प्रभु दूजा ॥ आदि० ॥ ३ ॥ भूधर दोष किया बकसावै, अरु आगेको लारें लावै। देखो सेवककी ढिठवाई[2], गरुवे साहिबसों वनियाँई[3] ॥ आदि० ॥ ४ ॥

५०. राग ख्याल काफी कानडी।

तुम सुनियो साधो!, मनुवा मेरा ज्ञानी। सत गुरु भैंटा सँसा[4] मैटा, यह नीकै कारि जानी॥ टेक ॥ चेतनरूप अनूप हमारा, और उपाधि विरानी ॥ तुम सुनियो० ॥ १ ॥ पुदगल भांडा आतम खांडा, यह हिरदै ठहरानी। छीजो भीजो कृत्रिम काया, मैं निरभय निरवानी ॥ तुम सुनियो० ॥ २ ॥ मैं ही देखों मैं ही जानों, मेरी होय निशानी। शबद फरस रस गंध न धारौं, ये बातैं विज्ञानी ॥ तुम सुनियो० ॥ ३ ॥ जो हम चीन्हां सो थिर कीन्हां, हुए सुदृढ़ सरधानी। भूधर अब कैसें उतरैगा, खड़ग चढ़ा जो पानी ॥ तुम सुनियो० ॥ ४ ॥

---

१ माफ कराता है। २ ढीठता। ३ बनियांपन। ४ संदेह।

५१. राग काफी।

प्रभु गुन गाय रे, यह औसर फेर न पाय रे॥ टेक॥ मानुष भव जोग दुहेला, दुर्लभ सतसंगति मेला। सब बात भली बन आई, अरहन्त भजौ रे भाई॥ प्रभु०॥ १॥ पहलें चित-चीर[1] सँभारो, कामादिक मैल उतारो। फिर प्रीति फिटकरी दीजे, तब सुमरन रंग रँगीजे॥ प्रभु०॥ २॥ धन जोर भरा जो कूवा, परवार बढ़ें क्या हूवा। हाथी चढ़ि क्या कर लीया, प्रभु नाम विना धिक जीया॥ प्रभु०॥ ३॥ यह शिक्षा है व्यवहारी, निहचैकी साधनहारी। भूधर पैड़ी पग धरिये, तब चढ़नेको चित करिये॥ प्रभु०॥ ४॥

५२. राग हागीर कल्याण।

सुनि सुजान! पांचों रिपु[2] वश करि, सुहित करन असमर्थ अवश करि॥ टेक॥ जैसें जड़ खखारको[3] कीड़ा, सुहित सम्हाल सकें नहिं फँस करि॥ सुनि०॥ १॥ पांचनको मुखिया मन चंचल, पहले ताहि पकर रस (?) कस करि। समझ

१ वस्त्र। २ पांचांइन्द्री। ३ कफ।

देखि नायकके जीतें, जै है भाजि सहज सब लसकरि ॥ मुनि० ॥ २ ॥ इंद्रियलीन जनम सब खोयो, बाकी चल्यो जात है खस करि। भूधर सीख मान सतगुरुकी, इनसों प्रीति तोरि अब वश करि ॥ मुनि० ॥ ३ ॥

५३. राग गौरी।

देखो भाई! आतमदेव विराजै ॥ टेक ॥ इसही हूठ हाथ देवलमें, केवलरूपी राजै ॥ देखो० ॥ १ ॥ अमल उजास जोतिमय जाकी, मुद्रा मंजुल छाजै। मुनिजनपूज अचल अविनाशी, गुण वरनत बुधि लाजै ॥ देखो० ॥ २ ॥ परसंजोग समल प्रतिभासत, निज गुण मूल न त्याजै। जैसे फटिक पखान हेतसों, श्याम अरुन दुति साजै ॥ देखो० ॥ ३ ॥ 'सोऽहं' पद समतासों ध्यावत, घटहीमें प्रभु पाजै। भूधर निकट निवास जासुको, गुरु विन भरम न भाजै ॥ देखो० ॥ ४ ॥

१ लश्कर–सेना। २ साढ़ेतीन हाथके शरीररूपी मंदिरमें।

५४. राग ख्याल।

अब नित नेमि नाम भजौ ॥ टेक ॥ सच्चा साहिब यह निज जानौ, और अदेव तजौ ॥ अब० ॥ १ ॥ चंचल चित्त चरन थिर राखो, विषयनतैं वरजौ ॥ अब० ॥ २ ॥ आननतैं[1] गुन गाय निरन्तर, पाननतैं[2] पांय जजौ[3] ॥ अब० ॥३॥ भूधर जो भवसागर तिरना, भक्ति जहाज सजौ॥अब०॥४॥

५५. राग श्रीगौरी।

("माया काली नागिनि जिन डसिया सब संसार हो" यह चाल।)

काया गागरि जोंजरी[4], तुम देखो चतुर विचार हो ॥ टेक ॥ जैसें कुल्हिया कांचकी, जाके विनसत नाहीं बार हो ॥ काया० ॥ १ ॥ मांसमयी माटी लई अरु, सानी रुधिर लगाय हो। कीन्हीं करम कुम्हारने, जासों काहूकी न वसाय हो ॥ काया० ॥ २ ॥ और कथा याकी सुनौं, यामें अध उरध दश ठेह हो। जीव सलिल तहां थंभ रह्यौ भाई, अद्भुत अचरज येह हो ॥

---

१ मुखसे। २ हाथ जोड़कर। ३ नमन करो। ४ जरजरित, टूटी फूटी।

काया० ॥ ३ ॥ यासौं ममत निवारकें, नित्त रहिये प्रभु अनुकूल हो । भूधर ऐसे ख्यालका भाई, पलक भरोसा भूल हो ॥ काया० ॥ ४ ॥

५६. राग ख्याल बरवा ।

("देखनेको आई लाल मैं तो तेरे देखनेको आई" यह चाल ।)

म्हें तो थाकी आज महिमा जानी ॥ टेक ॥ अब लों नहिं उर आनी ॥ म्हें तो० ॥ १ ॥ काहेंको भव वनमें भ्रमते, क्यों होते दुखदानी ॥ म्हें तो० ॥ २ ॥ नामप्रताप तिरे अंजनसे, कीचकसे अभिमानी ॥ म्हें तो० ॥ ३ ॥ ऐसी साख बहुत सुनियत है, जैनपुराण बखानी ॥ म्हें तो० ॥ ४ ॥ भूधरको सेवा वर दीजे, मैं जांचक तुम दानी ॥ म्हें तो० ॥ ५ ॥

५७. राग विहाग ।

अरे मन चल रे, श्रीहथनापुरकी जात[1] ॥ टेक ॥ रामा[2] रामा धन धन करते, जावैं जनम विफल रे ॥ अरे० ॥ १ ॥ करि तीरथ जप तप जिनपूजा, लालच वैरी दल रे ॥ अरे० ॥ २ ॥

---

१ यात्राको । २ स्त्री ।

शांति कुंथु अर तीनों जिनका, चारु कल्याण-
कथल रे ॥ अरे० ॥ ३ ॥ जा दरसत परसत
सुख उपजत, जाहिं सकल अघ गल रे ॥ अरे०
॥४॥ देश दिशन्तरके जन आवें, गावें जिन गुन
रल रे ॥ अरे० ॥ ५ ॥ तीरथ गमन सहामी
मेला, एक पंथ द्वै फल रे ॥ अरे० ॥ ६ ॥
कायाके संग काल फिरै है, तन छायाके छल
रे ॥ अरे० ॥ ७ ॥ माया मोह जाल बंधनसौं,
भूधर वेगि निकल रे ॥ अरे० ॥ ८ ॥

५८. राग विहाग ।

जगत जन जूवा हारि चले ॥ टेक ॥ काम
कुटिल सँग बाजी माँड़ी, उन करि कपट छले ॥
जगत० ॥ १ ॥ चार कषायमयी जहँ चौपरि,
पांसे जोग रले । इत सरवस उत कामिनी
कौंड़ी, इह विधि झटक चले । जगत० ॥ २ ॥
कूर खिलार विचार न कीन्हों, ह्वै हैं ख्वार
भले । विना विवेक मनोरथ काके, भूधर सफल
फले । जगत० ॥ ३ ॥

५९. राग विहाग।

तहां लै चल री! जहां जादौपति प्यारो ॥ टेक॥ नेमि निशाकर विन यह चन्दा, तन मन दहत सकल री। तहां० ॥ १ ॥ किरन किधौं नाविक-शर-तति कै, ज्यों पावककी झल री। तारे हैं कि अँगारे सजनी, रजनी राकसदल[1] री। तहां० ॥ २ ॥ इह विधि राजुल राजकुमारी, विरह तपी बेकल री। भूधर धन्न शिवासुत[2] बादर[3], वरसायो समजल[4] री। तहां० ॥ ३ ॥

६०. राग ख्याल।

अरे! हां चेतो रे भाई ॥ टेक॥ मानुष[5] देह लही दुलही, सुघरी उघरी सतसंगति पाई। अरे हां० ॥ १ ॥ जे करनी बरनी करनी नहिं, ते समझी करनी समझाई। अरे हां० ॥२॥ यों शुभ थान जग्यो उर ज्ञान, विषैविषपान तृषा न बुझाई। अरे हां० ॥ ३ ॥ पारस पाय सुधा-

१ राक्षस। २ शिवादेवीके पुत्र नेमि। ३ बादल—मेघ। ४ शम-ममतारूपी जल। ५ टेक छोड़कर पढ़नेसे इस पदका एक मत्तगयन्द (तेईसा) सवैया बन जाता है।

रस भूधर, भीखकेमाहिं सुलाज न आई ।
अरे हां० ॥ ४ ॥

६१. राग सोरठ ।

सो गुरुदेव हमारा है साधो ॥ टेक ॥ जोग अगनिमें जो थिर राखै, यह चित चंचल पारा है ॥ सो गुरु० ॥ १ ॥ करन[1] कुरंग खरे मद-माते, जप तप खेत उजारा[2] है । संजम डोर जोर वश कीने, ऐसा ज्ञान विचारा है ॥ सो गुरु० ॥ २ ॥ जा लक्ष्मीको सब जग चाहै, दास हुआ जग सारा है । सो प्रभुके चरननकी चेरी, देखो अचरज भारा है ॥ सो गुरु० ॥ ३ ॥ लोभ सरपके कहर जहरकी, लहर गई दुख टारा है । भूधर ता रिखका[3] शिख[4] हूजे, तब कछु होय सुधारा है ॥ सो गुरु० ॥ ४ ॥

६२. राग सोरठ ।

स्वामीजी सांची सरन तुम्हारी ॥ टेक ॥ समरथ शांत सकल गुनपूरे, भयो भरोसो भारी ॥ स्वामी० ॥ १ ॥ जनम जरा जग बैरी

१ इन्द्रिय । २ उजाड़ा, नष्ट किया । ३ ऋषि-मुनिका । ४ शिष्य ।

जीते, टेव मरनकी टारी । हमहूको अजरामर करियो, भरियो आस हमारी ॥ स्वामी० ॥२॥ जनमैं मरैं धरैं तन फिरि फिरि, सो साहिब संसारी । भूधर परदालिद क्यों दलि है, जो है आप भिखारी ॥ स्वामी० ॥ ३ ॥

६३.

जीवदया व्रत तरु बड़ो, पालो पालो बड़भाग ॥ टेक ॥ कीड़ी कुंजर कुंथुवा, जेते जगजन्त । आप सरीखे देखिये, करिये नहिं भन्त[1] ॥ जीवदया० ॥ १ ॥ जैसे अपने हीयेडे[2], प्यारे निज प्रान । त्यों सबहीकों लाड़िये, निहचै यह जान ॥ जीवदया० ॥ २ ॥ फांस चुभै तुक देहमें, कछु नाहिं सुहाय । त्यों परदुखकी वेदना, समझो मन लाय ॥ जीवदया० ॥ ३ ॥ मन वचसौं अर कायसौं, करिये परकाज । किसहीकों न सताइये, सिखवैं रिखिराज ॥ जीवदया० ॥ ४ ॥ करुना जगकी मायडी[3], धीजै[4] सब कोय । धिग! धिग! निरदय भावना, कंपै

१ भेद। २ दिलमें। ३ माता। ४ प्रतीति करें।

जिय जोय ॥ जीवदया० ॥ ५ ॥ सब दंसैण सब लोयमें, सब कालमँझार । यह करनी बहु शंसिये, ऐसो गुणसार ॥ जीवदया० ॥ ६ ॥ निरदै नर भी संस्तुवे, निंदै कोइ नाहिं । पालैं विरले साहसी, धनि वे जगमाहिं ॥ जीवदया० ॥ ७ ॥ पर सुखसौं सुख होय, पर-पीड़ामौं पीर । भूधर जो चित चाहिये. मोई कर बीर! ॥ जीवदया० ॥ ८ ॥

६४.

ऐसो श्रावक कुल तुम पाय. वृथा क्यों खोवत हो ॥ टेक ॥ कठिन कठिनकर नरभव पाई, तुम लेखी आसान । धर्म विसारि विषयमें राचौ, मानी न गुरुकी आन ॥ वृथा० ॥ १ ॥ चक्री एक मतंगज पायो, तापर ईंधन ढोयो । विना विवेक विना मतिहीको, पाय सुधा पग धोयो ॥ वृथा० ॥ २ ॥ काहू शठ चिन्तामणि पायो, मरम न जानो ताय । वायस देखि उदधिमें फैंक्यो, फिर पीछे पछताय ॥ वृथा० ॥ ३ ॥

१ दर्शनोंमें–धर्मोंमें । २ लोकमें । ३ सराहिए । ४ स्तुति करे ।

सात विसन आठों मद त्यागो, करुना चित्त विचारो । तीन रतन हिरदैमें धारो, आवागमन निवारो ॥ वृथा० ॥ ४ ॥ भूधरदास कहत भविजनसों, चेतन अब तो सम्हारो । प्रभुको नाम तरन तारन जपि, कर्मफन्द निरवारो ॥ वृथा० ॥ ५ ॥

६५. राग ख्याल ।

नैनानिको वान परी, दरसनकी ॥ टेक ॥ जिनमुखचन्द चकोर चित्त मुझ, ऐसी प्रीति करी ॥ नैन० ॥ १ ॥ और अदेवनके चितवनको अब चित चाह टरी । ज्यों सब धूलि दबै दिशि दिशिकी, लागत मेघझरी ॥ नैन० ॥ २ ॥ छवी समाय रही लोचनमें, विसरत नाहिं घरी । भूधर कह यह टेव रहो थिर, जनम जनम हमरी ॥ नैन० ॥ ३ ॥

६६. चाल गोपीचन्दकी ।

यह तन जंगम रूखड़ा, सुनियो भवि प्रानी । एक बूंद इस बीच है, कछु बात न छांनी ॥ टेक ॥

१ वृक्ष । २ छुपी ।

गरभ खेतमें मास नौ, निजरूप दुराया । बाल अंकुरा बढ़ गया, तब नजरों आया ॥ १ ॥ अस्थिरसा भीतर भया, जानै सब कोई । चाम त्वचा ऊपर चढ़ी, देखो सब लोई ॥ २ ॥ अधो अंग जिस पेड़ है, लख लेहु सयाना । भुज शाखा दल आँगुरी, दृग फूल रवाँना ॥ ३ ॥ वनिता बेलि सुहावनी, आलिंगन कीया । पुत्रादिक पंछी तहां, उड़ि बासा लिया ॥ ४ ॥ निरख विरख बहु सोहना, सबके मनमाना । स्वजन लोग छाया तकी, निज स्वारथ जाना ॥ ५ ॥ काम भोग फलसों फला, मन देखि लुभाया । चाखतके मीठे लगे, पीछें पछताया ॥ ६ ॥ जरादि बलसों छबि घटी, किसही न सुहाया । काल अगनि जब लहलही, तब खोज न पाया ॥ ७ ॥ यह मानुष द्रुमकी दशा, हिरदै धरि लीजे । ज्यों हूवा त्यों जाय है, कछु जतन करीजे ॥८॥ धर्म सलिलसों सींचिके, तप धूप दिखइये । सुरग मोक्ष फल तब लगें, भूधर सुख पइये ॥ ९ ॥

१ रमणीय । २ वृक्ष । ३ पता ।

६७. कालिंगडा।

("गरीब जुलाहा ताना कौन बुनेगा" इस चालमें।)

चरखा चलता नाहीं, चरखा हुआ पुराना ॥ टेक ॥ पग खूंटे दो हालन लागे, उर मदरा खखराना। छीदी हुई पांखड़ी पांसू, फिरै नहीं मनमाना ॥ चरखा० ॥ १ ॥ रसना तकलीने बल खाया, सो अब कैसैं खूटे ॥ शबद सूत सूधा नहिं निकसै, घड़ी घड़ी पल टूटै ॥ चरखा० ॥ २ ॥ आयु मालका नहीं भरोसा, अंग चलाचल सारे। रोज इलाज मरम्मत चाहै, बैद बाढ़ही हारे ॥ चरखा० ॥ ३ ॥ नया चरखला रंगा चंगा, सबका चित्त चुरावै। पलटा वरन गये गुन अगले, अब देखें नहिं भावै ॥ चरखा० ॥ ४ ॥ मौटा महीं कातकर भाई !, कर अपना सुरझेरा ॥ अंत आगमें ईंधन होगा, भूधर समझ सबेरा ॥ चरखा० ॥ ५ ॥

६८. आरती।

आरती आदि जिनिंद तुम्हारी, नाभिकुमार कनकछविधारी ॥ आरती० ॥ टेक ॥ जुगकी

आदि प्रजा प्रतिपाली, सकल जननकी आरति टाली ॥ आरती० ॥ १ ॥ वांछापूरन सबके स्वामी, प्रगट भये प्रभु अंतरजामी ॥ आरती० ॥ २ ॥ कोटभानुजुत आभा तनकी, चाहत चाह मिटै नहिं तनकी ॥ आरती० ॥ ३ ॥ नाटक निरखि परम पद ध्यायो, राग थान वैराग उपायो ॥ आरती० ॥ ४ ॥ आदि जगतगुरु आदि विधाता, सुरग मुकति मारगके दाता ॥ आरती० ॥ ५ ॥ दीनदयाल दया अब कीजे, भूधर सेवकको ढिग लीजे ॥ आरती० ॥ ६ ॥

६९. राग सलहामारू ।

सुनि सुनि हे साथनि ! म्हारे मनकी बात । सुरति सखीसों सुमति राणी यों कहै जी । बीत्यो है साथनि म्हारी ! दीरघकाल, म्हारो सनेही म्हारे घर ना रहै जी ॥ १ ॥ ना वरज्यो रहै साथनि म्हारी चेतनराव, कारज अधम अचेतनके करै जी । दुरमति है साथनि म्हारी जात कुजात, सोई चिदातम पियको

चित्त हरै जी ॥ २ ॥ सिखयौ है साथनि म्हारी केती बार. क्यों ही कियो हठी हठ एरी हरै जी । कीजे हो साथनि म्हारी कौन उपाय, अब यह विरह विथा नहिं सही परै जी ॥ ३ ॥ चालि चालि री साथनि म्हारी. जिनजीके पास, वे उपगारी इसैं समझावसी जी । जगसी हे सखी म्हारे मस्तक भाग, जो म्हारो कंथ समझि घर आवसी जी ॥ ४ ॥ कारज हे सखी म्हारी ! सिद्ध न होय, जब लग काललबधि-बल नहिं भलो जी । तो पण हे सखी म्हारी उद्यम जोग, सीख सयानी भूधर मन सांभलो जी ॥ ५ ॥

७०. जकड़ी।

अब मन मेरे वे !, सुनि सुनि सीख सयानी । जिनवर चरना वे !, करि करि प्रीति सुज्ञानी ॥ करि प्रीति सुज्ञानी ! शिवसुखदानी, धन जीतब है पंचदिना । कोटि वरष जीवौ किस लेखे, जिन चरणांबुजभक्ति विना ॥ नर परजाय पाय अति उत्तम, गृह वसि यह लाहा ले रे ! । समझ समझ

बोलैं गुरुज्ञानी, सीख सयानी मन मेरे ॥ १ ॥
तू मति तरसै वे !, सम्पति देखि पराई । बोये
लुनि ले वे !, जो निज पूर्व कमाई ॥ पूर्व कमाई
सम्पाति पाई, देखि देखि मति झूर मरै । बोय
बँबूल शूल-तरु भोंदू !, आमनकी क्या आस
करै ॥ अब कछु समझ बूझ नर तासों, ज्यों
फिर परभव सुख दरसै । करि निजध्यान दान
तप संजम, देखि विभव पर मत तरसै ॥ २ ॥
जो जग दीसै वे !, सुंदर अरु सुखदाई । सो सब
फलिया वे !, धरमकल्पद्रुम भाई ! ॥ सो सब धर्म
कल्पद्रुमके फल, रथ पायक बहु ऋद्धि मही ।
तेज तुरंग तुंग गज नौ निधि, चौदह रतन
छखण्ड मही ॥ रति उनहार रूपकी सीमा, सहस
छ्यानवे नारि वरै । सो सब जानि धर्मफल भाई !
जो जग सुंदर दृष्टि परै ॥ ३ ॥ लगैं असुंदर वे !,
कंटक वान घनेरे । ते रस फलिया वे !, पाप
कनक-तरु केरे ॥ ते सब पाप कनकतरुके फल,
रोग सोग दुख नित्य नये । कुथित शरीर
चीर नहिं तापर, घर घर फिरत फकीर भये ॥

भूख प्याम पीड़ैं कन मांगैं, होत अनादर पग पगमें । ये परतच्छ पाप मंचित फल, लगैं असुंदर जे जगमें ॥ ४ ॥ इस भव वनमें वे!, ये दोऊ तरु जाने । जो मन माने वे!, सोई सींचि सयाने ॥ सींचि सयाने! जो मन माने, वेर वेर अब कौन कहै । तू करतार तुही फलभोगी, अपने सुख दुख आप लहै ॥ धन्य! धन्य! जिन मारग सुंदर, सेवन जोग तिहूँ पनमें । जामों समुझि परे सब भूधर, सदा शरण इस भववनमें ॥ ५ ॥

७१. विनती।

हरिगीतिका।

पुलकन्त नयन चकोर पक्षी, हँसत उर इन्दीवरो । दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुरी, निबिड़ मिथ्यातम हरो ॥ आनन्द अम्बुज उमग उछर्‍यो, अखिल आतम निरदले । जिनवदन पूरनचन्द्र निरखत, सकल मनवांछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो पावन, आज विघ्न विनाशियो । संसारसागर नीर निवर्‍यो, अखिल

तत्त्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ, उभय भव निर्मल ठये । दुख जरो दुर्गतिवास निवरो, आज नव मंगल भये ॥ २ ॥ मनहरन मूरति हेरि प्रभुकी, कौन उपमा लाइये। मम सकल तनके रोम हुलसे, हर्ष ओर न पाइये ॥ कल्याणकाल प्रतच्छ प्रभुको, लखें जो सुर नर घने । तिम समयकी आनन्दमहिमा, कहत क्यों मुखसों बने ॥३॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको, और वांछा ना रही । मन ठठ मनोरथ भये पूरन, रंक मानो निधि लही ॥ अब होय भव भव भक्ति तुम्हरी, कृपा ऐसी कीजिये । कर जोर 'भूधरदास' विनवै, यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥

७२. विनती ।

तुम तरनतारन भवनिवारन, भविक-मनआनन्दनो । श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ जिनिन्दनो ॥ तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पद पूजा करों । कैलाशगिरिपर ऋषभ जिनवर, चरणकमल हृदय धरों ॥ १ ॥

तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महा-
बली । यह जानकर तुम शरण आयो, कृपा
कीजे नाथ जी ॥ तुम चन्द्रवदन सुचन्द्रलक्षण,
चन्द्रपुरिपरमेशजू । महासेननन्दन जगतवंदन,
चन्द्रनाथ जिनेशजू ॥ २ ॥ तुम बालबोध-
विवेकसागर, भव्यकमलप्रकाशनो । श्रीनेमि-
नाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥
तुम तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश
करी । चारित्ररथ चढ़ि भये दूलह, जाय शिव-
सुन्दरि वरी ॥ ३ ॥ इन्द्रादि जन्मस्थान जि-
नके, करन कनकाचल चढ़े । गंधर्व देवन सु-
यश गाये, अपसरा मंगल पढ़े ॥ इहि विधि
सुरासुर निज नियोगी, सकल सेवाविधि ठही ।
ते पार्श्व प्रभु मो आस पूरो, चरनसेवक हों सही
॥ ४ ॥ तुम ज्ञान रवि अज्ञानतमहर, सेवकन
सुख देत हो । मम कुमतिहारन सुमतिकारन,
दुरित सब हर लेत हो ॥ तुम मोक्षदाता
कर्मघाता, दीन जानि दया करो । सिद्धार्थ-
नन्दन जगतवन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥ ५ ॥

चौवीस तीर्थंकर सुजिनको, नमत सुरनर आ-यके। मैं शरण आयो हर्ष पायो, जोर कर सिर नायके ॥ तुम तरनतारन हो प्रभूजी, मोहि पार उतारियो । मैं हीन दीन दयालु प्रभुजी, काज मेरो सारियो ॥ ६ ॥ यह अतुलमहिमा-सिन्धु साहब, शक्र पार न पावही। तजि हासभय तुम दास भूधर, भक्तिवश यश गावही ॥ ७ ॥

७३. गुरुविनती।

बन्दौं दिगम्बरगुरुचरन, जग तरन तारन जान। जे भरम भारी रोगको, हैं राजवैद्य महान ॥ जिनके अनुग्रह विन कभी, नहिं कटैं कर्म जँजीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ १ ॥ यह तन अपावन अशुचि है, संसार सकल असार। ये भोग विष पकवा-नसे, इस भाँति सोच विचार ॥ तप विरचि श्री-मुनि वन वसे, सब त्यागि परिग्रह भीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ २ ॥ जे काच कंचन सम गिनैं, अरि मित्र एक सरूप।

निंदा बड़ाई सारिखी, वनखण्ड शहर अनूप ॥ सुख दुःख जीवन मरनमें, नहिं खुशी नहिं दिलगीर । ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ३ ॥ जे बाह्य परवत वन वसैं, गिरि गुहा महल मनोग । सिल सेज समता सहचरी, शशिकिरण दीपक जोग ॥ मृग मित्र भोजन तपमई, विज्ञान निरमल नीर । ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ४ ॥ सूखैं सरोवर जल भरे, सूखे तरंगनितोय । वाटैं वटोही ना चलैं, जहां घाम गरमी होय ॥ तिस काल मुनिवर तप तपैं, गिरिशिखर ठाड़े धीर । ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ५ ॥ घन घोर गरजैं घनघटा, जल परै पावसकाल । चहुँ ओर चमकै वीजुरी, अति चलै शीतल व्याल ॥ तरुहेट तिष्ठैं तब जती, एकान्त अचल शरीर । ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ६ ॥ जब शीत मास तुषारसों, दाहै सकल वनराय । जब

१ समान, बराबर। २ नदीका जल। ३ रास्तेसे। ४ मुसाफिर ५ बरसातमें। ६ पवन। ७ वृक्षके नीचे।

जमै पानी पोखरां, थरहरै सबकी काय ॥ तब नगन निवसैं चौहटैं, अथवा नदीके तीर । ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ७ ॥ कर जोर भूधर बीनवै, कब मिलैं वह मुनिराज । यह आस मनकी कब फलै, मेरे सरैं सगरे काज ॥ संसार विषम विदेशमें, जे विना कारण वीर । ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ८ ॥

७४. विनती ।

(चौपाई १६ मात्रा ।)

जै जगपूज परमगुरु नामी, पतित उधारन अंतरजामी । दास दुखी तुम अति उपगारी, सुनिये प्रभु! अरदास हमारी ॥ १ ॥ यह भव घोर समुद्र महा है, भूधर भ्रम-जल-पूर रहा है । अंतर दुख दुःसह बहुतेरे, ते बड़वानल साहिब मेरे ॥ २ ॥ जनम जरा गद मरन जहां है, ये ही प्रबल तरंग तहां है । आवत विपति नदीगन जामें, मोह महान मगर इक तामें ॥ ३ ॥ तिस मुख जीव पर्‌यो दुख पावै, हे जिन ! तुम विन कौन छुड़ावै ।

१ चौपटमैदान । २ सिद्ध होवें । ३ सब ।

अशरन-शरन अनुग्रह कीजे, यह दुख मेटि मुकति मुझ दीजे ॥ ४ ॥ दीरघ काल गयो विललावें, अब ये मूल सहे नहिं जावें। सुनि-यत यों जिनशासनमाहीं, पंचम काल परमपद नाहीं ॥ ५ ॥ कारन पांच मिलें जब सारे, तब शिव सेवक जाहिं तुम्हारे। तातैं यह विनती अब मेरी, स्वामी! शरण लई हम तेरी ॥ ६ ॥ प्रभु आगें चितचाह प्रकासों, भव भव श्रावक-कुल अभिलासों। भव भव जिन आगम अव-गाहों, भव भव भक्ति शरणकी चाहों ॥ ७ ॥ भव भवमें सत संगति पाऊं, भव भव साधनके गुन गाऊं। परनिंदा मुख भूलि न भाखूं, मैत्रीभाव सबनसों राखूं ॥८॥ भव भव अनुभव आतमकेरा, होहु समाधिमरण नित मेरा। जबलों जनम जगतमें लाधों, काललबधि बल लहि शिव साधों ॥९॥ तबलों ये प्रापति मुझ हूजो, भक्ति प्रताप मनोरथ पूजो। प्रभु सब समरथ हम यह लोरें, भूधर अरज करत कर जोरें ॥ १० ॥

७५. नेमिनाथजीकी विनती।

त्रिभुवनगुरु स्वामी जी, करुनानिधि नामी जी। सुनि अंतरजामी, मेरी वीनती जी ॥ १ ॥ मैं दास तुम्हारा जी, दुखिया बहु भारा जी! दुख मेटनहारा, तुम जादोंपती जी ॥ २ ॥ भरम्यो संसारा जी, चिर विपति-भँडारा जी। कहिं सार न सारे, चहुँगति डोलियो जी ॥ ३ ॥ दुख मेरु समाना जी, सुख सरसों·दाना जी। अब जान धरि ज्ञान, तराजू तोलिया जी ॥ ४ ॥ थावर तन पाया जी, त्रस नाम धराया जी। कृमि कुंथु कहाया, मरि भँवरा हुवा जी ॥५॥ पशुकाया सारी जी, नाना विधि धारी जी। जलचारी थलचारी, उड़न पखेरु हुवा जी ॥ ६ ॥ नरक-नकेमाहीं जी, दुख ओर न काहीं जी। अति घोर जहाँ है, सरिता खारकी जी ॥ ७ ॥ पुनि असुर संघारैं जी, निज वैर विचारैं जी। मिलि बांधैं अर मारैं, निरदय नारकी जी ॥ ८ ॥ मानुष अवतारै जी, रह्यो गरभमँझारै जी। रटि रोयो जनमत, वारैं मैं घनों जी ॥ ९ ॥ जो-

वन तन रोगी जी, कै विरहवियोगी जी। फिर भोगी बहुविधि, विरधपनाकी वेदना जी ॥१०॥ सुरपदवी पाई जी, रंभा उर लाई जी। तहाँ देखि पराई, संपति झूरियो जी ॥ ११ ॥ माला मुरझानी जी, तब आरति ठानी जी। तिथि पूरन जानी, मरत विसूरियो जी ॥ १२ ॥ यों दुख भवकेरा जी, भुगतो बहुतेरा जी। प्रभु! मेरे कहते, पार न है कहीं जी ॥ १३ ॥ मिथ्यामदमाता जी, चाही नित साता जी। सुखदाता जगत्राता, तुम जाने नहीं जी ॥ १४ ॥ प्रभु भागनि पाये जी, गुन श्रवन सुहाये जी। तकि आयो अब सेवककी, विपदा हरो जी ॥ १५ ॥ भववास बसेरा जी, फिरि होय न मेरा जी। सुख पावे जन तेरा, स्वामी! सो करो जी ॥ १६ ॥ तुम शरनसहाई जी, तुम सज्जनभाई जी। तुम माई तुम्हीं बाप, दया मुझ लीजिये जी ॥ १७ ॥ भूधर कर जोरे जी, ठाड़ो प्रभु ओरे जी। निजदास निहारो, निरभय कीजिये जी ॥ १८ ॥

७६. विनती।

(ढाल परमादी।)

अहो! जगतगुरु एक, सुनियो अरज हमारी। तुम हो दीन दयाल, मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भव वनमें वादि, काल अनादि गमायो। भ्रमत चहूँगतिमाहिं, सुख नहिं दुख बहु पायो ॥ २ ॥ कर्म महारिपु जोर, एक न कान करें जी। मनमान्यां दुख देहिं, काहूसों न डरें जी ॥ ३ ॥ कवहूं इतर निगोद, कवहूं नर्क दिखावें। सुरनर पशुगतिमाहिं, बहुविधि नाच नचावें ॥ ४ ॥ प्रभु! इनके परसंग, भव भवमाहिं बुरे जी। जे दुख देखे देव!, तुमसों नाहिं दुरे जी ॥ ५ ॥ एक जन्मकी बात, कहि न सकों सुनि स्वामी!। तुम अनन्त परजाय, जानत अंतरजामी ॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे। कियो बहुत वेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥ ७ ॥ ज्ञान महानिधि लूटि, रंक निबल करि डारयो। इनही तुम मुझमाहिं, हे जिन! अंतर पारयो ॥ ८ ॥ पाप पुन्यकी

दोइ, पाँयनि बेरी डारी । तन काराग्रहमाहिं, मोहि दियो दुख भारी ॥ ९ ॥ इनको नेक विगार, मैं कछु नाहिं कियो जी । विनकारन जगवंद्य !, बहुविधि वैर लियो जी ॥ १० ॥ अब आयो तुम पास, सुनि जिन ! सुजस तिहारो । नीतनिपुन जगराय !, कीजे न्याव हमारो ॥११॥ दुष्टन देहु निकास, साधुनको रखि लीजे । विनवै भूधरदास, हे प्रभु ! ढील न कीजे ॥ १२ ॥

७७. गुरुकी विनती ।

(राग—तरंगी । दोहा ।)

ते गुरु मेरे मन बसो, जे भव जलधि जिहाज । आप तिरें पर तारहीं, ऐसे श्रीऋषिराज ॥ ते गुरु० ॥ १ ॥ मोह महारिपु जीतिकैं, छांड्यो सब घरवार । होय दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार ॥ ते गुरु० ॥ २ ॥ रोग-उरग-बिल[1] वपु[2] गिण्यो, भोग भुजंग समान । कदली तरु संसार है, त्यागो सब यह जान ॥ ते गुरु० ॥ ३ ॥ रतनत्रय निधि उर धरैं, अरु

---

१ रोगरूपी सर्पका बिल । २ शरीर ।

निरग्रंथ त्रिकाल । मार्‌यो काम खवीसको, स्वामी परम दयाल ॥ ते गुरु० ॥ ४ ॥ पंच महाव्रत आदरें, पांचों सुमति समेत । तीन गुपति पालैं सदा, अजर अमर पद हेत ॥ ते गुरु० ॥५॥ धर्म धरैं दशलक्षणी, भावें भावना सार । सहैं परीसह बीस द्वै, चारित- रतन-भँडार ॥ ते गुरु० ॥ ६ ॥ जेठ तपै रवि आकरो[1], सूखै सरवरनीर । शैल-शिखर मुनि तप तपैं, दाझैं[2] नगन शरीर ॥ ते गुरु० ॥ ७ ॥ पावस रैन डरावनी, वरसै जलधर-धार । तरुतल निवसैं साहसी, बाजै[3] झंझावार ॥ ते गुरु० ॥ ८ ॥ शीत पड़ै कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय । ताल तरंगनिके तटै, ठाड़े ध्यान लगाय ॥ ते गुरु० ॥ ९ ॥ इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनों कालमँझार । लागे सहज सरूपमें, तनसों ममत निवार ॥ ते गुरु० ॥ १० ॥ पूरव भोग न चिंतवैं, आगम वांछा नाहिं । चहुँगतिके दुखसों डरैं, सुरति लगी शिव-

१ तेजीसे । २ जलावें । ३ चलती है । ४ बरसाती हवाको झंझा कहते हैं ।

माहिं ॥ ते गुरु० ॥ ११ ॥ रंगमहलमें पौढ़ते, कोमल सेज बिछाय। ते पच्छिमनिशि भूमिमें, सोवैं संवरि काय ॥ ते गुरु० ॥ १२ ॥ गज चढ़ि चलते गरवसों, सेना सजि चतुरंग। निरखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अंग ॥ ते गुरु० ॥ १३ ॥ वे गुरु चरण जहां धरैं, जगमें तीरथ जेह। सो रज मम मस्तक चढ़ौ, भूधर मांगै येह ॥ ते गुरु० ॥ १४ ॥

७८. पंचनमोकारमंत्रमाहात्म्यकी ढाल।

श्रीगुरु शिक्षा देत हैं, सुनि प्रानी रे! सुमर मंत्र नौकार, सीख सुनि प्रानी रे! लोकोत्तम मंगल महा, सुनि प्रानी रे! अशरन-जन-आधार, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १ ॥ प्राकृत रूप अनादि है, सुनि प्रानी रे! मित अच्छर पैंतीस, सीख सुनि प्रानी रे! पाप जाय सब जापतैं, सुनि प्रानी रे! भाष्यो गणधरईश, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ २ ॥ मन पवित्र करि मंत्रको, सुनि प्रानी रे! सुमरै शंका छोरि, सीख सुनि प्रानी रे! वांछित वर पावै सही, सुनि प्रानी रे!

शीलवंत नर नारि, सीख सुनि प्रानी रे! ॥३॥ विषधर-बाघ न भय करै, सुनि प्रानी रे! विनसैं विघन अनेक, सीख सुनि प्रानी रे! व्याधि विषम-विंतर भजें, सुनि प्रानी रे! विपत न व्यापै एक, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ४ ॥ कपिको शिखरसमेदपै, सुनि प्रानी रे! मंत्र दियो मुनिराज, सीख सुनि प्रानी रे! होय अमर नर शिव वस्यो, सुनि प्रानी रे! धरि चौथी परजाय, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ५ ॥ कह्यो पदमरुचि सेठने, सुनि प्रानी रे! सुन्यो बैलके जीव, सीख सुनि प्रानी रे! नर सुरके सुख भुंजके, सुनि प्रानी रे! भयो राव सुग्रीव, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ६ ॥ दीनों मंत्र सुलोचना, सुनि प्रानी रे! विंध्यश्रीको जोइ, सीख सुनि प्रानी रे! गंगादेवी अवतरी, सुनि प्रानी रे! सर्प-डसी थी सोइ, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ७ ॥ चारुदत्तपै वनिकने, सुनि प्रानी रे! पायो कूपमँझार[1], सीख सुनि प्रानी रे! पर्वत ऊपर छागने, सुनि प्रानी रे! भये जुगम सुर सार,

१ बकरेने।

सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ८ ॥ नाग नागिनी जलत हैं. सुनि प्रानी रे! देखे पासजिनिंद, सीख सुनि प्रानी रे! मंत्र देत तब ही भये, सुनि प्रानी रे! परमावति धरनेंद्र, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ९ ॥ चेहलेमें[1] हथिनी फँसी, सुनि प्रानी रे! खग[2] कीनों उपगार, सीख सुनि प्रानी रे! भव लहिकै सीता भई, सुनि प्रानी रे! परम सती संसार, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १० ॥ जल मांगे शूली चढ्यो, सुनि प्रानी रे! चोर कंठ-गत-प्रान, सीख सुनि प्रानी रे! मंत्र सिखायो सेठने, सुनि प्रानी रे! लह्यो सुरग सुख-थान, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ११ ॥ चंपापुरमें ग्वालिया, सुनि प्रानी रे! घोखै मंत्र महान, सीख सुनि प्रानी रे! सेठ सुदर्शन अवतर्‍यो, सुनि प्रानी रे! पहले भव निरवान, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १२ ॥ मंत्र महातमकी कथा, सुनि प्रानी रे! नामसूचना एह, सीख सुनि प्रानी रे! श्रीपुन्यास्रवग्रंथमें, सुनि प्रानी रे! तारे सो सुनि

१ कीचड़में। २ विद्याधरने।

लेहु, सीख सुनि प्रानी रे ! ॥ १३ ॥ सात-विसन सेवन हठी, सुनि प्रानी रे ! अधम अंजना चोर, सीख सुनि प्रानी रे ! सरधा करते मंत्रकी, सुनि प्रानी रे ! सीझी विद्या जोर, सीख सुनि प्रानी रे ! ॥ १४ ॥ जीवक सेठ समोधियो, सुनि प्रानी रे ! पापाचारी स्वान, सीख सुनि प्रानी रे ! मंत्र प्रतापैं पाइयो, सुनि प्रानी रे ! सुंदर सुरग विमान, सीख सुनि प्रानी रे ! ॥१५॥ आगें सीझे सीझि है, सुनि प्रानी रे ! अब सीझैं निरधार, सीख सुनि प्रानी रे ! तिनके नाम बखानतैं, सुनि प्रानी रे ! कोई न पावै पार, सीख सुनि प्रानी रे ! ॥ १६ ॥ बैठत चिंतै सोवतैं, सुनि प्रानी रे ! आदि अंतलौं धीर, सीख सुनि प्रानी रे ! इस अपराजित मंत्रको, सुनि प्रानी रे ! मति बिसरै हो ! वीर, सीख सुनि प्रानी रे ! ॥ १७ ॥ सकल लोक सब कालमें, सुनि प्रानी रे ! सरवागममें सार, सीख सुनि प्रानी रे ! भूधर कबहुं न भूलि है, सुनि प्रानी रे ! मंत्रराज मन धार, सीख सुनि प्रानी रे ! ॥ १८ ॥

१ जीवंधरने ।

७९. करुणाष्टक।

करुणा ल्यो जिनराज हमारी, करुणा ल्यो ॥ टेक ॥ अहो जगतगुरु जगपती, परमानंदनिधान। किंकरपर कीजे दया, दीजे अविचल थान ॥ हमारी० ॥ १ ॥ भवदुखसों भयभीत हौं, शिवपदवांछा सार। करो दया मुझ दीनपै, भवबंधन निरवार ॥ हमारी० ॥ २ ॥ पर्यो विषम भवकूपमें, हे प्रभु! काढ़ो मोहि। पतितउधारण हो तुम्हीं, फिर फिर विनऊं तोहि ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ तुम प्रभु परमदयाल हो, अशरणके आधार। मोहि दुष्ट दुख देत हैं, तुमसों करहुँ पुकार ॥ हमारी० ॥४॥ दुःखित देखि दया करै, गाँवपती इक होय। तुम त्रिभुवनपति कर्मतें, क्यों न छुड़ावो मोय ॥ हमारी० ॥ ५ ॥ भव-आताप तबै भुजैं, जब राखों उर धोय। दया-सुधा करि सीयरा, तुम पदपंकज दोय ॥ हमारी० ॥ ६ ॥ येहि एक मुझ वीनती, स्वामी! हर संसार। बहुत धज्यो हूं त्रासतैं, विलख्यो वारंवार ॥ हमारी० ॥ ७ ॥ पंदमनंदिको

१ श्रीपद्मनन्दिआचार्यकृत पंचविंशतिकाके करुणाष्टकका आशय लेकर।

अर्थ लैं, अरज करी हितकाज । शरणागत भूधरतणी, राखौ जगपति लाज ॥ हमारी० ॥८॥

८०. गजल ।

रखता नहीं तनकी खबर, अनहद बाजा बाजिया। घटबीच मंडल बाजता, बाहिर सुना तो क्या हुआ ॥ १ ॥ जोगी तो जंगम सेवड़ा, बहु लाल कपड़े पहिरता । उस रंगसे महरम नहीं, कपड़े रंगे तो क्या हुआ ॥ २ ॥ काजी किताबें खोलता, नसीहत बतावै औरको । अपना अमल कीन्हा नहीं, कामिल हुआ तो क्या हुआ ॥ ३ ॥ पोथीके पाना बांचता, घरघर कथा कहता फिरै । निज ब्रह्मको चीन्हा नहीं, ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ ॥ ४ ॥ गांजारुभांग अफीम है, दारू शराबा पोशता । प्याला न पीयाप्रेमका, अमली हुआ तो क्या हुआ ॥ ५ ॥ शतरंज चौपरगंजफा, बहु मर्द खेलैं हैं सभी । बाजी न खेली प्रेमकी, ज्वारी हुआ तो क्या हुआ ॥ ६ ॥ भूधर बनाई वीनती, श्रोता सुनो सब कान दे । गुरुका वचन माना नहीं, श्रोता हुआ तो क्या हुआ ॥ ७ ॥

श्रीवीर *
गायन गोष्ठी.
लेखक व प्रकाशक—
चन्द्रसेन जैन वैद्य—इटावा
चतुर्थवार
१०००
सन १९३६
मूल्य -)
सैकड़ा ५)
बी. एन. प्रेस इटावा में छपी।

❀ जयवीर ❀

गायन गोष्ठी।
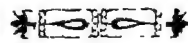
१–प्रार्थना (ईमन)

डूबत नैया मोरी पार लगादो ॥ टेक ॥

मोह निशा अंधियारी कारी, ज्ञान प्रकाश करादो ॥ १ ॥
कषाय बयार बहे अति भीषण, सम पतवार लगादो ॥२॥
गहरी नदिया नाव झांझरी, अब तट पर पहुंचा दो ॥३॥
भ्रमत रे मोहि बहु दिन बीते, शुभ मारग बतला दो ॥४॥
तुम गुण ध्याऊं अन्त न जाऊं, आप समान बनादो ॥५॥

२–प्रार्थना (गजल)

सुख शांति विधायक वीर प्रभु, आदर्श तुम्हीं हितकर्त्ता हो।
जगदीश विज्ञ बिन राग द्वेष, तुम्हीं जग सङ्कट हर्त्ता हो ॥१॥
जो आत्मनिधी को भूल रहे, हो दीन दुखी कङ्गाल बने।
अक्षय निधि आत्मज्ञान देकर, श्रीमान् सुसम्पति कर्त्ता हो॥२॥
सब जीवों के हित मोक्ष मार्ग, का निस्पृह हो उपदेश दिया।
बिन भेद भाव भूले भटके, सब जन के मङ्गल कर्त्ता हो ॥३॥
पूजक पूज्य का भेद मिटा, तुम आप समान बनाते हो।
नीचाति नीचको उच्च बना, समभाव प्रदर्शित कर्त्ता हो॥४॥
तुम गुण गण में हम रमण करें, निज निर्बलता को दूर करें।
आतम बल दो हम विजय करें, बलशाली तुम जय कर्त्ता हो॥५॥

३–प्रार्थना (तर्ज पंजाबी)

सुना जा, सुना जा, सुना जा महावीर; हितकार बानी सुना जा महावीर ॥ टेक ॥ समता सानी शिव सुख दानी, सुना जा, सुना जा, सुना जा महावीर हित० ॥

विषय चाह दावानल दाहो, मिटाजा, मिटाजा, मिटाजा महावीर ये भव पीर मिटाजा महावीर ॥ १ ॥

चहुंगति में चिरकाल भ्रमो मैं, दिखाजा, दिखाजा, दिखाजा महावीर अब भव तीर दिखाजा महवीर ॥ २ ॥

पर में रचि निज रूप भुलानो, बताजा, बताजा, बताजा महावीर आतम रूप बताजा महावीर ॥ ३ ॥

आतमपद परमातम पावें, बनाजा, बनाजा, बनाजा महावीर आप समान बनाजा महावीर ॥ ४ ॥

४–प्रार्थना (गजल)

तुमही निर्बल के बल दाता, महावीर प्रभू महावीर प्रभू ।
मङ्गल कर्त्ता सङ्कट हर्त्ता, महावीर प्रभू महावीर प्रभू ॥१॥
चहुँदिश में हिंसा छाय रही, जब हाहाकार पुकार मची ।
उपदेश अहिंसा परम धर्म, देकर रक्षा की वीर प्रभू ॥२॥
भय ऊंच नीचका दूर किया, सबहीको हित उपदेश दिया ।
उन्नत पथ धर्म बताय दिया, स्वाधीन किया महावीर प्रभू ।३।
जग के कर्त्ता ना हर्त्ता हो, इक मार्ग प्रदर्शन कर्त्ता हो ।
निज कर्मसे बंधना खुलता है, इक कारण केवल वीर प्रभू ।४।

हम धीर वीर विद्वान बनें, अन्याय अनीत के शत्रु बनें।
निज देश जातिके मित्र बनें, आतम बलदायक वीर प्रभू ।५।
हम लालच से न डिग जावें, शङ्का भय से ना डर जावें।
बिन स्वारथ सेवा कर जावें, आदर्श हमारा वीर प्रभू ॥६॥

५—परिचय गान।

जैन युवक सङ्गठन हमारा ॥टेक॥
दीन दुखी का दुःख मिटावें, पतितों को अब शीघ्र उठावें।
सब जग में हो भाई चारा ॥ १ ॥
अत्याचार अनीति नसावें, जग में व्यापक क्रान्ति मचावें।
समता न्याय बहावें धारा ॥ २ ॥
सब में बन्धु भाव फैलावें, प्रेम विजय करके दिखलावें।
मङ्गल मय कर्त्तव्य हमारा ॥ ३ ॥
हितकारी शुभ आनन्दकारी; जैन धर्म जग में विस्तारी।
यही उच्चतम ध्येय हमारा ॥ ३ ॥

६—जैन-युवक-सङ्घ का झण्डाभिवादन।

केशरिया शुभ स्वस्तिक धारा, झण्डा जैन धर्मका प्यारा॥टेक॥
आतम शक्ति बढ़ाने वाला, जीवों को हर्षाने वाला।
प्रेम-सुधा की अक्षय धारा, झण्डा जैन० ॥ १ ॥
धर्म-समाज क्रान्तिके रण में, लख उन्मादित हो मन क्षणमें।
मिट जावे शङ्का-भय सारा, झण्डा जैन० ॥ २ ॥
इस झण्डेके नीचे निर्भय, विश्व अशांति मिटावें निश्चय।
सुख शान्ती मय हो जग सारा, झण्डा जैन० ॥ ३ ॥

नहीं प्रतिष्ठा इसकी जावे, चाहे प्राण भले ही जावें।
जैन धर्म मय हो जग सारा, झण्डा जैन० ॥ ४ ॥
आओ प्यारे सब जन आओ, जैनधर्म पर बलि २ जाओ।
बोलो महावीर जयकारा, झण्डा जैन० ॥ ५ ॥

७—जैन-युवक-सङ्घ का नित्य गायन।

यह जिन धर्म हमारा प्यारा ॥ टेक ॥

आत्म धर्म यह निर्भयकारी, बढ़े मनोबल शङ्काहारी।
हो निर्भय यह हृदय हमारा, यह जिन० ॥ १ ॥
बिन कांक्षा उपकार करें हम, बदले की इच्छा न करें हम।
निःकांक्षित सब कर्म हमारा, यह जिन० ॥ २ ॥
घृणित दुखित से घृणा न करते, घृणा अवशि पापों से करते।
निर्विचिकित्सक भाव हमारा, यह जिन० ॥ ३ ॥
धर्म नीति से जो डिग जावें, उनको सत्-मारग बतलावें।
आश्रय-दाता मित्र हमारा, यह जिन० ॥ ४ ॥
बिन विचार हम पग नहिं धरते, अन्ध मार्ग विश्वास न करते।
सुखदायक दृढ़ निश्चय सारा, यह जिन० ॥ ५ ॥
सब में बन्धु-भाव फैलावें, समता-भाव सुधा बर्षावें।
सब जग का यह प्रेमी प्यारा, यह जिन० ॥ ६ ॥
विश्व तिमिर अज्ञान हटावें, जिन बच रविकर प्रगट करावें।
जैन धर्म-मय हो जग सारा, यह जिन० ॥ ७ ॥

जैन धर्म के विषय में—

८–ग़ज़ल।

भारत में फिर से होगा जिन धर्म का उजाला ॥ टेक ॥

कर्त्ता बना के ईश्वर कायर जगत बनाया।
आतम के बल से होगा फिर आन-बान वाला ।१।
मिट जायगी गुलामी समता का भाव होगा।
भय ऊंच-नीच का अब होगा न भेद काला ।२।
रब का फज़ल सिफारिश कोई नहीं चलेगी।
अपने ही बल से होगा दुनियां में बोल-बाला ।३।
भगवान् सबके होंगे नहिं भेद भाव होगा।
हितकारी दीन-बन्धू वह होगा वीर आला ।४।
वो ही धरम रहेगा जो जीव-मात्र का हो।
नहिं टिक सकेगा अब वह असमान भेद वाला ।५।

९–गजल।

ये है सबसे निराला आला जिन-धर्म हमारा प्यारा ॥ टेक ॥
ना कोई कर्त्ता ना कोई हर्त्ता, आपही कर्त्ता आप ही हर्त्ता।
आपही बोने काटने वाला ॥ १ ॥
नहीं सिफारिश इसमें चलती, मुक्ती देने से नहिं मिलती।
खुद को खुदा बनाने वाला ॥ २ ॥
सुख शान्ती के चाहने वालो, वीर के झण्डे नीचे आओ।
ये ही सच्चा मित्र तुम्हारा ॥ ३ ॥

१०–गजल ।

(आत्मा ही परमात्मा हो जाता है)

ईश्वर को खुदाको ढूंढते हो वह कैसे मिलेगा कहीं भी नहीं ।
मन्दिर में नहीं मसजिद में नहीं गिर्जे में नहीं मक्के में नहीं ॥
वेदों में कुरानमें शास्त्रों में जरदुस्त में औ बाइबिल में नहीं ।
पूरब में नहीं पश्चिम में नहीं दक्षिण में नहीं उत्तर में नहीं ॥
सूरज चांद सितारों में पर्वत में नहीं सागर में नहीं ।
पानी में हवा में अग्नी में मिट्टी में नहीं पत्थर में नहीं ॥
ज्ञानाकर सुख का सागर ज्ञाता द्रष्टा औ चिन्मूरत ।
आतम परमातम होजाता घट में ही छिपा है कहीं न कहीं ॥

११–गजल ।

(भगवान् कुछ लेते देते नहीं)

तू सामने किसके पुकार रहा वहां सुनने वाला कोई नहीं ।
पूजा स्तुति चाहे जो करो खुश होने वाला है ही नहीं ॥ १ ॥
होकर कृत-कृत्य चले वो गये अपने आदर्श को छोड़ गये ।
रस्ता तो पड़ा ये सामने है पहुंचाने वाला कोई नहीं ॥ २ ॥
तू खुद ही खुलता बंधता है सुख दुखका खुद ही कर्त्ता है ।
बोवोगे बबूल तो आम कहां कोई देने वाला है ही नहीं ॥ ३ ॥
अमिरत का सागर भर के गये और ठिकाना बताय गये ।
तड़फा कर चाहे प्यास बुझा है कोई पिलाने वाला नहीं ॥४॥

१२–आध्यात्मिक, चाल गारी।

अब सुनियो चेतनराय सुमति की सीख भली ॥ टेक ॥

यह कुमति सौत संग पाय भ्रमें तुम गली गली।
चिरकाल चतुर्गति माहिं भूलि के राह भली ॥ १ ॥
विच मिले सुगुरु हितकार सुनाई जिनवानि भली।
पर परणति पर घर त्याग छांड़ि के मोह लली ॥२॥
शुभ रंग महल में आउ दिखाऊं समकित बखरी।
निज ध्यान पलंग पर बैठ चखाऊं अनुभव मिसुरी ॥३॥

१३–जैनी किसे कहते हैं? (कलांगड़ा)

जैनी जन हैं वही जगत में पीर पराई जाने ॥ टेक ॥

पर उपकार लीन निश दिन जो आतम सम जग जाने।
पर पीड़ा लखि दुखित सुखी लखि अपनों ही सुख माने ॥१॥
सब जीवों में समता राखे ऊंच नीच नहिं जाने।
निर्भय स्वार्थ रहित विन मद जो पर सेवा व्रत ठाने ॥२॥

१४–गजल।

हमने डंका इसी जिन धर्म का बजते देखा।
चौ तरफ इसका सितारा भी चमकते देखा ॥ १ ॥
इसके झण्डे के तले लाखों को आते देखा।
ऊंच और नीच को भी दिल से लगाते देखा ॥ २ ॥
अपने बर्ताव से इन सबको रहम दिल देखा।
भलाई दूसरों की करते धरम दिल देखा ॥ ३ ॥

बाद जो इसके जमाने को पलटते देखा।
धर्म और कर्म की बातों को उलटते देखा ॥ ४ ॥
इनके ही जुल्म से बहुतों को निकलते देखा।
इसी जिन धर्म से लाखों को फिसलते देखा ॥ ५ ॥
धर्म के इन्हीं ठेकेदारों को छलते देखा।
बिचारी बेवाओं को उनसे कुचलते देखा ॥ ६ ॥
जाल से पण्डितों के धन को लुटाने देखा।
भेषियों के सबब सज्जन को पिटाते देखा ॥ ७ ॥
हवा के रुख पे सब को पाठ बदलते देखा।
मगर इन कट्टरों को टस न मस करते देखा ॥ ८ ॥

—o—

सङ्गठन के विषय में—

१८–गजल।

संगठन कौम का रहनुमा होगया ॥ टेक ॥
इक जगह मिल के सब बैठ सकते नहीं। काम बिगड़ा हुआ जोड़ सकते नहीं॥ बुजदिली का असर ये असर अलग होगया ॥ १ ॥ हम आपस के रंजो अलम मिट गये। बिछुड़े भाई से भाई गले मिल गये॥ तन जुदा दोनों पर एक दिल होगया ॥२॥ हम अमन चैन दुनियां में फैलायेंगे। वीर वाणी को घर २ में पहुँचायेंगे॥ सबसे दिल में ये जोशे जुनूं होगया ॥३॥

१६—गजल ।

हां हां मिलकर बैठो तो बेड़ा पार हो ॥ टेक ॥

हां हां मिलकर आपस में भेद रखें ना-
हां हाँ मिलकर धर्म का भाई चार हो ॥१॥

हां हां मिलकर भाव भेष औ भाषा-
हां हां मिलकर भोजन भी इकसार हो ॥२॥

हा मिलकर खोटी रीति मिटावें-
हां हां मिलकर जैन धरम परचार हो ॥३॥

हां मिलकर वीर प्रभू के मानी-
हां हां मिलकर आपस में प्रेम पिआर हो ॥४॥

हां हां मिलकर सबको संदेश सुनावें-
हां हां मिलकर सत्य का जय जयकार हो ॥५॥

१७— थियेट्रीकल ।

वह दिन ऐसा जल्दी ही आयगा ॥ टेक ॥
आपस का भेद सभी मिट जायगा ।
भाई से भाई गले लग जायगा ॥ १ ॥
घर की खोटी रीति नसायगा ।
हितकर प्रीति सुरीति बढ़ायगा ॥ २ ॥
नफरत द्वेष सभी मिट जायगा ।
प्रेम सुधारस पान करायगा ॥ ३ ॥
पोल बनावट का खुल जायगा ।
धर्म का असली रूप दिखायगा ॥ ४ ॥

भेषिन का पर्दा हट जायगा ।
सब झूठों को मार भगायगा ॥ ५ ॥
जिन वाणी बादल बरसायगा ।
जैन धरम उपवन लहरायगा ॥ ६ ॥

१८—दादरा ।

सब मिल जावेंगे आज दिन ॥ टेक ॥
धर्म का भाई चार रहेगा, वीर कहलावेंगे ॥ आज० ॥ १ ॥
एक ही जाति वीर बनेगी, भेद मिट जावेंगे ॥ आज० ॥ २ ॥
मानो वीर प्रभू के बारह, लाख बतावेंगे ॥ आज० ॥ ३ ॥
सब मिल द्वेष फूट डाइन को, मार भगावेंगे ॥ आज० ॥ ४ ॥
भूले भटके बन्धु हमारे, निज घर आवेंगे ॥ आज० ॥ ५ ॥
संगठन ही से नीचे मस्तक, ऊंचे हो जावेंगे ॥ आज० ॥ ६ ॥
जग में वीर प्रभू का झण्डा, फिर फहरावेंगे ॥ आज० ॥ ७ ॥

१९—दादरा ।

सब जन मिल बैठो भेद को तजो ॥ टेक ॥
न्यारी न्यारी ढपली पर क्यों न्यारा ही राग बजे ।
एक ही राग एक ही धुनि में एकही साज सजे ॥ सब० ॥१॥
वीर प्रभू के मानो अहिंसा एक ही धर्म धरा ।
फिर क्यों जातिपांति का झगड़ा बीच में आन परा ॥सब०॥२॥
खान पान सब शुद्ध एकसा जैनी नाम धरा ।
फिर क्यों रोटी बेटी न्यारी यह क्या भेद परा ॥ सब० ॥३॥

भूले भटकों का क्यों नाहीं स्थिति करण किया।
झूठे कुल जाती के मद में धक्का और दिया ॥ सब० ॥ ४ ॥
जैन जाति के एक नाम की एक ही जाति बनो।
ऊंच नीच का भूत भगाकर सच्चे वीर बनो ॥ सब० ॥ ५ ॥

२०—गजल।

रखो लाज अब वीर के नाम की है।
नहीं सम्प्रदायों के काम की है ॥ १ ॥
दिगम्बर श्वेताम्बर स्थान वासी।
करें भावना उनके जो काम की है ॥ २ ॥
घर घर में अपने रहें अपने में खुश।
पुकार तो सब यारहों लाखकी है ॥ ३ ॥
समाज में जीवन में आपद विपद में।
जरूरत अभी संगठित काम की है ॥ ४ ॥
भाई का भाई गला काटते हैं।
नहीं शर्म क्या अपने इस कामकी है ॥ ५ ॥
पड़ी सबको है दुनियां में संगठन की।
हमें है पड़ी अपने ही नाम की है ॥ ६ ॥
ये है प्रश्न जैनों के जीवन मरन का।
नहीं बात ये अपने ही काम की है ॥ ७ ॥

२१—कव्वाली।

संगठन एक दिन ऐसा हो जायगा।
भेद आपस का काफूर हो जायगा ॥ १ ॥

फूट आतिश से मुरझाया जातीय गुल ।
पाक आबे मुहब्बत से खिल जायगा ॥ २ ॥
बहती नदियां हजारों जो हैं जातियां ।
मिलके एक जां समन्दर वो बन जायगा ॥३॥
रेशे रेशे पड़े जो जुदा ही जुदा ।
मिलके रस्सा बने हाथी बंध जायगा ॥ ४ ॥
देखते हैं हिकारत से इक दूसरे ।
दूध पानी सा हम जिस्म हो जायगा ॥ ५ ॥
आज दुश्मन बना एक का दूसरा ।
वही कल गले से लिपट जायगा ॥ ६ ॥

२२—थियेट्रीकल ।

जाति प्रेम का पिला दे प्याला बनादे मतवाला ।
तू ला ला ला ला ॥ जाति० ॥ टेक ॥

तू ऐसा मद पिला, यह अपनापा भुला ।
यकता का रंग ला, इक रंग में मिला ॥
तू ला ला ला ला ॥ जाति० ॥ १ ॥
अय साकी वह पिला, मुरझाया दिल खिला ।
हम सब को दे मिला, मग्न हुये जिला ॥
तू ला ला ला ला ॥ जाति० ॥ २ ॥
कोई कहे बुरा, परवा नहीं जरा ।
सकता नहीं डरा, गहरा नशा करा ॥
तू ला ला ला ला ॥ जाति० ॥ ३ ॥

२३—दादरा ।

संगठन अगर हो जावे तो बेड़ा पार हो ॥ टेक ॥
सहधर्मी को भाई समझो, सब बातों का अधिकारी समझो ।
भय ऊंच नीच मिट जावे तो बेड़ा पार हो ॥ १ ॥
तीन फिरके बने हैं हमारे, सब वीर प्रभू के हैं प्यारे ।
मिल बैठें समाज में तीनों, तो बेड़ा पार हो ॥ २ ॥
सब जाती बने एक जाती, वीर जाती हो या जैन जाती ।
यह जाती भेद मिट जावे तो बेड़ा पार हो ॥ ३ ॥
जो बिछुड़े हैं बन्धु हमारे, हमसे दूरी पे रहते हैं न्यारे ।
सब आके गले लग जावें तो बेड़ा पार हो ॥ ४ ॥
यह समता कराने वाला, सबको ऊंचा उठाने वाला ।
महावीर का झण्डा उठावें तो बेड़ा पार हो ॥ ५ ॥

२४—दादरा भैरवी ।

फूट का पीकर प्याला बना मतवाला ॥ टेक ॥
देखो हंसती दुनियाँ सारी, अपने हाथों बात बिगारी ।
घर खण्डहर कर डाला, बैठा ठाला ॥ १ ॥
घर के भाई निकाले जावें, बाहर से ना आने पावें ।
आप बना है आला, निज घर घाला ॥ २ ॥
देखो कैसा है मस्ताना, भाई रोवे गावे गाना ।
कुमति निराली वाला, जादू डाला ॥ ३ ॥

२५—मल्हार ।

कौन घड़ी शुभ दिन छिन आवैं मिलिहैं बन्धु हमार रे ॥टेक॥
ग्रीषम फूट भयानक आतप देखि गये पर गांव रे ।
अबतो पावस मिलन सुहावन क्यों नहिं निज घर आवरे ॥१॥
प्रेम पिआर संगठन बादल रिम झिम करत फुआर रे ।
द्वेष की नदिया बही जात है अब आओ इस पार रे ॥ २ ॥
बिरही हृदय पपीहा कोयल आवत कूक सुनाइ रे ।
हिलि मिल जैन धरम तरु झूले प्रेम हिंडोल डराइ रे ॥ ३ ॥

२६—दादरा पीलू ।

अब आओ जी सुजन हम सब मिल जांय ॥ टेक ॥
भेद भाव छांड़ आपस का सब सधर्मी गले लग जांय ॥१॥
दूर २ की नीति त्याग के जैन जाति का पाप नसांय ॥२॥
सब हितकारी वीर प्रभू का जैन धरम घर २ पहुँचांय ॥३॥

२७—दादरा भैरवी ।

आज मिली मोहि प्रेम नगरिया ॥ टेक ॥
बहुत दिननते बिछुड़े भाई आज बंधे सब प्रेम रसरिया ॥१॥
अबतक फूट हलाहल चाखो आज मिली अमरितकी गगरिया ।२।
बहुत दिननते भूले भटके आज मिली मोहि सुगम डगरिया ।३।
अबतक साज अनेकन बाजे आज बजी मोरी प्रेम बंसुरिया ।४।

जैन जाति के विषय में—

२८–गजल।

कोई क्या जाने किसी का दर्द दिल।
वो ही जाने जिसके दिल में दर्द दिल ॥ १ ॥
तन को कपड़े हैं न खाना पेट भर।
हाल पुरसां जानकारे दर्द दिल ॥ २ ॥
बेवायें बेकस विचारी बे ज़ुबां।
कौन जाने सर्द आहें दर्द दिल ॥ ३ ॥
कौम के मासूम बच्चे दर ब दर।
फिरते मरते और सहते दर्द दिल ॥ ४ ॥
कौम का इस हाल में सीना फिगर।
उम्र घटती बढ़ रहा है दर्द दिल ॥ ५ ॥
नौ जवानो कौम की सुन लो फुगां।
अब सहा जाता नहीं ये दर्द दिल ॥ ६ ॥

२९–गजल।

कौम की हालत बयां हमसे की जाती नहीं।
टीस जो दिल में उठी अब सही जाती नहीं ॥१॥
भूखे औ नंगे बदन लाखों ही तड़फा किये।
देख कर उनकी दशा तुमको दया आती नहीं ॥२॥
बेवायें बेकस हुई आठ आंसू रो रहीं।
शर्म से हालत बयां उनसे की जाती नहीं ॥३॥

बिछुड़े हुये भाई हैं जो दूर हमसे हो गये।
उनसे मिलने को कभी कोई घड़ी आती नहीं ॥४॥
गर्जी बिचारे रो रहे फर्जी कभी सुनते नहीं।
अर्जी देकर रह गये मर्जी हो पाती नहीं ॥५॥

३०—चाल गारी।

(वर्तमान मुनि, पण्डित और गृहस्थों का स्वरूप)

अब देखो सोच विचार दशा कैसी बिगड़ी ॥ टेक ॥
साधू भेषी बने स्वार्थी अभिमानी अज्ञानी।
उलटी पुलटी राह बताते घर जानी मनमानी ॥ १ ॥
दान हमारे से पढ़ पण्डित हुये उपाधी धारी।
सांची बात कहें ना करते मिथ्या भाषण गारी ॥ २ ॥
भोले भाली नर नारी ये भेड़ धसान मचाते।
अपने पांव कुल्हाड़ी मारें फिर पीछे पछताते ॥ ३ ॥

३१—गजल।

दुनियां में देखो कैसा अन्धेर हो रहा है।
जाती की गर्दनों पर शमसेर हो रहा है ॥ १ ॥
अपने को पंच बनकर ईश्वर का अंश कहना।
झूठी न कहते डरना जर जेब हो रहा है ॥ २ ॥
मुनि भेषी धर्म खण्डित मतलब का यार पंडित।
घर वाला रूढ़ि मंडित क्या फेर हो रहा है ॥ ३ ॥
अनमेल शादियों से बेशा खराबियों से।
क़ौमी वतन हमारा खंड्हेर हो रहा है ॥ ४ ॥

जो भाई हैं हमारे वे धर्म बन्धु प्यारे ।
झगड़े में जाति पांती के गैर हो रहा है ॥५॥
समता कराने वाला ऊँचा उठाने वाला।
जिन धर्म का सहारा वे पैर हो रहा है ॥६॥

३२—दादरा

चहुं ओर सुधारक दल की अब चमक बीजुली आई ॥ टेक ॥
आपस का भेद मिटाया, भाई को गले लगाया ।
सब युवक संगठन करती अब चमक बीजुली आई ॥१॥
मुनि भेषी स्वारथ कुठली, पंडित दल की कठ पुतली ।
उनको भदरंग नचाती अब चमक बीजुली आई ॥२॥
नूतन बहु ग्रंथ बनाये, निज गोबर पंथ चलाये ।
पण्डित मन खंडित करती अब चमक बीजुली आई ॥३॥
निज ज्ञान नेत्र कर अन्धे चलते पड़ते बहु फन्दे ।
उनको उजियाला करती अब चमक बीजुली आई ॥४॥
तम जाली ग्रन्थ नसाया, सत धर्म उजाला छाया ।
पाखंड कुदंभ नसाती अब चमक बीजुली आई ॥५॥

३३—गजल

जवानो कैसी मुसीबतों में हमारे भाई पड़े हुये हैं ।
पड़ी हैं बेड़ी ये रूढ़ियों की गलेमें फंदे पड़े हुये हैं ॥१॥
ये मेले ठेले बड़ी प्रतिष्ठी कचौड़ी लड्डू मरेका जीमन ।
विवाह शादी फिजूल खर्चे हमारे मत्थे मढ़े हुये हैं ॥ २॥

ये मतलबी साधु भेषियों के खुशामदी झूठे पण्डितों के।
हितों के नाशक ये दोनों के दल गले हमारे पड़े हुये हैं ॥३॥
बहुत से जाली धरम से खाली स्वअर्थ पोषक बनाये पुस्तक।
भुलाने वाले फंसाने वाले बहुत से जाले पड़े हुये हैं ॥४॥
बे खौफ होकर ब जोश हिम्मत मैदां में आओ निकल के बाहर।
इन्हें छुड़ाओ ये मुद्दतों से तुम्हारे दर पै खड़े हुये हैं ॥५॥

३४-दादरा भैरवी

(गरीब गृहस्थ की पञ्चों के प्रति)

पत राखो न राखो तुम्हारी मरजी ॥टेक॥

हाथ जोड़कर विनय करत हैं हमतो तुम्हारे गरीब गरजी ॥१॥
बेटी चार ब्याह को बैठीं हम निरधन हैं बहुत करजी ॥२॥
हमरी बात सुने न कोई बहुत दिनन तें करी अरजी ॥३॥
हमरी ओर कृपा कर निरखो अब न बनो कपटी फरजी ॥४॥

३५—होली काफी।

मतवालन कैसी होली मचाई ॥टेक॥

लाखन प्रतिमा धरी मन्दिर में ठौक न होत समाई।
इक इक भाग परगी दश दश तो हू प्रतिष्ठा कराई ॥
वृथा धन देत लुटाई ॥ मत० ॥ १ ॥
स्वारथ काज मिले भेषिन संग मनमानी कहलाई।
नूतन ग्रन्थ बनाय अनेकन गौबिर पन्थ चलाई ॥
अंखियन धूल उड़ाई । मत० ॥ २ ॥

सोने कांच मढ़ाय मन्दिरन साज अनेक सजाई।
वीतराग विज्ञान नशावहिं चित भ्रम देत कराई॥
नाम हित कछु न सुझाई॥ मत०॥ ३॥
बूढ़े संग विवाहि बालिका थैली लेत भराई।
बड़ी बहू संग छोटे ब्याहें बड़े भाग जसु पाई॥
आप रस रंग उड़ाई॥ मत०॥ ४॥
पूजा रचि ज्यौनार करावें सरतेहु देत जिमाई।
रंडी भडुआ आतिशबाजी ब्याह में धनहि लुटाई॥
जाति हित खर्च न पाई॥ मत०॥ ५॥
न्यारी न्यारी ढपली बाजे न्यारा ही राग सुनाई।
सुनत न कोई तूता की धुनि बाज रही शहनाई॥
चेत अब राम दुहाई॥ मत०॥ ६॥

३६--होली।

इन सबको समझाय रही होली सी सनक।
समझाय रही नहिं माने तनिक॥ इन०॥ टेक॥
जैन धरम को मरम न जाने कठिन माने धरम सनक॥ १॥
कथा पुराण सुनत हर्षावत कान धरे न सत धरम भनक॥२॥
वीतराग विज्ञान न जाने ये चाहत हैं चमक दमक॥३॥
मंदिर साज अनेक सजावें अपनी शान दिखावे धनिक॥४॥
मेला और प्रतिष्ठा करावें जानी जिन मानों लागी पिनक॥५॥
कोई बने मुनि कोई पंडित अपनी ले बनावें बनक॥६॥
ऊपर फूले फिरत सभी जन कोई न जाने मन की कसक॥७॥

३७-रसिया।

चहुँ दिशि में आज मची होरी ॥ टेक ॥

मनमानी सब करत आपनी लाज शरम सबने छोड़ी ॥१॥
मुनि भेषी अरु गोवर पंथी केसी सुघड़ जुगल जोड़ी ॥२॥
एक ने भेष बनाय दिखायो रीझ गई जनता भोरी ॥३॥
दूजे ग्रन्थ बनाइ अनेकन इत उनतें करके चोरी ॥४॥
सोने काँच सजाय मंदिरन वीतरागता रंग बोरी ॥५॥
कन्या क्रय रुजगार बनायो द्रव्य कमायो भर भोरी ॥६॥
बालक रुदन पुकार मची रस रंग रची विधवा गोरी ॥७॥
बूढ़े संग नवयुवती छोरी रास रची पंचन जोरी ॥८॥
नेता करि प्रस्ताव दूर तें काम न करें बातें कोरी ॥९॥
आने राग रंग सब कोई जानी कौ न धनी धोरी ॥१०॥

३८-थियेट्रीकल।

आओ जी सब जन मिल करके हाँ भई दुख कर यह रीती।
यह रुढ़ी मिटाव हां भई तोबा तोबा ॥ टेक ॥
बच्चों की क्यों करके शादी उम्र भर उनको रुला।
क्यों मिटाये देते हो दिल में जरा तो तर्स ला ॥
ठहर जाओ फूल खिलने दो अभी तो अध खिला।
क्या मिलेगा गर मसल कर दोगे मिट्टी में मिला ॥ १ ॥
बूढ़े खूसट खोसलों से छोटी बच्ची ब्याह कर।
क्यों बढ़ाते बेवायें औ पाप कन्या बेच कर ॥

छोटे बच्चे की बहू को खूब तगड़ी देख कर।
बड़ भाग अपने को समझते अब जरा तो शर्म कर ॥ २ ॥
मेले ठुकने शादियों में औ सजावट में कहीं ॥
शेखियों में भेपियों में अब लुटाओ धन नहीं।
देश जाती धर्म पर आपत्तियां हैं आ रहीं।
देखते हो क्या खड़े कुर्बान क्यों होते नहीं ॥ ३ ॥

३९–जोगी आसावरी

जैन वीरो! कमर कसके आओ लाज जातीकी अबतो बचाओ।
मेरी आशा भरोसा तुम्हीं हो, मेरे प्राणों के प्यारे तुम्हीं हो।
अब तनिक भी न देरी लगाओ। लाज० ॥ १ ॥
फन्द में रूढ़ियों के पड़ी हूँ, बीच में दंभियों के खड़ी हूँ।
इनके फन्दे से हमको छुड़ाओ। लाज० ॥ २ ॥
फूट डाइन ने हमको सताया, मेरे लालों को हमसे छुड़ाया।
सबको छाती से लाकर मिलाओ। लाज० ॥ ३ ॥
आठ आंसू न मुझको रुलाओ, दिलमें अब तो जरा तर्स लाओ।
मेरे बेड़े को पार लगाओ। लाज० ॥ ४ ॥

४०–दादरा भैरवी।

जाती पे छाई काली घटा ॥ टेक ॥
फूट के बादल रिम झिम बरसें—
द्वेष दादुर धुनि हृदय फटा। जाती० ॥ १ ॥

कीचड़ कलह कुमार्ग बनायो—
प्रेम सुपथ को दूर हटा । जाती० ॥ २ ॥
रूढ़िन की अंधियारी छाई—
ज्ञान प्रकाश न दीखे छटा ॥ ३ ॥

४१–गजल ।

कहना सब कुछ ना करना कुछ इन नाम सुधारक वालों का ।
है जाति दुःख पर सहित सुःख ना काम करें पर नाम रहे ।
स्कीम बनाना काम रहा इन नाम सुधारक वालों का ॥१॥
बाहर खींचें धुवाँधार घर में है पुराना कारबार ।
बाहर कहना भीतर डरना इन नाम सुधारक वालों का ॥२॥
कालिज की जरूर बनाते हैं पर सेठों के मुंह को ताकते हैं ।
स्वारथ का त्याग नहीं करना है काम सुधारक वालों का ॥३॥
सब जैनों में रोटी बेटी आवश्यक बात नहीं हेटी ।
अगुआ बनने का काम नहीं इन नाम सुधारक वालों का ॥४॥
जो ही कहना सोई करना पर पीछे कदम नहीं धरना ।
घर में छिपकर बैठे रहना धिक्कार सुधारक वालों का ॥५॥

४२–रसिया ।

अब ये देखि दशा जाती की मोपै बैठ रहो ना जाय ॥टेक॥
भेषिन भेष बनाय रिझायो, पंडित ग्रंथ जाल फैलायो ।
वीतराग आदर्श मंदिरन धनिकन दिये सजाय ॥ १ ॥
रूढ़िन ही को धर्म बनायो, सत्य धर्म पहिचान न पायो ।
बनि के ठेकेदार धर्म को कोनिन दियो छिपाय ॥ २ ॥

अनपढ़ अबला जकड़ीं गहना, पर्दा कैदी माता बहना।
तिनकी निर्बल सन्तति मुंह पे रही मुर्दनी छाय ॥ ३ ॥
बीस लाख के बारह रह गये, नामें तीन में तेरह हुइ गये।
बनी हजारों जाति संगठन शक्ती सभी नसाय ॥ ४ ॥
जग में बहुविधि नाम धराओ, नामहिं बीर कलंक लगाओ।
अब हूँ चेत आंख के अन्धे बचो बचायो जाय ॥ ५ ॥

४३—गजल।

अब होश तो सम्भालो क्यों हो रहे दीवाना ॥ टेक ॥

लड़ते हो भाई भाई रखते न दोस्ताना।
अपने ही हाथों घर को क्यों कर रहे वीराना ॥ १ ॥
चलते हो क्यों न उसपर जिस पर चले जमाना।
गर अब न बदला अपना मिट जाय कारखाना ॥ २ ॥
आपस की तफाउत को अब जल्द ही दफनाना।
मिल करके बैठो इक जा पी प्रेम का पैमाना ॥ ३ ॥

४४—दादरा।

अबार मोरे प्यारे जाती के संकट को टार ॥ टेक ॥
अज्ञान अविवेक अंधियारी छाई—
कलह की भीषण बयार। बयार० ॥ १ ॥
रूढ़ी भंवर में फंसी अति झंझरी—
नैया पड़ी मंझधार। मंझधार० ॥ २ ॥
पाखंडी दंभी लुटेरों ने घेरा—
मारग न सूझे अबार। अबार० ॥ ३ ॥

अब संगठन पतवार लगाओ—

ज्ञान मशाल उजार । उजार० ॥ ४ ॥

४५—दादरा ।

तजो यह मनमानी, मनमानी रे ॥ टेक ॥
साधु भेष को नहीं लजाओ, उल्टी चलाओ न रीति,
नहीं ये अनजानी । अनजानी रे ॥ १ ॥
पण्डित बनकर झूठ न बोलो, शास्त्रों को डालो न बीच,
नहीं हम अज्ञानी । अज्ञानी रे ॥ २ ॥
थैली भराकर कन्या न बेचो, बुड्ढे से बांधो न खींच,
नहीं ये बे जानी । बे जानी रे ॥ ३ ॥
भाई को कबहूँ दूर न कीजे, राखो हृदय के बीच,
करो मत नादानी । नादानी रे ॥ ४ ॥
सत्य धरम गह रूढ़ी त्यागो, फैलाओ घर घर के बीच,
सुखद यह जिनवानी । जिनवानी रे ॥ ५ ॥
जातो जवानो कमर कसके अब, आजाओ मैदां के बीच,
रहे तब मर्दानी । मर्दानी रे ॥ ६ ॥

४६—थियेट्रीकल ।

मन मानी तेरी जाती रिवाजों ने मारा खराजों ने मारा,
मैं तो इनसे हूँ हैरान २ । हैरान, अनजान, परेशान ॥ टेक ॥
बच्चों की करके शादियां निर्बल उन्हें बना दिया ।
बुड्ढे के साथ ब्याह कर बेवा उन्हें बना दिया ॥ १ ॥

मेला प्रतिष्ठा नाम पर धन को फिजूल खर्च कर।
ढोंगियों ने लूट कर खाना खराब कर दिया ॥ २ ॥
बेचारी कन्या बेचकर बेजोड़ जोड़ा जोड़कर।
अनजान और बेपढ़ी घर वालियों ने मिटा दिया ॥ ३ ॥

४७—दादरा।

देखो आया है कैसा जमाना रे ॥ टेक ॥
भाई का भाई गला काटते हैं,देते ऊपर से आपस में ताना रे।
देखो० ॥ १ ॥
मर्दानगी है मर्दों ने खोई छिपते फिरते हैं जैसे जनाना रे ॥
देखो ॥ २ ॥
भाई को धक्के देकर निकालें, जैन जाती का पाप बढ़ाना रे।
देखो० ॥ ३ ॥
सधवा सासू बन ठन बैठे, विधवा बहू का चक्की चलाना रे।
देखो० ॥ ४ ॥
अनजान अबला पर्देमें डालो,गुड़ियों जैसा है उनको सजानारे
देखो० ॥ ४ ॥
साधू भेषी बने अज्ञानी, काम करते हैं जो मनमाना रे ॥
देखो० ॥ ५ ॥
हिम्मत हार जवान बने सब,गड्ढे गालोंमें कमर झुकानारे।
देखो० ॥ ७ ॥

४८—बागेश्री ।

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥
तरु तल की छाया ज्यों प्रति दिन चलत रहत प्रतिमान ।
रहीं करोड़ों संख्या जिनकी रहि गये लाख प्रमान ॥ १ ॥
समंतभद्र वादीभ केशरी भये अकलंक समान ।
साधू भेषी भये अज्ञानी झूठ कहत विद्वान ॥ २ ॥
शूर वीर निकलंक सरीखे न्योछावर प्रान ।
कोनन छिपत छिपाय धरम धन लुटत देखि निज शान ॥३॥
स्वारथ रत जाति हित नाशक प्रगट भये पश्चान ।
हिम्मत बांध जतन करि अबहूँ हुइ हो फेरि महान ॥ ४ ॥

४६—दादरा ।

देखो लुटेरों की बनआई । हां बनआई २ । सब लूटा समाज ॥ देखो० ॥ टेक ॥
अज्ञानी साधू भेष बनावें लाखों हजारों की संपति लुटावें ।
मनमानी सेवाकरवाई । हां करवाई २। कुछ सारा न काज।१।
नूतन अद्‌भुत ग्रन्थ बनावें, अपना गोचर पन्थ चलावें ।
रूढ़ी कुरीती चलवाई । हाँ चलवाई२।रक्खा पंडित का ताज।२
मेला प्रतिष्ठा में खर्च करावें, धर्म की ओट में नाम कमावें ।
मरने पै ज्योंनार करवाई । हांकरवाई२ । ये कैसा रिवाज । ३।
कन्या को बेचके थैलो भरावें विधवा को घर की दासीबनावें।
शिक्षा नहीं कुछ दिलवाई ।हाँ दिलवाई२ । डूबा स्त्री समाज।४।

५०—गजल

कोई हंस रहा है कोई रो रहा है ॥ टेक ॥

बुड्ढे से शादी हुई बालिका की, ये दिल हंस रहा है
वह दिल रो रहा है ॥१॥

पिता पाई थैली लड़की रंडापा, ये मन हंस रहा है
वह तन रो रहा है ॥२॥

पञ्चों को लड्डू विधवा को निर्धन, इधर हंस रहा है
उधर रो रहा है ॥३॥

सगे ने बिगाड़ी विधवा बिचारी,ये घर रह रहा है
वो निकल जा रहा है ॥४॥

अड्डे पै चढ़ उसने कुल को लजाया, तो ये हंस रहा
और वो रो रहा है ॥५॥

बड़ों के हुये हैं प्रभू दीनबन्धू, बड़ा हंस रहा दीन
वो रो रहा है ॥ ६ ॥

भाई ने धक्के दे भाई निकाला, ये इक हंस रहा है
वो इक रो रहा है ॥७॥

निरोगी को औषधि नहीं रोगियों को, समझदारो !
ये जुल्म क्या हो रहा है ॥८॥

सभी का धरम धन छिपाये हुये हम, हमीं हंस रहे हैं
जगत रो रहा है ॥९॥

दुनियां दुरङ्गी की हालात को देखो, समझ में न आता
ये क्या हो रहा है ॥१०॥

५१—कव्वाली

जाती हित करने वाले तुम को लाखों सलाम ॥टेक॥
बालापन में करके शादी, करते हैं उनकी बरबादी ।
कानून बनाने वाले तुम को लाखों सलाम ॥१॥
बुड्ढों के हैं व्याह रचाते, अपनी थैली को भरवाते ।
उनको समझाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥२॥
पर्दा करके कैद में डाला, और मुंह में लगाया ताला ।
अवला रक्षा करने वाले तुमको लाखों सलाम ॥३॥
विधवाओं को खूब सताते, जोरावरी शील पलाते ।
अधिकार दिलाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥४॥
आपस में हो रोटी बेटी, बात नहीं ये कुछ भी हेटी ।
हिल मिल जाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥५॥
हैं जो दूर हमारे भाई, बीच पड़ गई भेद की खाई ।
फिर आन मिलाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥६॥
मंदिर को हैं खूब सजाते, वीतराग विज्ञान नसाते ।
अज्ञान बनाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥७॥
अज्ञानी हैं बने मुनि भेषी, पण्डित जाती हित के द्वेषी ।
गोबर पंथ मिटाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥८॥
नवयुवकोंमें आलसभारी,बुज दिल और हिम्मत हारी ।
साहस बल देने वाले तुमको लाखों सलाम ॥९॥
सबको हैं संदेश सुनाते, जिन शासन को हैं फैलाते ।
घर घर पहुंचाने वाले तुमको लाखों सलाम ॥१०॥

नवयुवकों के विषय में

५२–गजल

कौम पर कुर्बान हो मरने की कुछ परवा न कर ।
चोट जो दिल में तेरे औरों के पैदा दर्द कर ॥१॥
है रगों में जो तेरे जोशे जवानी का लहू ।
कौम की आहों की आतिश से उसे अब गर्म कर ॥२॥
आंखों आगे हो रहा है जुल्म सारी कौम पर ।
ताकतें बाजू दिखा और हिम्मते मर्दाना कर ॥३॥
बेवायें बर्बाद हों अनजान में हों शादियां ।
भाई निकाले जांय घर से कुछ तो दिल में शर्म कर॥४॥
गर रहा कायर बना मिट जायगा नामो निशां ।
वीर का झगड़ा उठा घर घर संदेशा वीर कर ॥५॥

५३—दादरा

पीछे यारो कदम को हटाना नहीं ॥टेक॥
दुनियां में काम को करके दिखा—
बातों का सिर्फ बनाना नहीं ॥ १ ॥
आफत आवे कोई धूम मचा –
मर्द बनो ये जनाना नहीं ॥ २ ॥
जान जाय चाहे रह जा—
कोई किसी से डराना नहीं ॥ ३ ॥
घर घर जैन धरम पहुँचा—
कोई किसी का सताना नहीं ॥ ४ ॥

५४—गजल

नौजवानों के दिल में असर हो गया ॥ टेक ॥

कौम की देख हालात दिल हिल गये ।
ठेस जाती से दागे जिगर छिल गये ॥
संगठन मरहमे जख्म का हो गया ॥१॥

अब बिना संगठन जीना दुशवार है ।
संगठन कौम का जीवनाधार है ।
भाव भाषा अशन भेष इक हो गया ॥२॥

वीर कायल सभी वीर जानी बनें ।
धर्म परचार में सबके साथी बनें ।
दिल में पुख्ता सभी के यकीं हो गया ॥३॥

५५-दादरा

मेरा मन मेरा मन मोह गया हो देखि जवान सुमेलवा ॥टेक॥

शूर वीर विद्वानों ने पाखण्ड किये सब धूल ।
सब जन सब जन मिट गये हो कायर क्रूर डरेलवा ॥१॥

अन्यायी औ अत्याचारी रण में मारे हूल ।
सब जन सब जन छिप गयेहो मन डरपोक हरेलवा ॥२॥

मन मानी औ खैंचातानी आज गये सब भूल ।
सब जन सब जन लग गये हो सज्जन शूर गरेलवा ॥३॥

उत्साही नवयुवक साहसी आज गये सब फूल ।
सब जन सब जन मिल गयेहो बन कर भ्रात घरेलवा ॥४॥

५६–गजल काफी।

नौ जवानो कौम के इस हाल पर।
क्यों तरस खाते नहीं इस चाल पर ॥१॥
छोटी छोटी बच्चियों की शादियां।
हो रहीं अनजान में बरबादियां ॥२॥
बूढ़े खोसट पोपले बनते बना।
क्यों नहीं जाकर उन्हें करते मना ॥३॥
साधु वेषी पण्डितों के फेर में।
बर्बाद हो मिट जायगी कुछ देर में ॥४॥
रात बीती हो गया अब तो सहर।
कब तलक सोते रहोगे बेखबर ॥५॥
कस कमर को आइये मैदान में।
देखो बट्टा लग न जाये शान में ॥६॥
कौम जब मुर्दा सभी हो जायगी।
बात क्या फिर आप की रह जायगी ॥७॥

५७–ठुमरी दरबारी।

हम डटकर क्रांति मचइहैं।
साहस से आगे पग धरिके, पाछे नाहि हटइहैं ॥१॥
अत्याचार नाश के रण में, नय तलवार चलइहैं ॥२॥
सन्मुख सदा रहेंगे रण में, नाहीं पीठ दिखइहैं ॥३॥
पाखण्डी अभिमानी भेषी, सबको मारि भगइहैं ॥४॥
सत्य धरम हितकारि नीति की, विजय ध्वजा फैरइहैं ॥५॥

५८–गजल ।

अब तो सुधार करने का हमने इरादा कर लिया ।
सबको जगा के उठने का हमने इशारा कर दिया ॥१॥
बिछुड़े मिले हैं आनकर भाई को भाई जानकर ।
मिलके सबों को बैठने का ठिकाना कर दिया ॥२॥
बूढ़े और बच्चे ब्याह कर सारा समाज नाशकर ।
कमजोर बुजदिल बना गारत जमाना कर दिया ॥३॥
अब तो जरा लजाइये कसके कमर को आइये ।
मरते हुये बचाइये तुमको तबीब कर दिया ॥४॥
अब किसी से डरो नहीं पीछे कदम धरो नहीं ।
नाहक को बेबसी का ये झूठा बहाना कर दिया ॥५॥

५९–गजल ।

नौ जवानों आज क्या मालूम हालत होगई ।
बुजदिले कमजोर हो काफूर ताकत होगई ॥१॥
कौम पर हैं जुल्म होते आंखों आगे देखने ।
जोश हिम्मत की सभी क्या कयामत होगई ॥२॥
चश्मों पर चश्मा चढ़ा गालों में गड्ढे पड़ गये ।
खुश्क लब पीला बदन शान गारत होगई ॥३॥
बन्द कर आंखें चले नागिहानी राह पर ।
धूल क्या सब आपकी सारी लियाकत होगई ॥४॥
बेवायें वेश्या बनीं भाई बिगाने होगये ।
बेहया मिट्टी के पुतले तुम पै लानत होगई ॥५॥

६०—गजल ।

खिदमते धर्म में जो जान फ़ना करते हैं ।
जाम अमृत का वहीं मर्द पिया करते हैं ॥१॥
कदम पीछे न हटाते कभी शैदाये धरम ।
सब्रो सामान शुजायत में किया करते हैं ॥२॥
जान जाये मगर इक आन न जाने पाये ।
आन वाले तो आन पर ही मिटा करते हैं ॥३॥
काम मर्दों का है मैदान में आगे बढ़ना ।
हैं वो नामर्द जो कोने में छिपा करते हैं ॥४॥
पहुँच जाते हैं वही मंजिले मकसूद तलक ।
गिरते पड़ते भी जो आगे को बढ़ा करते हैं ॥५॥
नहीं बूये वफा जिनमें प्रकाश वो इन्सा ।
कहो इन्साफ से क्या खाक जिया करते हैं ॥६॥

६१—गजल ।

नौ जवानो तुम कदम आगे बढ़ाना सीख लो ।
धर्म के मैदान में अब सर कटाना सीख लो ॥१॥
हाल अबतर हो रहा है कुछ नहीं तुमको खबर ।
होश में आओ जरा बिगड़ी बनाना सीख लो ॥२॥
बुजदिली दिल से निकालो साहिबे हिम्मत बनो ।
शौक से रंजो बला शिर पर उठाना सीख लो ॥३॥
ठहर सकता है नहीं कोई तुम्हारे सामने ।
जो कहीं तुम संगठन करना कराना सीख लो ॥४॥

मुफ्त खोरों में उड़ाओ मत दरा दौलत कभी।
कौम की खिद्मत में मालो जर लुटाना सीख लो ॥५॥
छोड़कर अब बाहिमी नफरत करो आपस में प्रेम।
जाति गङ्गा में सभी डुबकी लगाना सीख लो ॥६॥
चालबाजों के कभी दम में न आना चाहिये।
इस कहावत को अमल में आप लाना सीख लो ॥७॥
नेकनामी गर जहां में चाहते हो तुम प्रकाश।
हुब्बे कौमी की जिगर में चोट खाना सीख लो ॥८॥

६३—गजल।

हमें जैन झण्डा उठाना पड़ेगा।
घर घर में इसको घुमाना पड़ेगा ॥१॥
बहुत सो चुके ख्वाब गफलत में अबतक।
सोते हुओं को जगाना पड़ेगा ॥२॥
न समझें इसे धर्म अपना हकीकी।
अजैनों को जैनी बनाना पड़ेगा ॥३॥
बतावें उन्हें जैन कहते हैं किसको।
शास्त्रों को उनको दिखाना पड़ेगा ॥४॥
इसी जैन झण्डे की छाया में इक दिन।
हजारों को अब तो बिठाना पड़ेगा ॥५॥
यही प्रेम की आखिरी आरजू है।
छिपा राज इसका बताना पड़ेगा ॥६॥

६३—दादरा ।

अब मर्दे मैदां में आजइयो जोशीले सुघड़ जवानो ।
जोशीले सुघड़ जवानो मर्दाने सुभट जवानो ॥ अब ॥ टेक ॥
जिस कौम ने पाला पोसा, कीना था बहुत भरोसा ।
मत उसको आज रुलाजइयो जोशीले सुघड़ जवानो ॥१॥
नहिं पीछे कदम हटाना, भगकर ना पीठ दिखाना ।
अब सब से आगे होजइयो जोशीले सुघड़ जवानो ॥२॥
कायर न कपूत कहाना, मत मां का दूध लजाना ।
कुछ करके काम दिखा जइयो जोशीले सुघड़ जवानो ॥३॥
नहिं जाति कलंक लगाना, ना धर्म को नाम धराना ।
अब आन पै शान जमा जइयो जोशीले सुघड़ जवानो ॥४॥
पाखंडी दंभी मानी, अत्याचारी मनमानी ।
अब सब को मार भगा जइयो जोशीले सुघड़ जवानो ॥५॥

६४—दादरा ।

मिहर्बां जवानो हमारी भी सुन लो ॥ टेक ॥
बहुत सो चुके ख्वाब गफ़लत में अबतक,
अबतो जरा अपनी जाती की सुध लो ॥१॥
भूले हुये हो क्यों अपनी ताकत,
मैदाँ में दो हाथ तलवार करलो ॥२॥
पड़ी बेड़ियां पैर में रूढ़ियों की,
उन्हें तोड़कर कौम आजाद करलो ॥३॥

बिछुड़े हुये हैं जो भाई तुम्हारे,
गले से लगाकर उन्हें प्यार करलो ॥४॥
करो संगठन एक माला के दाने,
जपो एकता मन्त्र जय सिद्ध करलो ॥५॥

६५—होली महाना।

जो कोई मेरे सामने अटके, अबकी मैं मैदां करूं डट डटके॥टेक
ऐसी क्रांति करूं मैं चहुँदिश जो कायर मन निशदिन खटके।१
प्राण जांय पर प्रण नहिं छाड़ूं पग न धरूं मैं पीछे उलटके।२
जीवन में इक लक्ष्य बनाऊं देखूं नहि मैं पीछे पलटके॥३॥
कैसो हू लालच या भय होवे मारग अन्त न जाऊं हटके॥४॥

६६—बहार लंगड़ी।

नीर वही चिनगारी हो तुम, छिपी जहां पर वह ज्वाला।
दुखियों के कष्टों को जिसने, भस्म कभी था कर डाला॥१॥
धधक उठेगी अगर तुम्हारे, मन में छिपी हुई वह आग।
उस अनीति कुलटा का सारा, जल जायेगा सदा सुहाग॥२॥
राख समझकर उसके ऊपर, पथि को रखना पैर नहीं।
छिपी आग इसके भीतर है, धोका खाजाना ना कहीं॥३॥
अंचल डुला डुलाकर जिसको, जला रही भारतमाता।
भभक उठेगी शीघ्र बनेगी, दीन जनों की वह त्राता॥४॥

६७—गजल।

जवानो दुनियां में उपकार का कुछ काम कर जाना॥ टेक॥

हमेशा हो रहा ये ही कि जीना और मर जाना।
अमर गर चाहते होना तो अपना नाम कर जाना ॥ १ ॥
हुये जिस कौम में पैदा कि जिसका खाना औ पीना।
उसी पर धन बदन अपना सभी कुर्बान कर जाना ॥ २ ॥
धरम तरु पूर्वजों ने सत्य जल से खूब सींचा था।
उसी को रूढ़ियों से आज मत बर्बाद कर जाना ॥ ३ ॥
हजारों लाखों ने जिस धर्म से मुक्ती को पाया था।
छिपाकर सबको उससे आज मत महरूम कर जाना ॥ ४ ॥

६८—गजल।

जवानों में मायूसी आने न पाये ॥ टेक ॥

हमेशा कदम को आगे बढ़ाओ।
कभी कोई पीछे हटाने न पाये ॥ १ ॥
हो रहे जुल्म कौमी सरासर सभी पर।
कोई किसी को सताने न पाये ॥ २ ॥
कुरीतों को औ रूढ़ियों को मिटादो।
नामो निशां उनका रहने न पाये ॥ ३ ॥
धरम देश जाती की इज्जत बचाओ।
कहीं पर कभी शान जाने न पाये ॥ ४ ॥
सदावीर संदेश सबको सुनाओ।
बकाया कोई काम आने न पाये ॥ ५ ॥

स्त्री शिक्षा के विषय में ।

६९—चालगारी ।

बिन विद्या गुजर न होय तुम्हारी अब बहना ॥ टेक ॥
नीके नीके कपड़ा पहिने नये नये सब गहना ।
बिन विद्या शोभा नहि देते भार पड़े है सहना ॥ १ ॥
नथबेसर की नाथ बनाई हाथ हथकड़ी तोड़ा ।
कमर बंध करधनी पांव में बेड़ी चाँदी बोझा ॥ २ ॥
नाक कान को छेदि रखें पर्दे में कैदी जैसे ।
पग जूती समझें तुम हो अर्द्धअंगनी कैसे ॥ ३ ॥
पर्दा फाड़ो गहना छांड़ो वीर लक्ष्मी जैसी ।
विद्या पढ़के बनो सरस्वती ब्राह्मी सुन्दरी कैसी ॥४॥
तीर्थङ्कर से चक्रवर्ति से पुत्रन की हो माता ।
दुबले पतले रोगी ज्याये हौआ से भय खाता ॥ ५ ॥

७०—दादरा ।

अय बहनो तुम्हारी कोई सुनेना ॥ टेक ॥
अपढ़ तुमको रक्खा पर्दे में डाला—
मानव समझकर आदर करें ना ॥ १ ॥
बचपन में छोटों से बुड्ढों से व्याहैं—
थैली भरें तुमको राजी करें ना ॥ २ ॥
सजाये जैसे गुड़ियाँ करें मन खुशियां—
रक्षा का कोई साधन करें ना ॥ ३ ॥

मैशीन लड़के बनाने की समझें—

शिक्षित बनाने की चिन्ता करें ना ॥ ४ ॥

सभी अपने पैरों खड़ा क्यों न होवें—

बने वीर मां भोग्य वस्तु बनें ना ॥ ५ ॥

७१—चालगारी ।

हितकर रीति सुरीति बढ़ाओ खोटी रीति नसाय के हांजी ।
पहले हित अनहित पहिचानो विद्या बुद्धि बढ़ायके हांजी ॥
पंगु बनी क्यों पांव में बेड़ी चाँदी सोरन डारि के हांजी ।
कैदी बनी क्यों होत न बाहर या पर्दा को फारि के हांजी ॥
बूढ़े के संग निज कन्या ब्याहैं थैली लेत भगाय के हांजी ।
छोटे सों ब्याहि बड़ी हर्षावत निज बड़भाग बताय के हांजी ॥
ब्याह में सीटन गारी गावैं सम्मुख नाहिं लजावत हां जी ।
रूढ़िन की अब काटि के बेड़ी क्यों पग नाहिं बढ़ावत हांजी ॥

७२—दादरा ।

मैं सबका सुधार कर दूंगी ॥ टेक ॥

बचपन में ब्याहें निर्बल बनायें—
बुड्ढे से करके शादी मैं थैली भगाने न दूंगी ॥ १ ॥
विधवाओं को बिगाड़ें लुभावें—
आठ आँसू रोवें बिचारी मैं उनको सताने ना दूंगी ॥२॥
बहिनों को शिक्षित बनाऊं पढ़ाऊं—
आजाद कर फाड़ पर्दा मैं कैदी बनाने ना दूंगी ॥ ३ ॥

७३—दादरा।

ये ही दुश्मन बने हैं हमारे आधे अंग कटाने वाले ॥ टेक ॥

बाप ने बुड्ढे से कन्या सगाई, पांच हजार की थैली भराई।
साखों पशु ह खाने वाले ॥ १ ॥

छोटे से भाई बहनें व्याहा, मानके मनखत खुशियां मनाई।
उन्हें जीने के पड़ गये लाले ॥ २ ॥

हमको बनाया अनपढ़ अबला, कैदी बनाया पर्दे में डाला।
आप बने हैं रखवाले ॥ ३ ॥

चुन चुन के सब पोथी बनाई, मतलब पराधीन रखना ही।
मुंह में लगा दिये ताले ॥ ४ ॥

हम को मानुष भी न समझें, अपने पग की जूती समझें।
कैसे हैं न्याय निराले ॥ ५ ॥

हमको बनाना चाहते सीता, राम गुणों से आप हैं रीता।
ये ही दुःख के नाले ॥ ६ ॥

७४—दादरा।

अय बहिनो जमाना कैसा आया री ॥ टेक ॥

जन्म सुनत ही घर वालों को रोना आया री ॥ १ ॥
छोटे बड़ों से व्याहके ज्यों त्यों गाना गाया री ॥ २ ॥
अनपढ़ अरु अबला रखना ही मन भाया री ॥ ३ ॥
अपने पैरों आप खड़ी हो मौका आया री ॥ ४ ॥

७५-दादरा

कैसे समाज के पाले पड़ी हूँ देखे न कोई दरदवा हायराम ।टेक।
बारी उमर में बूढ़े से ब्याही मेरा जरावें जियरवा हायराम।१।
बेसी उमर में छोटे से ब्याहें मनमें न लावें नरमवा हायराम।२।
कन्या बेच के थैली भरावें आप उड़ावें कहरवा हायराम ।३।
विधवा बनी तो घर के सतावें कोई न पूछे खबरवा हायराम।४।
पर्दे में डालें कैदी बनावें आप बने हैं पहरुआ हायराम ।५।
शास्त्र पुराण रचे स्वारथके मतलबका यार मरदवा हायराम।६।

विधवाओं की दुर्दशा के विषय में—

७६-दादरा

[एक विधवा की आत्मकथा]

इन्हीं लोगों ने कीना है सफाया मेरा ।।टेक।।
थैली भराकर बुड्ढे को ब्याही
एक एक हजार का आंख बनाया मेरा ।।१।।
बेचने खातिर पाली है वर्षों
सोलह में सोलह हजार गिनाया मेरा ।।२।।
इन पंचों को शर्म न आई
डटकर लड्डू कचौड़ी उड़ाया मेरा ।। ३ ।।
कुछ दिन में पति स्वर्ग सिधारे
मस्तक का सिंदूर मिटाया मेरा ।।४।।

बचा बचाया नुकते में खाया

निर्धन और कंगाल बनाया मेरा ॥५॥

फिर मेरी कोई बात न पूछे

घर ही के लोगों ने सताया मेरा ॥६॥

घर वालों से ही गर्भ रहा जब

नाक की खातिर गर्भ गिराया मेरा ॥७॥

घर से निकाली दर दर घूमी

आखिर को रंडी के घर में बसाया मेरा ॥८॥

सत्यानाश ऐसा पंचों का होवे

जैसा कि सत्यानाश कराया मेरा ॥ ६ ॥

७७-कलांगड़ा

(एक बिधवा की दर्दनाक पुकार)

इन पंचों ने मुझको लूटा रे ॥ टेक ॥

बाप ने मुझको बूढ़े को बेची पंचों ने किया अंगूठा रे ॥१॥
माल उड़ाये नहिं शर्माये लड्डू कचौड़ी समूसा रे ॥२॥
इनको अपनी पड़ी नुकते की मेरा भाग तो फूटा रे ॥३॥
गर्भ रहा जब गर्भ गिराया लख्ते जिगर भी छूटा रे ॥४॥
जाती में मेरे यार को रक्खा जो दुनियां का झूठा रे ॥५॥
मुझे निकाली बात न पूछी कैसा न्याय अनूठा रे ॥६॥
जाति हितैषी अब तो बचाओ मेरा जहाज तो टूटा रे ॥७॥
तुमरे भागन मैं बच सकती मेरा करम तो फूटा रे ॥८॥

७८-ठुमरी

[बाल विधवा की दर्दनाक पुकार]

मेरी बाली सी उमर दुख दे गयो री ॥टेक॥
मैं नहीं जानी करी मनमानी लोग कहत सुख लुट गयोरी ।१।
मैं जानी कछु खेल खिलानी धोके में हाय बिछुड़ गयोरी ।२।
मेंहदी महावर मांग न छूटी तोहीं लौं हाथ छुड़ाय गयोरी ।३।

७९-गजल

तुम्हीं ने दर्द दिया है तुम्हीं दवा देना ।
हमारे नाम को पर्दे से मत मिटा देना ॥१॥
ब्याह कर बुड्ढे से बेवा बनाया मुझको ।
दाग इस पाकये दामन में मत लगा देना ॥२॥
जाति और धर्म की खिदमत करूंगी मैं हरदम
ढोंगियोंकी बुरी नजरोंसे अब बचा लेना ॥३॥
घर से फाजिल समझ बाहर न फेंकना मुझको
जाति की आबरू न खाक में मिला देना ॥४॥
हम भी इन्सान हैं होता है तन में दर्दे जिगर ।
पापिनी कहके नहीं दर्द को बढ़ा देना ॥५॥

बाल विवाह के विषय में

८०-गजल

न छेड़ो हमें हम सताये हुये हैं ।
बहुत सारे सदमे उठाये हुये हैं ॥१॥

अनजान बचपन में शादी हुई।

हथकड़ी पैर बेड़ी लगाये हुये हैं ॥२॥

कमर दर्द घुटना दिमाग भी खाली।

आंखों पे चश्मा चढ़ाये हुये हैं ॥३॥

बस इतने में ही आके बच्चों ने घेरा।

कोल्हू के चक्कर में आये हुये हैं ॥४॥

गुलामी से फुर्सत नहीं नौकरी से।

आफिस कलम को उठाये हुये हैं ॥५॥

ये कमजोर बच्चे नहीं रहते अच्छे।

दवाओं की शीशी मंगाये हुये हैं ॥६॥

अब चन्दे वालो कहाँ से दें पैसा।

टानिक की वी. पी. छुड़ाये हुये हैं ॥७॥

धरम-देश-जाती की हो ही न पाती।

जोरू की खिदमत में आये हुये हैं ॥८॥

बृद्ध विवाह के विषय में

८१-गजल

ये देखो शान की महफिल बड़े सरकार बैठे हैं।

बुढ़ापे की अदायें क्या बना सरकार बैठे हैं ॥१॥

कमर टेढ़ी झुकी गर्दन पोपले खाल झूली है।

ये कमती देखना सुनना मुड़ाये मूंछ बैठे हैं ॥२॥

ये पगड़ी जामा पाजामा रुखों पर फूल का शहरा।

खिजाबी बाल हैं मुंह पान सुर्मा डाल बैठे हैं ॥ ३ ॥
उमर पचपन में ख्वाहिश है इन्हें नई दुलहिन की ।
ये नाती पोते वाली जोरू पहले मार बैठे हैं ॥ ४ ॥
पड़ोसी खुश कोई जाने नहीं दुख दर्द दुलहिन का।
उसे बेवा बना के मरने को तैयार बैठे हैं ॥ ५ ॥

मृत्यु भोज के विषय में

८२–दादरा।

छोड़ो मरने का भोज कराना रे ॥ टेक ॥

घर में बिचारी विधवा रोवें, औ लोगों का खाना खाना रे ।१।
घर के कुटुम्बी रोवन लागे, तब लोगों का कौर उठाना रे ।२।
घर के निर्धन होके दुखी हों, परपञ्चों को लड्डू खिलाना रे ।३।
जिह्वा को मिष्टान्न लालच लागे, है शुद्धी बताना बहाना रे ।४।
दानमें दाखिल कोई बनावें; क्या वाजिब है दानका खाना रे ।५।
ठीक खुशी में भोज कराना, यह कैसा है शोक में खाना रे।६।
कोई रोवे कोई खावे, यह कैसा है दृश्य भयाना रे ।७।

[जनता का स्वार्थी पण्डितों के प्रति]

८३–गज़ल।

रास्ता हम खुद ही भूले हुये अब आंखों में झोंको धूल नहीं।
कांटों में हमको फंसाओ नहीं जो पास तुम्हारे फूल नहीं ।१।
पहले ही ऊबड़ खाबड़ है कीचड़ कहीं दलदल मारग है।
उसमें अब खन्दक खोदो नहीं गाड़ी में हमारे चूल नहीं ।२।

यह टूटी पुरानी नैय्या है औ नाहीं कोई खिवैय्या है।
अब इसको भंवरमें फंसाओ नहीं किश्तीमें मेरी मस्तूल नहीं।३।
हम जान गये किस ओर हो तुम मतलब के यार बने हो तुम।
हुआ सो हुआ अब कहना क्या आगे मे होगी भूल नहीं ।४।

(सुधारक की स्थित पालक के प्रति)

८४–गज़ल।

अब आज नहीं तो कल ही सही तुम हमसे मिलोगे कभी न कभी।
सचबात कहीं छिपसकती नहीं तुम खुदही कहोगे कभी न कभी।
बहकाये हुये हो, औरों के सच बात को सुनते तक भी नहीं।
नफरत न करो सच बात सुनो सच को पाओगे कभी न कभी।२
जो मतलब के हैं यार तुम्हें हमसे मिलने तक देते नहीं।
लेकिन सतप्रेम कशिशसे घर मेरे आओगे कभी न कभी॥ ३
हम दोस्त तुम्हारे सच्चे हैं मतलब के नहीं ना कच्चे हैं।
हम चाहते तुमको दिलसे हैं लग जाओगे दिलसे कभी न कभी

उपदेशी गायन।

८५–दादरा।

मतवाला मन भोली सूरत का॥ टेक॥
पढ़त सुनत तू ने जन्म गंवायो—
ध्यान कियो न निज सूरत का॥ १॥
धन जोड़ो तन खूब सजायो—
काम किया न जरूरत का॥ २॥

बालकपन हू युवापन खोया—
वृद्ध भये अब ढूंढन का ॥ ३ ॥
हित अनहित कछु नांहि पिछानो—
अन्ध भये अब सूझन का ॥ ४ ॥
सब तज आतम ध्यान लगाओ—
ये ही सतारा डूबन का ॥ ५ ॥

८६–दादरा कलाङ्गड़ा ।

आंख खोल देख भाई ॥ टेक ॥
हुआ प्रभात नसो मिथ्यातम मारग देत सुझाई ॥ १ ॥
सत्य धर्म परकाश भयो अब मूढ़ उलूक नसाई ॥ २ ॥
सभी युवक मिलि रूढ़िदुर्ग पर इकदम करी चढ़ाई ॥ ३ ॥
मुनि भेषी अरु गोचर पन्थी सबको देत भगाई ॥ ४ ॥
भूल पन्थ मिले सब आकर मानव भाई भाई ॥ ५ ॥
सभी सुधारक जाति हितैषी युवक पुकार मचाई ॥ ६ ॥

८७–गज़ल ।

लेकर आये ना लेके चले जैसे आये वैसे ही चले ॥ टेक ॥
ना भगवान का भजन किया ना कुछ हाथों से दान दिया ।
खाली हाथों आये औ चले जैसे आये वैसे ही चले ॥ १ ॥
ना दुनियां में नाम किया ना पर उपकार का काम किया ।
आंखें मूंदे आए औ चले जैसे आए वैसे ही चले ॥ २ ॥
बालकपन में खेले कूदे तरुणाई में तरुणी चेले ।
वृद्धापन में दुख ही झेले जैसे आये वैसे ही चले ॥ ३ ॥

८८-ग़ज़ल ।

ना धर्म किया ना कर्म किया ना दीन के ना दुनियां के रहे ।
ना आतम हित ना जाती हित न इधर के रहे न उधर के रहे ।
ना बिन स्वारथ के काम किया परिणाम को पहले देख लिया ।
हित धर्म खर्च कर नाम किया न इधर के रहे न उधर के रहे ।
कहला के सुधारक बाबू हुये प्रस्तावों को पास कराते गये ।
असली कोई काम न उनसे हुये न इधर के रहे न उधर के रहे ॥
अनेक उपाधिन से मण्डित ये शास्त्र शिरोमणि जी पण्डित ।
सांची कहते डरते ही रहे न इधर के रहे न उधर के रहे ॥
संसार को छोड़ विरागी बने मुनि भेष लिया औ त्यागी बने ।
दुनियां दारी में फंसे ही रहे न इधर के रहे न उधर के रहे ॥

८९-ग़ज़ल ।

(अनासक्त योग-निःकांक्षित अंग)

बिन मतलब के सब काम करो होवेगा असर भी कहीं न कहीं ।
फल के उपर मत ख्याल करो निकलेगा फल भी कहीं न कहीं ॥
मायूस न हो अपने मन में अब जोशे जुनूं से काम करो ।
गिरते पड़ते चलते ही चलो चुक जायगा रस्ता कहीं न कहीं ॥
महावीर की वाणी बादल को बरसाओ बराबर सभी जगह ।
खेती न सही तो प्यास बुझा निकलेगा अंकुर कहीं न कहीं ॥
यह वीर सन्देश की दिव्य ध्वनि चहुँओर पुकार पुकार कहो ।
अनहद न सही शहनाई सही कुछ सुनतो पड़ेगा कहीं न कहीं ॥

६०—गजल

अपने अहमोल तो खुद हमसे सम्हाले न गये।
उनसे कहने लगे क्या तुमसे सम्हाले न गये ॥१॥
नसीहत दूसरों को अपनी फजीहत क्यों कर।
आजतक ऐसे सखुन दुनियां में माने न गये ॥२॥
काम बातों से सिर्फ बनता नहीं है कुछ भी।
काम करना है तो कुछ करके दिखा क्यों न गये ॥३॥
सामने सबके डींग मारते फिरते बढ़कर।
घर में छिप बैठे हो मैदां में बढ़ के क्यों न गये ॥४॥

९१—दादरा

सुनो मेरे भैय्या बात यह नीकी ॥टेक॥

रागी द्वेषी देव न पूजो, करो मेरे भैया पूजा जिन जी की ॥१॥
साँचे साधु की सेवा कीजे, सुनो मत भैया बात भेषी की ।२।
अमृतमय जिन वानी सुनिये, सुनो मेरे भैया और सब फीकी ।३
दीन दुखी की सेवा करिये रखो मेरे भैया चाह यह जी की ।४।
मीठे बचन सदा ही कहिये, हुइ है भैया बड़ाई उसीकी ॥५॥
सदा भलाई सबकी करिये, करो मत भैया बुराई किसी की।६।
आली धरम की सेवा कीजे, रहि है भैया निसानी उसी की।७।
सब मिल एक संगठन कीजे हुइहै भैया भलाई सभी की ॥८॥

९२—कव्वाली

हितकारी वीर का ये सुन लो कलाम ॥ टेक ॥
सभी जन बराबर न छोटा बड़ा, यही इलहाम ॥१॥

नहीं हक धरम पर किसी एक का, सभी का है धाम ॥२॥
प्रभू दीन बन्धू पतित पावनं, धनी का नाम काम ॥३॥
बिना स्वार्थ उपकार सेवा करो, लो मुक्ती इनाम ॥४॥

९३—गजल सोहनी।

जुल्म भी होता रहे होती रहे फर्याद भी ॥ टेक ॥
दश बरस की बालिका संग ब्याहे चालिस वर्ष का।
इसके खिलाफत में करें सारी सभा प्रस्ता र भी ॥१॥
बेवाओं को जो बिगाड़ें जाति में रह मौज से।
घर से निकालीं जांय वह होती हुई बर्बाद भी ॥२॥
भाई कभी अनजान में कुछ दोष से बाहर हुये।
तड़फते हैं मिलने को करते नहीं हम याद भी ॥३॥
दीनबन्धू पतित पावन प्रभू धनिकों के हुये।
करते रहें उद्धार की अर्जी सदा सब दीन भी ॥४॥
रूढ़ियों के दास अत्याचार युवकों पर करें।
क्रान्ति के नारे लगाते युवक इसके बाद भी ॥ ॥

बधाई गायन।

९४—बधाई

तेरे बाजन को दिन आज मधुरला बाजे मधुर सुहावनो ॥ टेक॥
अरे हां रे मधुरला सत्य धरम परचार भयो—
आडम्बर को त्याग ॥ मधुरला ॥१॥

अरे हां रे मधुरला समझो परब धरम दशधा-
नाहिं रह्यो त्यौहार ॥ मधुरला० ॥ २ ॥
अरे हां रे मधुरला बिना सजावट राखे ही-
जिन मन्दिर सुखकार ॥ मधुरला० ॥ ३ ॥
अरे हां रे मधुरला वस्त्र आभूषण समुचित ही-
पहनें सब नर नार ॥ मधुरला ॥ ४ ॥
अरे हां रे मधुरला नाहिं किये शृंगार बनें-
पूजक संयम धार ॥ मधुरला० ॥ ५ ॥
अरे हां रे मधुरला जैन धरम की महिमा-
गावें सब नर नार ॥ मधुरला० ॥ ६ ॥

६५-बधाई

बजत बधाइयां हो घर घर मंगलचार ।
आये नर नारियां हो सत्य धरम के द्वार ॥ टेक ॥
आज हुआ संगठन हमारा । वाह २ जी वाह २ ।
मिल बैठे सब भाई चारा ॥ वाह०
मिला हृदय से हृदय हमारा ॥ वाह०
भाव भेष भाषा इकसारा ॥ वाह०
बजत बधाइयां हो घर० ॥ १ ॥
सत्य धरम परचार करें हम । वाह०
आडम्बर को दूर करें हम ॥ वाह०
हटें न पीछे पग भर भी हम ॥ वाह०

संकट से ना कभी डरें हम ॥ वाह०
बजत बधाइयां हो घर० ॥ २ ॥
जैन धरम जग में फैलावें ॥ वाह०
सबको शुभ सन्देश सुनावें ॥ वाह०
सेवा से सुख शान्ति बढ़ावें ॥ वाह०
सब मिल आनन्द मंगल गावें ॥ वाह०
बजत बधाइयां हो घर० ॥ ३ ॥

६६—बधाई

मेरे बाबा पारसनाथ बाबा हमहूँ तुम ढिंग आवत हैं ॥टेक॥
अरे हां रे रे बाबा खेल खिलौना संसारी,
रीझे या ही मांहिं ॥ बाबा ॥ १ ॥
अरे हां रे रे बाबा मगन रहे हम याही में,
छोड़ा तुम संसार ॥ बाबा ॥ २ ॥
अरे हां रे रे बाबा ऊँचे जाय विराजे हो,
हम हीं रहे मझदार ॥ बाबा ॥ ३ ॥
अरे हां रे रे बाबा हम तुममें कछु भेद नहीं,
भूल गये हम राह ॥बाबा० ॥ ४ ॥
अरे हां रे रे बाबा तुम बाबा हम बालक हैं,
ढूंढ लई अब राह ॥ बाबा ॥ ५ ॥
अरे हां रे रे बाबा तुमरो ही अब पन्थ गहो,
पहुचेंगे तुम पास ॥ बाबा ॥ ६ ॥

प्रभात फेरी गायन ।

६७–गजल ।

उठ जाग मुसाफिर भोर भई अब रैन कहां जो सोवत है ।
जो जागत है सो पावत है जो सोवत है सो खोवत है ॥१॥
टुक नींदसे अंखियां खोल जरा औ अपने रबसे ध्यान लगा ।
यह प्रीति करन की रीति नहीं रब जागत है तू सोवत है।२।
जो कल करना है अज करले जो अज करना है अब करले ।
जब चिड़ियोंने चुग खेत लिया फिर पछताये क्या होवतहै ।४।

६८–गजल ।

हम तो सोते हुओं को जगा जांयगे ॥टेक॥
रूढ़ियों का अंधेरा अभी हो रहा ।
धरम सत्य परकाश कर जायंगे ॥१॥
मंदिरों की सजावट गिरावट हुई ।
ज्ञान मय वीतरागी बना जायंगे ॥२॥
पण्डितों साधुओं ने है बहका दिया ।
उन्हें खींच कर राह पर लायंगे ॥३॥
मेलों ठेलों से होती न परभावना ।
वीर प्राणी का घर २ सुना जायंगे ॥४॥
फूट आपस से बर्बाद खुद हो रहे ।
एकता राग सब को सुना जायंगे ॥५॥

कुरीतों ने बर्बाद हमको किया।
सुरीतों का परचार कर जायंगे ॥६॥
भाई जो दूर हम से हमारे हुये।
उन्हें अब गले से लगा जायंगे ॥७॥
नौ जवानों की मायूसी कम हिम्मती।
ना उमेदी को जड़ से मिटा जायंगे ॥८॥
आह बेवाओं से जलता कौमी वतन।
सुधारों का पानी छिड़क जायंगे ॥९॥
दूसरों के भरोसे गुलामी हुई।
खड़े अपने पैरों पै हो जायंगे ॥१०॥

६६–गजल।

खोल कर आंख देखो सुबह होगया ॥टेक॥
भगा मिथ्या तम मार्ग दिखला गया।
धरम सत्य परकाश अब होगया ॥१॥
जवानों ने मिलकर यही तय किया।
सुधारों का अब तो समय होगया ॥२॥
भूले भटके हमारे ही भाई हैं जो।
बुलाने का उनको फिकर होगया ॥३॥
उठो जागकर कस कमर हो खड़े।
धावा रूढ़ी किले पर अभी हो गया ॥४॥

१००–गजल ।

धरम जैन परचार कर जायेंगे ।
नींद आलस से चैतन्य कर जायेंगे ॥टेक॥
भूलकर आपको छटपटाते हैं जो ।
जैन वाणी का अमृत पिला जायेंगे ॥१॥
राग द्वेषों की अग्नी से जो जल रहे ।
उनको समभाव जल घट में भर जायेंगे ॥२॥
जीना मरना तो दुनियां में हो ही रहा ।
कौमी खिदमत भी थोड़ी सी कर जायेंगे ॥३॥
धरम देश जाती की सेवा न की ।
तो यूं ही एक दिन हम भी मर जायेंगे ॥४॥
धरम जाति की सेवा करते हैं जो ।
अमर नाम अपना वो कर जायेंगे ॥५॥
शान्ति सन्देश सबको सुनाते हैं जो ।
खुद भी संसार सागर से तर जायेंगे ॥६॥
लोभ यश स्वार्थ से हम न ललचायेंगे ।
किसी दुनियां के भय से न डर जायगे ॥७॥

१०१ मुबारक बादी (गजल कव्वाली)

ये उत्सव तुमको करवाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ।
धर्म बीरों का बुलवाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥१॥

हुई जिन धर्म की महिमा, बजा उपदेश का डंका ।
फिसलकर पांव जमजाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥२॥
किया अज्ञान का खण्डन, हुआ जिन धर्म का मण्डन ।
जैन का झण्डा लहराना मुबारिक हो मुबारिक हो ॥३॥
हुये गुमराह हैं भाई, कुमति के फन्दे में पड़ कर ।
उन्हें जिन धर्म पर लाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥४॥
सभायें सब जगह होवें, धरम परचार निशदिन हो ।
करें फिर जलसे सालाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥५॥
कमाई अपनी को भाई, लगावें अच्छे कामों में ।
उन्हीं का जैनी कहलाना, मुबारिक हो मुबारिक हा ॥६॥
कमर कस २ के डट जाओ, दिखादो काम को करके ।
धरम ज्योती का फैलाना, मुबारिक हो मुबारिक हो ॥७॥

(इति श्री)